मिश्री का पहाड़

(बालउपन्यास)

ओमप्रकाश कश्यप

मिश्री का पहाड़

(बालउपन्यास)

ओमप्रकाश कश्यप

BPSN PUBLICATION
G-571, ABHIDHA, GOVINDPURAM
GHAZIABAD, UP-201013

सर्वाधिकार : लेखक

मूल्य : 175 रुपये

प्रथम संस्करण : 2009

प्रकाशक : **BPSN Publication**
जी–571, गोविंदपुरम्,
गाजियाबाद–201013

आवरण संयोजन : लेखक

कंप्यूटरीकृत : लेखक

Mishri Ka Pahad (Novel) : by Omprakash Kashyap

Price : Rs. - 175.00

भूमिका

सुखद संयोगों के साथ...

इस उपन्यास का प्रकाशन एक सुखद ऐतिहासिक संयोग है. उसके बारे में आप शीघ्र जान जाएंगे. शुरुआत अरस्तु से जिसने मनुष्य को पारिभाषित करते हुए उसको विवेकशील प्राणी की संज्ञा दी. उसकी दी गई परिभाषा आज तक सर्वमान्य है. अरस्तु ने यह भी कहा था कि बालक का मस्तिष्क कोरी सलेट के समान होता है, जिसपर कोई भी इबारत उकेरी जा सकती है. उसकी बात को आगे बढ़ाते हुए सतरहवीं शताब्दी के महान चेक शिक्षाशास्त्री जॉन अमोस कॉमिनियस(1592-1670) ने कहा था

'यह ठीक है कि बच्चे का मस्तिष्क कोरी सलेट होता है, जिसपर हम मनचाही इबारत लिख सकते हैं. लेकिन एक अर्थ में यह उससे भी बढ़कर है. सलेट की सीमा होती है. हम उसपर उसके आकार से अधिक कोई इबारत लिख ही नहीं सकते. जबकि मानव-मस्तिष्क अनंत क्षमतावान होता है. उसपर जितना चाहे लिखा जा सकता है, क्योंकि वह निस्सीम है,(डाइडेक्टिका मेग्ना, 1628-32).'

कॉमिनयस का कहना था कि बच्चे स्वभावतः अच्छे होते हों, इतने कि उन्हें सद्गुणों की खान कहा जा सकता है. किंतु उनके व्यक्तित्व को निखारने के लिए शिक्षा अनिवार्य है. कॉमिनियस ने ये विचार उस समय और समाज में व्यक्त किए थे, जहां एक सर्वमान्य मान्यता थी कि पाप मनुष्य के साथ

उसके जन्म से जुड़ा है. अतः उसको पाप के गर्त से उबारने के लिए शिक्षा (धार्मिक) अनिवार्य है. इस मान्यता के चलते तत्कालीन समाज में शिक्षा के नाम पर बलप्रयोग सामान्य बात थी. 'डाइडेक्टिा मेग्ना' जिसका अभिप्राय हैसंपूर्ण शिक्षण-कला, में कॉमिनियस ने शिक्षा-पद्धति को लेकर मौलिक विचार प्रस्तुत किए गए थे. उसका कहना था कि न केवल अमीर और ताकतवर वर्ग के बच्चों, बल्कि गांवों, कस्बों, शहरों में रहने वाले अभिजात्य और सामान्य, गरीब और अमीर, झोपड़ियों और अट्टालिकाओं में रहने वाले सभी लड़के-लड़कियों को शिक्षा के लिए अनिवार्यतः स्कूल जाना चाहिए. ये विचार तत्कालीन यूरोपीय समाज में क्रांतिकारी थे. 'डाइडेक्टिा मेग्ना' को चतुर्दिक सराहना मिली और प्रायः सभी यूरोपीय भाषाओं में उसका अनुवाद किया गया. यह पुस्तक वर्षों तक कई यूरोपीय भाषाओं में बेस्टसेलर बनी रही. लेकिन कॉमिनियस की प्रसिद्धि केवल इसी पुस्तक के कारण नहीं है. बच्चों के बीच शिक्षा को सरल एवं ग्राह्यः बनाने के लिए उसने सचित्र पुस्तक, ऑरबिस सेंसुलियम पिक्चस् (1658), जिसका अर्थ हैचित्रों की दुनिया, भी तैयार भी की थी. वह पुस्तक वास्तव में एक लघु ज्ञानकोश थी, जिसमें बच्चों के काम की जानकारी चित्रों के साथ प्रकाशित की गई थी. 'ऑरबिस सेंसुलियम पिक्चस्' को विश्व की पहली सचित्र पुस्तक होने का गौरव प्राप्त है. लोकशिक्षा के प्रसार हेतु अमूल्य योगदान तथा उसके क्षेत्र में अपने मौलिक एवं क्रांतिकारी प्रयोगों के लिए कॉमिनियस को 'आधुनिक शिक्षाशास्त्र का पितामह' कहा जाता है. चेक और स्लॉविया गणराज्य अपने इस महान सपूत के जन्मदिवस 28 मार्च को 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाते हैं.

लोकशिक्षा के क्षेत्र में महान योगदान देने वाले कॉमिनियस का निजी जीवन बहुत ही कष्टमय एवं संघर्षपूर्ण था. बचपन में ही अनाथ हो जाने वाले कॉमिनयस ने घोर अभावों के बीच अपनी शिक्षा पूरी की. तत्पश्चात वह अध्यापन कार्य में जुट गया. अपने सुधारवादी नजरिये के कारण उसको परंपरावादियों के घोर विरोध का सामना करना पड़ रहा था. सहसा भीषण युद्ध छिड़ जाने से उसको जान बचाकर भागना पड़ा. उसकी जवान पत्नी और दो छोटे बच्चे पहले ही प्लेग की बलि चढ़ चुके थे. अपने ही देश में भगोड़े की तरह यहां से वहां भागते कॉमिनियस को अपनी जान बचाने के लिए युद्ध से तहस-नहस हो चुकी झोपड़ियों, गुफाओं यहां तक कि वृक्ष के खोखले तनों में छिपकर जान बचानी पड़ी. इस बीच वह सुधारवादियों के संपर्क में आया. लेकिन खुशहाल जिंदगी उसको तब भी न मिल सकी. 42 वर्षों तक वह भीषण अभाव एवं तनाव-भरा जीवन जीता रहा. यहां तक कि उसकी दूसरी पत्नी भी, चार छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर असमय मौत के मुंह में समा गई. भागदौड़ और संघर्षपूर्ण जिंदगी के बीच कॉमिनियस ने 154 पुस्तकें लिखी थीं. मगर उसका घर जहां उसका बेशकीमती पुस्तकालय तथा पुस्तकों की मूल पांडुलिपियां सुरक्षित थीं, उपद्रवियों के गुस्से की भेंट चढ़कर राख हो गए. भारी विरोध तथा उथल-पुथल के बीच आर्थिकरूप से विपन्न, 64 वर्षीय कॉमिनियस को अंततः पोलेंड में शरण लेनी

पड़ी, जहां वह मृत्युपर्यंत मित्रों के सहारे जीवित रह सका. वह एकेश्वरवाद में भरोसा रखता था तथा समाज में नैतिक गुणों की स्थापना के प्रति पूरी तरह समर्पित था. विपरीत परिस्थितियों में रहकर भी उसने अपनी सृजनात्माकता को कभी भी मंद नहीं पड़ने दिया.

तो संयोग यह है कि इन पंक्तियों के लिखे जाने और दुनिया की पहली सचित्र पुस्तक के प्रकाशन के बीच ठीक साढ़े चार सौ वर्षों का अंतराल है. यद्यपि यह कोई सचित्र पुस्तक नहीं है. लेकिन इस उपन्यास की मूलभावना कहीं न कहीं कॉमिनियस के संदेश से मेल खाती है, इस सुखद संयोग के कारण उस महान शिक्षाशास्त्री का स्मरण इस अवसर पर अत्यावश्यक था.

जिन दिनों इस उपन्यास के लिखने की योजना बनी, उन दिनों हैरी पॉटर के चर्चे हवा में थे. जे. के. रोलिंग की इस पुस्तक-शृंखला को लेकर सबके अलग-अलग विचार थे. हैरी पॉटर के पाठक और प्रशंसक उसको दूरदर्शन के ऊपर शब्द की जीत के रूप में उल्लिखित कर रहे थे. अपने दावे के पक्ष में उनके पास हैरी पॉटर की रिकार्डतोड़ बिक्री के रिकार्ड थे. भारत समेत प्रायः सभी ऐशियाई देशों में इस उपन्यास को लेकर एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण बना रहा था. वह पहला अवसर था जब किसी पुस्तक की जबरदस्त आलोचना हो और वह बिक्री के कीर्तिमान भी बनाए. हैरी पॉटर ने भारत में बिक्री के कितने कीर्तिमान बनाए यह तो ज्ञात नहीं है, लेकिन अधिकांश समीक्षकों और लेखकों ने इस पुस्तक को आड़े हाथों लिया था. सिवाय उन बाजार-पोषित पत्रकारों-समीक्षकों के, जिन्होंने हैरी पॉटर की आलोचना को हिंदी बेल्ट के लेखकों की कुंठा माना और उनकी रचनाशीलता पर सवाल खड़े किए.

उस समय एक पल के लिए विचार आया था कि हैरी पॉटर की तरह ही भारतीय परिवेश में फंतासी का सहारा लेकर एक उपन्यास की रचना की जाए. कथानायक हैरी की भांति चामत्कारिक और अतिंद्रीय शक्तियों का स्वामी हो. उपन्यास के कुछ आरंभिक अध्याय यह सोचकर लिखे भी. लेकिन बहुत जल्दी लगने लगा कि हैरी पॉटर, हैरी पॉटर के देश में ही ठीक है. वे खा-पीकर इतने अघाए हुए लोग हैं कि आगे उन्हें लुढ़कना ही लुढ़कना है. भारतीय परंपरा मुक्ताकाश में बहुत अधिक उड़ने की इजाजत भी नहीं देती. यहां तो देवताओं को भी धरती पर उतरकर कभी माखन चुराना पड़ता है; तो कभी मर्यादा पुरुषोत्तम की भूमिका में आना पड़ता है. हिंदी उपन्यास के लिए अपने देश की मिट्टी की गंध से रचा-बसा नायक ही ठीक रहेगा. इसलिए सारे प्रलोभन छोड़, हैरी पॉटर की चामत्कारिता को किनारे रखकर टोपीलाल को कथानायक की जिम्मेदारी सौंप दी गई. टोपीलाल ने भी अपनी जिम्मेदारी को बाखूबी निभाया. कुछ ही दिनों में वह कथानायक होने के साथ-साथ कथाप्रेरक भी बन गया. लिखना जिनका स्वभाव या मजबूरी है वे जानते

हैं कि और जब कोई कथापात्र प्रेरक बनकर कहानी का सूत्र अपने हाथों में थाम ले तो लेखक की भूमिका कलम थामकर अपने पात्रों के पीछे घिसटते जाने की हो जाती है. वही इस पुस्तक में भी हुआ.

अब यह उपन्यास आपके हाथों में तो उचित होगा कि आभार-ज्ञापन के बहाने उन सभी को याद कर लिया जाए जिनके माध्यम से ये लेखकीय आयोजन सफल हो पाते हैं. इनमें डॉ. प्रकाश मनु, देवेश, सुरंजन, सुभाष चंदर जैसे मित्र-हितैषी तो हैं ही, मेरी पत्नी और परिवार के चारों सदस्य भी सम्मिलित हैं. इनमें सबसे अधिक योगदान मेरी धर्मपत्नी विमलेश कश्यप का है जो घर में खुद को इसलिए अत्यधिक व्यस्त रखती हैं, ताकि मुझे कंप्यूटरघसीटी के लिए अधिक से अधिक समय मिल सके. मैं इन सबका आभारी हूं. चलते-चलते एक संयोग की चर्चा और. आज जब मैं इस भूमिका को समापन की ओर ले जा रहा हूं, मेरे बेटे प्रदीप का जन्मदिवस भी है. मुझे यह दोहराने में कतई संकोच नहीं है कि बच्चों के लिए कहानियां लिखना मैंने तब आरंभ किया था, जब वह छोटा था, उसको सुनाने के लोभ में मैं कहानियां पर कहानियां रचता जाता था. मेरी अधिकांश कहानियां जो पाठकों द्वारा पसंद की गईं, प्रदीप के कानों से गुजरने के बहुत बाद शब्दों के कलेवर में ढल सकीं. अब तो वह युवावस्था में कदम रख चुका है और प्रबंधन के क्षेत्र में उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहा है. उसकी जिज्ञासा अब केवल बच्चों की कहानियों से तृप्त नहीं होती. पर मैं बच्चों के लिए अब भी लिखता हूं. इसलिए कि बच्चों के लिए लिखते सहज मैं स्वयं को जितना मुक्त एवं आनंदमय अनुभव करता हूं, बड़ों के लिए लिखते समय मुक्तता का वह एहसास और आनंद मेरी पहुंच से दूर, बहुत दूर चला जाता है. शायद इसलिए कि बच्चों के लिए लिखना, लेखक का बचपन की ओर लौटना भी है!

त्वदीयं वस्तु गोविंदम् तुभ्यमेवः समप्यते!

ओमप्रकाश कश्यप
Email : opkaashyap@gmail.com

अक्टूबर, 15, 2008
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश.

मिश्री का पहाड़

आज से ठीक चौदह साल पहले टोपीलाल का जन्म हुआ. माता-पिता थे बेहद गरीब. अनपढ़, ईमानदार और भले. मेहनती और सूझबूझ वाले, मेहनत-मजदूरी करके पेट भरते. भला सोचते, भला ही करते. रोजगार की तलाश में गांव से शहर तक आए थे. शहर की सीमा पर एक होटल बन रहा था. हाथ का हुनर काम आया. दोनों को वहीं काम मिल गया. अपने श्रम-कौशल से उन्हें मान मिला; और सम्मान भी. दिन बीतने लगे. एक दिन वे काम पर जुटे थे. होटल के कंगूरे की चिनाई का काम चल रहा था. तभी औरत के पेट में दर्द उठने लगा. पति ने सहारा दिया. वह उसको इमारत के एकांत स्थल पर ले गया. थोड़ी देर बाद ही बच्चे की किलकारी हवा से लोरी गाने का आग्रह करने लगी. बेटे को ठीक-ठाक जन्म देने के बाद मां ने उसके पिता से पूछा 'नाम क्या रखोगे?'

उस समय पति के हाथ में एक टोपी थी. उससे वह माथे पर आए पसीना सुखाने के लिए हवा झल रहे थे. पत्नी के एकाएक सवाल करने पर वे जवाब न दे सके. भीतर से छलकती खुशी को होंठों से दबाते हुए प्रश्न-भरी निगाहों से टोपी हिलाने लगे.

'समझ गई,दूसरों से हटकर है, अच्छा है.'

'क्या?'

'टोपीलाल,है ना?'

'हैं!' पुरुष चौंक पड़ा, बोला'तुम्हें पसंद है?'

'तुम्हारा दिया हुआ नाम भला नापसंद क्यों हो.' अबोध शिशु को प्यार से निहारते हुए मां मुस्करा दी.

इस प्रकार बातों-बातों में बच्चे का नामकरण संस्कार भी संपन्न हो गया. उसके जन्म के समय एक और खास बात हुई. वह थी उसके मां को बहुत कम प्रसव पीड़ा. घर से बाहर प्रसव का सकुशल निपट जाना किसी चमत्कार जैसा ही था. यही नहीं प्रसव का काम निपटाकर उसकी मां ने पिता को वापस काम पर भेज दिया था. उसके बाद तो वे पूरा काम समेटकर ही घर लौटे थे. इस बात की चर्चा टोले के लोग महीनों तक करते रहे.

टोपीलाल के पिता राजमिस्त्री थे. पति-पत्नी दोनों साथ-साथ काम करने जाते. टोपीलाल के पिता नहीं चाहते थे कि उसकी मां काम करे. वह भी मजदूरी. इससे बाकी मजदूरों के आगे उनकी हेठी होगी, ऐसा उनको लगता था. इसलिए जब पहली बार उसकी मां ने काम पर साथ चलने को कहा तो उन्होंने साफ मना कर दिया था.

'इसमें शर्म कैसी?'

'मेरी घरवाली होकर मजदूरों के साथ काम करो, मुझे अच्छा नहीं लगेगा.'

'और जो पति-पत्नी दोनों तुम्हारे लिए मजदूरी करते हैं, उनपर क्या गुजरती होगी, कभी सोचा है? मुझसे पूरे दिन घर में बिना काम के नहीं बैठा जाता. तुम यदि अपने साथ काम पर नहीं रखना चाहते तो मैं दूसरी जगह काम की तलाश करूं.'

'यह क्या बात हुई?'

उस दिन टोपीलाल की मां की ही चली. वह काम पर जाने लगी. उसके पिता नहीं चाहते थे कि वह ज्यादा मेहनत करे. मिस्त्री होने के कारण वह चाहते थे कि कोई हल्का-फुल्का काम दे दिया जाए. लेकिन टोपीलाल की मां बिना मान-गुमान के सबके बराबर मेहनत करती. मजदूर औरतों के साथ प्यार से बोलती-बतियाती. जरूरत हो तो उनकी मदद भी करती.

बेटे के जन्म के बाद टोपीलाल के पिता ने सोचा था कि चलो इसी बहाने वह कुछ दिन आराम कर लेगी. इसलिए बोले

'इस हालत में तुम्हारा कड़ी मेहनत करना क्या ठीक होगा?'

'क्यों जब मैं पहले जैसी स्वस्थ हूं तो पहले जैसा काम क्यों नहीं कर सकती?'

'फिर भी लोग तो यही कहेंगे कि मैं बहुत कठोर हूं. बच्चे के जन्म के तीसरे ही दिन तुम्हें काम पर जोत दिया.'

'मैं उन्हें बता दूंगी कि मैं अपनी मर्जी से काम करने आई हूं.'

'ऐसी जिद किसलिए?फिर हमारे सामने कोई मजबूरी भी नहीं है. घर का खर्च तो मेरी कमाई से चल ही जाता है.'

'इसलिए कि मैं मानती हूं कि जो कर सकता है उसको काम करना ही चाहिए. बिना मेहनत के खाने का किसी को अधिकार नहीं है.'

'मुझे नहीं लगता कि इस हालत में तुम ईंट और गारे से भरी परात सिर पर उठा सकती हो?'

'हां, यह तो मैं भी सोचती हूं; और तुम कहोगे तो उठाऊंगी भी नहीं.'

'फिर वहां जाकर क्या करोगी?' टोपीलाल के पिता अचरज में थे.

'मिस्त्रीगिरी! तुम्हारे साथ इतने दिनों तक काम करते हुए मैं भी काफी कुछ सीख चुकी हूं. फिर एक बच्चे की मां हूं,अब तो मुझे भी तरक्की पाने का अधिकार है,क्यों?'

उसके बाद वही हुआ जो टोपीलाल की मां ने ठाना हुआ था. दो दिन के टोपीलाल को जमीन पर सुलाकर वह कन्नी और वसूली लेकर पति के सामने बैठ गई. मजदूरिनें उसकी हिम्मत देख दंग रह गईं. बाकी मिस्त्रियों ने मुंह चिढ़ाया. कहा कि कुछ देर की त्रियाहठ है, किंतु उसको सधे हाथों से ईंट पर ईंट चिनते हुए देख सबकी बोलती बंद हो गई.

टोपीलाल के जन्म के तीसरे ही दिन देश की शायद सबसे पहली महिला राजमिस्त्री का जन्म हुआ.

एक औरत और राजमिस्त्री, लोगों ने इसे भी चमत्कार ही माना.

*

सचमुच, चमत्कार ही तो था.

बीच की एक और घटना दिमाग चाट रही है.

होटल का काम पूरा हुआ तो टोपीलाल छठा वर्ष का पार कर चुका था. उसी के कमरों में लोट लगाते, सीढ़ियों पर धमा-चौकड़ी करते हुए वह बड़ा हो रहा था. हुनरमंद हाथों के परस से होटल की इमारत चमचमा रही थी. बाकी की कसर बिजली के लट्टुओं ने पूरी कर दी थी, जो जगह-जगह रंग-बिरंगी आभा बिखेर रहे थे. जगमगा रहे थे यहां-वहां. आखिरी दिन कारीगरों और मजदूरों का हिसाब करने के लिए मालिक ने सबको जमा किया था. होटल पूरे शहर में निराला था. ठीक उसके मालिक की कल्पना के अनुरूप. सुरुचि एवं संपन्नता का बेमिसाल नमूना. मालिक उनके काम से प्रसन्न था. मजदूरी के अलावा सबको कुछ न कुछ भेंट में देने का इंतजाम भी उसने अपनी ओर से किया था. ताकि यादगार बनी रहे.

टोपीलाल का जन्म उसी होटल में हुआ था. वह दुनिया का शायद पहला होटल था, जिसमें पति-पत्नी दोनों ने राजमिस्त्री की कमान संभाली थी. यह बात भी मालिक की जानकारी में थी. टोपीलाल के लिए उसने खासतौर पर कपड़े बनवाए थे. मालिक उसे अपने लिए शुभ मान रहा था.

शाम का समय. मैदान में डेढ़-दो सौ की भीड़. पंडाल, कुर्सी और मेज को अस्थायी कार्यालय के रूप में सजाया गया था. मजदूरों के बच्चे एक ओर खेल रहे थे. कुछ होटल को हसरत-भरी निगाहों से देख रहे थे. उनकी अपनी ही मेहनत का कमाल, खून-पसीने से खड़ी हुई आलीशान इमारत. हुनरमंद हाथों की कारीगरी की बेमिसाल पेशकश. उसको देखकर कोई भी स्वयं पर गुमान कर सकता था. वक्त खुशी का था और शायद दुःख का, एक-दूसरे से बिछोह का भी था.

यूं तो टोले के अधिकांश मजदूर-मिस्त्री आपस में परिचित थे. परंतु जीवन-संघर्ष में हर बार कुछ न कुछ पीछे छूट जाते. उनकी भरपाई करने नए लोग शामिल हो जाते. वक्त उन सबसे विदा लेने का था, जिनके साथ सुख-दुख-भरे इतने साल बिताए थे. पसीने की अदला-बदली की थी. दुख में आंसू बहाए,सुख में हिस्सेदारी की थी. वर्षों से वे साथ-साथ काम करते आए थे. आगे काम की तलाश उनमें से न जाने किस-किस को, कहां-कहां ले जाए. इसके बाद फिर कभी मिलने का अवसर मिले भी या नहीं. ऐसी चिंताएं लोगों को सता रही थीं.

ऐसे वक्त पर कुछ लोगों की आंखें भरी हुई थीं. तो कुछ उतनी देर के लिए दार्शनिक बन चुके थे. जिंदगी में मिलना और बिछुड़ना तो सत्य सनातन है, यह कहकर वे मन को झूठी तसल्ली देने की कोशिश कर रहे थे. कुछ यह सोचकर खिन्न थे कि जिस इमारत को उन्होंने अपने खून-पसीने और हाथों के हुनर से प्राणवंत बनाया, आज के बाद कोई उसमें शायद ही भीतर आने दे या कोई उनको पहचाने भी. उनके जीवन की यही त्रासदी थी. वे ईंट-गारे को जीवन देकर उसे इमारत में ढालते. कन्नी और गुनिया लेकर उसका अंग-अंग तराशते.कोरी मिट्टी में प्राण-प्रतिष्ठा करते. लेकिन काम पूरा होते ही उसमें रहने का अधिकार खो बैठते थे.

ऐसे लोग होटल की ओर टकटकी लगाकर देख रहे थे. यह सोचकर कि आगे कभी लौटे तो दरवाजे पर बड़े-बड़े दरबान खड़े दिखाई देंगे. उन जैसों को वे शायद ही भीतर आने दें. इसलिए विदाई बेला में वे अपने हाथों के कमाल को भीगी पलकों से, आखिरी बार जी भरकर देख लेना चाहते थे. सहेज लेना चाहते थे उसके रूपाकार, उससे निर्माण से जुड़ी स्मृतियों को.

मजदूरी बांटने का काम प्रारंभ हो चुका था. मालिक एक-एक को आवाज देकर बुला रहा था.

'टोपीलाल!' मुनीम की ओर से आवाज लगी. इसी के साथ तालियों की आवाज गूंज उठी. टोपीलाल के पिता उसे लेकर आगे बढ़ें, उससे पहले ही टोपीलाल स्वयं आगे बढ़ गया. एक पांच-छह साल के बच्चे को भरे विश्वास के साथ आगे बढ़ते देख लोग दंग रह गए. तालियों का वेग दुगुना हो गया.

'नाम क्या है?' नन्हे टोपीलाल से मालिक ने पूछा.

'ट्...ट्...टोपीलाल!' नन्ही, हकलाती-सी जुबान से जवाब मिला.

'क्या टोंटीलाल?' मालिक बचपन में लौट गया. सबकी हंसी छूट गई.

'नईं, टोपीलाल...टोपीलाल!' टोपीलाल ने दोहराया.

'तो टोपी कहां छोड़ आए?' मालिक ने मजाक किया. एक बार फिर मैदान हंसी से उछलने लगा.

'मेरी जेब में रखी है.' टोपीलाल ने बिना सकुचाए जवाब दिया. कभी उसकी मां ने उसके लिए एक टोपी सिली थी. जिसको वह अक्सर अपनी जेब में रखता था. उसने जेब से टोपी निकालकर तत्काल पहन भी ली. टोपीलाल की हाजिरजवाबी पर एक बार फिर जोरदार तालियां बजीं. मालिक भी खुशी से नहा उठा. उसने अपने हाथों से टोपीलाल को कपड़े भेंट किए, जिनमें एक रेशम की टोपी भी थी. मालिक टोपीलाल को अपने हाथों से टोपी पहना ही रहा था किअचानक वह परेशान हो उठा.

टोपीलाल वापस जाने लगा. तभी मालिक की ओर से आवाज आई

'ठहरो, वापस आओ बेटे!' टोपीलाल रुक गया.

'जरा अपने कपड़ों की जेब तो देखो. मेरी घड़ी शायद उसमें गिर गई है.' मालिक ने कहा.

मालिक की घड़ीकी गुमशुदगी की खबर मिलते ही एकाएक हड़कंप मच गया. कर्मचारियों में अफरातफरी मच गई. एक ने मालिक को खुश करने के लिए दौड़कर टोपीलाल को पकड़ लिया. आनन-फानन में उसकी तलाशी ली गई. लेकिन घड़ी वहां नहीं थी. सभी परेशान. मालिक अपनी महंगी घड़ी को लेकर चिंतित था. उससे भी अधिक परेशान थे उसके कर्मचारी. हालांकि वे परेशानी का दिखावा ही अधिक कर रहे थे.

'मैंने देखा, अभी कुछ देर पहले तक तो घड़ी साहब के हाथ में थी,बड़ी जल्दी छिपा दी!' एक कर्मचारी ने टोपीलाल को डांटा.

टोपीलाल चुपचाप खड़ा था. उसके माता-पिता को काटो तो खून नहीं. दोनों स्वयं को अपमानित महसूस कर रहे थे. विदाई की बेला में यह कैसा अपशगुन. काम पूरा होने की जो खुशी थी, वह गायब हो चुकी थी. कर्मचारियों ने टोपीलाल को पकड़ रखा था.

'मालिक इसके पास घड़ी भला कहां से आई? आपके दिए कपड़ों के सिवाय इसके पास कुछ और नहीं है.' टोपीलाल के पिता ने गिड़गिड़ाकर कहा. उसकी मां भी आगे आकर फरियाद करने लगी

'मेरा टोपीलाल चोर नहीं है मालिक.'

'यह बहुत शैतान है, कुछ भी कर सकता है.' कर्मचारियों के बीच से आवाज आई. सबने देखा वह बिशंभर था. टोपीलाल के माता-पिता से ईर्ष्या करने वाला. किसी को उसकी बात पर भरोसा न हुआ, लेकिन दूसरे कर्मचारियों को टोपीलाल को तंग करने का बहाना मिल गया.

मालिक परेशान था. उसका मूड खराब हो चुका था. घड़ी महंगी थी. पर मालिक की हैसियत के आगे कुछ भी नहीं. वह अपने लिए कभी भी दूसरी घड़ी खरीद सकता था. लेकिन सबके सामने से घड़ी का अनायास गायब हो जाना उसको परेशान कर रहा था. चोर का पता लगना भी जरूरी था. आखिर उसने सारे कर्मचारियों को एक ओर खड़ा हो जाने का आदेश दिया. फिर टोपीलाल को अपने पास बुलाया, प्यार से पूछा

'बता दो बेटे, मुझे अच्छी तरह से याद है, तुम्हें बुलाने से पहले घड़ी मेरी कलाई पर बंधी थी.'

'मुझे नहीं मालूम.' मालिक के पूछने पर टोपीलाल ने जवाब दिया. चोरी के इल्जाम से वह घबरा गया था.

'मालिक यह झूठ बोलकर चोरी का इल्जाम दूसरों पर डालना चाहता है.' एक कर्मचारी टोपीलाल पर गुर्राया.

'तुम कैसे कह सकते हो?' बिना झिझके टोपीलाल ने कहा.

'इसलिए कि घड़ी सबके सामने, अभी-अभी गायब हुई है. उस समय केवल तुम मालिक के पास थे.'

'मालिक के पास तो उनके नौकर और कर्मचारी भी हैं. उनसे भी तो पता करना चाहिए. चोर हमारे टोले का नहीं है.'

'फिर भी घड़ी की चोरी तो हुई है.'

'तो यह तो मालिक और उसके कर्मचारी जानें.' टोपीलाल ने निडर होकर कहा.

'कर्मचारी तो सभी पीछे हैं, फिर उनमें इतनी हिम्मत कहां कि मालिक की घड़ी की चोरी कर सकें.'

टोपीलाल के दिमाग में बार-बार कुछ खटक रहा था. कि जैसे कुछ याद करना चाहता हो. किंतु विचार दिमाग में टिकने से पहले ही हवा हो जाता था.

मालिक के आदेश पर टोपीलाल को एक ओर बिठा दिया गया. मजदूरी बांटने का काम रुक चुका था. बाकी मजदूर भी पेशोपेश में थे. कुछ इस बात को लेकर परेशान थे कि मालिक का मूड खराब होने के बाद अब ठीक-ठाक ईनाम नहीं मिल पाएगा. लेकिन एकाध के मन में छिपे संदेह की बात जाने दें तो, उनमें से कोई भी टोपीलाल को चोर मानने को तैयार नहीं था.

सहसा टोपीलाल उठकर खड़ा हो गया. सभी उसकी ओर देखने लगे. उसने कहा

'अगर मैं चोर पकड़वा दूं तो आप मेरी मां और बापू को जाने देंगे?'

'हम तुम्हें ईनाम भी देंगे.' मलिक ने खुश होकर कहा. उस समय टोपीलाल का दिमाग बहुत तेजी से सोच रहा था. उसको लगा कि घड़ी अगर मालिक की कलाई से गायब हुई तो वह अवश्य ही खुलकर गिरनी चाहिए. पर गिरकर जाएगी कहां! नीचे! फर्श पर! लेकिन फर्श पर गिरती तो नजर में आ जाती! फिर कहां गई? यकायक उसकी आंखें चमक उठीं.

'मालिक घड़ी आपके उस नौकर के पास है, जिसकी आंखों के नीचे गहरा काला दाग है.' टोपीलाल ने रहस्य से पर्दा हटाया. इसपर सभी चौंक पड़े.

'चंदगी...! अभी तक तो वह यहीं था, अचानक कहां चला गया?' टोपीलाल की बताई पहचान पर मालिक के पीछे खड़े एक कर्मचारी के मुंह से निकला. सहसा सबकी आंखें चमक उठीं. चंदगी की खोज की जाने लगी.

'मालिक पुलिस बुलाकर इसे पकड़वा दीजिए. यह आपका कीमती समय बरबाद कर रहा है.' इस बीच पीछे से दूसरे कर्मचारी की आवाज आई.

'चुप रहोइतने सारे लोगों के सामने हमारी घड़ी गायब हुई है. उसका इल्जाम इस बच्चे पर लगाने पर पुलिस क्या हमारी बात मानेगी. उल्टे हमारी ही हंसी होगी. तुम चंदगी को फौरन बुलाओ.' मालिक ने डांटा. इस पर कर्मचारी पीछे खड़े आपस में खुसर-पुसर करने लगे.

कुछ देर के बाद चंदगी को खोज लिया गया. वह टोकरी को साफ करने के लिए उठाकर ले गया था. वह एक बार पहले भी चोरी के आरोप में पकड़ा जा चुका था. उस समय तो मालिक ने उसपर दया करते हुए छोड़ दिया था. टोपीलाल ने जैसे ही उससे घड़ी लौटाने को कहा, उसका चेहरा पीला पड़ गया. मालिक समेत सभी का ध्यान उसकी ओर चला गया. मालिक ने घूरकर उसकी ओर देखा तो वह घबरा गया और उसके पैरों पर गिर पड़ा. गिड़गिड़ाकर माफी मांगने लगा.

चोरी का भेद खुल चुका था. सभी टोपीलाल की बुद्धि पर हैरान थे. घड़ी चंदगी तक कैसे पहुंची, और टोपीलाल को उसके बारे में कैसे पता चला, यह एक रहस्य था.

'वह तो बहुत पीछे खड़ा हुआ था, मेरे पास आया तक नहीं.' मालिक हैरान था.

'आया था मालिक,टोकरी उठाने के लिए.'

मालिक को याद आया. चाय के खाली कप, रद्दी कागज वगैरह डालने के लिए एक डस्टबिन का इंतजाम किया गया था. उसी को उठाने के लिए चंदगी आगे आया था.

'तुम्हें कैसे पता चला कि घड़ी डस्टबिन में गिरी है, और चंदगी के पास है?' मालिक ने पूछा.

'मेरे पापा चोर नहीं हैं, मैं भी चोर नहीं हूं.' टोपीलाल ने भोलेपन से कहा. घड़ी मिल जाने से टोपीलाल के पिता की हिम्मत वापस लौट आई थी. वे आगे आकर बोले

'मालिक मेहनतकश लोग ईमानदार से जीते, अपने पसीने की कमाई खाते हैं. उनमें इतनी हिम्मत कहां कि आपकी महंगी घड़ी रख सकें. इतनी महंगी घड़ी को हमारे पास देखकर कोई भी चोरी का इल्जाम लगा लेगा. इसलिए यह काम आप ही के आदमियों का हो सकता है, इसका हमें विश्वास था. सबके सामने घड़ी की चोरी तो संभव न थी. इसीलिए संभावना यही थी कि वह अपने आप खुलकर गिर गई हो. यही सोचते हुए इसे आपके नौकर द्वारा डस्टबिन उठाने की घटना याद आ गई. तब इसको यह अनुमान लगाते देर

न लगी कि जो कर्मचारी उसे लेकर गया है, घड़ी उसके पास हो सकती है, क्यों बेटा?'

टोपीलाल ने 'हां' के पक्ष में अपनी गर्दन हिला दी.

'शाबास!' मालिक के मुंह से अनायास निकला. छह साल की आयु में टोपीलाल को मिली यह पहली कामयाबी थी. इस घटना के बाद उसके चाहने वाले उसको जासूस टोपीलाल के नाम से पुकारने लगे. लोगों ने मान लिया कि बड़े सोच के लिए उम्र में बड़ा होना जरूरी नहीं है. असाधारण व्यक्तित्व साधारण वेश में भी सामने आ सकता है.

*

आज जब हम यह कहानी आपको सुनाने जा रहे हैं तो टोपीलाल चौदह वर्ष का हो चुका है. इतने वर्ष भी एकाएक नहीं बीते. हालांकि टोपीलाल का प्रयास रहा कि हंसते-खेलते समय यूं ही उड़ जाए. उड़ता ही रहे,जैसे नीले आसमान में पतंग और होली के रंग. उड़े जैसे पंछी. कुलांचे भरे, जैसे जंगल में हिरन, उछले-खेले जैसे पानी में गोते खाती नीलमछरिया. तैरे ज्यों नदिया में रंग-बिरंगी नाव, झील में बत्तखें.

हर रात वह ऐसे ही रंग-बिरंगे सपने देखता. नए-नए अरमान सजाता. लेकिन जब भी वह अपने हमउम्र बच्चों कोउनके हाथों में तख्ती, बगल में बस्ता लटकाए देखता तो उसका मन बुझ-सा जाता. उसे लगता कि कुछ उसके हाथों से फिसलता जा रहा है, जो उसको फिर जिंदगी में कभी भी नहीं मिलने वाला. इतना सोचते ही उसका मन बुझ-सा जाता. आशा निराशा में ढल जाती.

एक बार उसके पिता को स्कूल के लिए नए कमरे बनाने का काम मिला. दिन में स्कूल के एक हिस्से में चिनाई का काम चलता. दूसरे में बच्चे पढ़ाई करते. उस समय टोपीलाल को न तो पतंग उड़ाने में मजा आता, न लुका-छिपी का खेल खेलने में. ऊपर से स्कूल में पढ़ रहे बच्चे जब उसको हेठी नजर से देखते तो उसपर घड़ों पानी पड़ जाता. मन की सारी उमंग धराशायी हो जाती.

यूं तो अपने टोले के सभी बच्चों में टोपीलाल सबसे तेज और बुद्धिमान माना जाता. लोग, उसकी तारीफ करते. जो काम दूसरे बच्चे नहीं कर पाते थे, उसके लिए टोपीलाल को ही याद करते. टोपीलाल उनके विश्वास की रक्षा भी करता. अपने काम से वह हरेक का दिल जीत लेता. किंतु जब वह छोटे-छोटे बच्चों को पढ़ते हुए देखता तो उसकी सारी खुशी हवा हो जाती. मन बुझ-सा जाता. उस समय उसका न दूसरों की मदद करने को मन करता, न खेल-कूद में ही आनंद आता.

पिता निश्चिंत थे. उन्होंने जैसे पहले ही तय कर रखा था

'मेरा टोपीलाल बड़ा होकर हम सब राजमिस्त्रियों से आगे जाएगा. उसके हाथों को छूते ही कन्नी-वसूली नाचने लगेंगी. ईंटों में छुअन-भर से जान आ जाएगी. अभी तक दुनिया में सात अजूबे हैं. कोई आश्चर्य नहीं अगर आठवां अजूबा मेरे बेटे के बड़े होने का इंतजार

कर रहा हो.'

दूसरे मजदूरों की तरह टोपीलाल के पिता के सपने भी छोटे थे. पेट भरने और जिंदगी की मामूली सुविधाओं तक सिमटे हुए. उनके लिए टोपीलाल के पिता को पढ़ाई जरूरी नहीं लगती थी

'किताबों में आंख वे फोड़ें जिन्हें दफ्तरों में जी-हुजूरी करनी हो. मेरा बेटा...' पिता के मुंह से अपनी तारीफ सुनकर टोपीलाल का मन मग्न हो जाता. पल-भर के लिए सपनों की ऊंची और कलंगीदार तस्वीर उसके सामने होती. लेकिन स्कूल में जब बच्चों की कक्षाएं लग रही होतीं, और माता-पिता काम पर होते तब उसको सबकुछ सूना और बेकार लगने लगता. मन होता कि उड़कर बाकी बच्चों के बीच पाठशाला में जा बैठे, शब्दों के साथ बतियाए, अक्षरों के साथ कानाबाती करे.

और इस तरह टोपीलाल का अनमनापन बढ़ता ही जा रहा था. पतंग उड़ाना, लुका-छिपी का खेल खेलना सब पीछे रह गया. उसका कल्पनाशील मन जो कभी पंछी-सा निर्बंध आसमान में तैरता, निर्मल-पावन नदी-सा हहर-हहर हहराता, हिरन छौनों जैसा कुलांचे भरता था, वह उदासी से घिरने लगा. और तो और दूसरों के बताए काम में भी वह गलती करने लगा.

टोपीलाल बिगड़ता जा रहा है, अक्सर यह लोग कहने लगे. मां से कोई बात छिप पाती है, एक दिन उसकी मां ने पूछ ही लिया. जवाब में टोपीलाल बोला

'मां सब कहते हैं कि मैं बहुत तेज हूं. लेकिन.'

'आखिर बात क्या है, बेटा?'

'क्या तेज-तर्रार होना ही सबकुछ होता है? उस दिन मैंने सुना, मास्टरजी पढ़ा रहे थे कि हम जो जानते हैं उसको दूसरों तक पहुंचाना भी हमारा धर्म है. वे बता रहे थे कि ज्ञान बांटने से और भी बढ़ता है. परंतु जब किसी को ज्ञान समेटना ही न आए तब?'

मां बहुत दिनों से टोपीलाल के हरकतों पर नजर रखे हुए थी. उसकी बेचैनी की राई-रत्ती खबर रखती थी. बेटे के दिल की बात समझते मां को देर न लगी

'मैंने तेरे बापू से कहा था तुझे स्कूल भेजने को.'

'सच! फिर बापू ने क्या जवाब दिया था?' टोपीलाल की बांछे खिल गईं.

'उन्होंने जो कहा वह गलत कहां है. हमारा कोई एक ठिकाना तो है नहीं!'

'तो क्या हुआ मां, जबतक हम यहां हैं तब तक तो...'

'ठीक है,मैं कल मास्टर जी से बात करके देखूंगी.'

टोपीलाल उछल पड़ा. वह हमेशा ही अपनी मां की सूझ-बूझ का कायल रहा था. कामयाबी की पूरी-पूरी उम्मीद थी. उस रात उसने सपना देखा कि वह भी ड्रेस पहनकर स्कूल जा रहा है. पुस्तकों से बतिया रहा है. दूसरे बच्चों की तरह उसका नाम भी पाठशाला के रजिस्टर पर चढ़ चुका है

'टोपीलाल, पाठ याद करके लाए?'

'जी हां!'

'तो सुनाओ?' कक्षा अध्यापक का स्वर उसके कानों में पड़ता है, और वह बिना एक भी पल गंवाए पूरा पाठ सुना देता है. अध्यापक चकित हैं. पूरी कक्षा दांतों तले उंगली दबाए है.

'देखा.' अध्यापक महोदय बाकी कक्षा को संबोधित करते हैं, 'तुम सब कितने आलसी और कामचोर हो. टोपीलाल से सीखो...एक ही दिन में सारा पाठ याद कर दिया. धन्य हैं इसके माता-पिता.' टोपीलाल ऐसे सपने पूरे दिन देखता रहा. अगले दिन उन सब पर पानी फिर गया.

'आधे से ज्यादा सत्र निकल चुका है,मास्टरजी ने कहा है कि इस समय दाखिला नहीं हो सकता.' मां ने ऐसा बताया, मानो कहते हुए मनों बोझ से दबी जा रही हो.

'मां तुम उनसे कहतीं कि मेरा बेटा होशियार है, वह बाकी बचे समय में ही पूरी तैयारी कर सकता है?'

'उनका कहना था कि जिस कक्षा में तुम दाखिला लेना चाहते हो, उसके सभी बच्चे तुमसे नौ-दस साल छोटे हैं. वे तुम्हारा मजाक उड़ाएंगे.'

'कोई बात नहीं, मैं किसी का भी बुरा नहीं मानूंगा. अगर कोई मुझे टोकेगा तो मैं उससे कहूंगा कि देखो मैं इस उम्र में भी शुरुआत कर सकता हूं. सीखने की कोई उम्र थोड़े ही होती है.'

'मैंने उनसे सब कहा था. वह एक-एक बात जो हमारे पक्ष में जाती हो. लेकिन उन्होंने मेरी एक न सुनी.' मां का कलेजा फटा जा रहा था. टोपीलाल की निराशा सिर उठाने लगी. आंखों के आगे अंधेरा छा गया.

बात आई-गई हो गई. लेकिन टोपीलाल उदास रहने लगा. उसका खेलना छूट गया. वह जगह भी उसकी आंखों में गढ़ने लगी. वह रोज सोचता कि स्कूल का काम जल्दी से जल्दी पूरा हो ताकि वह यहां से कहीं दूर जा सके.

*

नए कमरों की चिनाई का काम तेजी से चल रहा था. प्रिंसीपल साहब चाहते थे कि काम समय रहते पूरा कर लिया जाए. ताकि अगले साल से आगे की कक्षाओं की पढ़ाई शुरू की जा सके. स्कूल में बच्चे बढ़ेंगे, इसके लिए अतिरिक्त पानी की भी जरूरत होगी. नगर निगम की सप्लाई कुछ घंटों तक सीमित थी. बाकी समय हैंडपंप से काम चलाया जाता था, परंतु उसका पानी खारापन लिए हुए था.

प्रिंसीपल साहब नलकूप लगवाना चाहते थे. लेकिन समस्या थी कि उसको लगवाया कहां जाए. इससे पहले भी एक-दो जगह बोरिंग करा चुके थे. लेकिन कहीं का चोहा बहुत

नीचे मिलता, तो कहीं पर निसोत खारापन लिए हुए. हैंडपंप का खारा पानी होने के कारण बच्चे अब भी परेशान थे. संख्या बढ़ते ही समस्या विकराल हो जाने वाली थी. प्रिंसीपल साहब चाहते थे कि ट्यूबवैल ऐसी जगह लगवाया जाए जहां पानी का स्रोत भी अच्छा हो; और उसमें भरपूर मिठास भी हो. किंतु धरती के गर्भ में ऐसे ठिकाने का पता लगाना एक भारी समस्या थी.

'साहब पुराने जमाने में ऐसे लोग थे, जिनके तलवे धरती की धड़कनों को पढ़ लिया करते थे. जो चलते-चलते जहां भी ठहर जाते, वहीं मीठी जलधार बहा देते. ऐसे परोपकारी लोगों ने ही कुएं-बाबड़ी बनवाए. उनका मीठा पानी आज भी जन्म-जन्मांतर की बुझाने का सामर्थ्य रखता है.'

'ऐसे लोग अब कहां से लाऊं? प्रिंसीपल साहब बोले, 'बजट पहले ही बढ़ चुका है. एक बोरिंग खराब हुआ तो दूसरा बोरिंग कराने की अनुमति शायद ही मिल पाए.' परेशानी उनकी पेशानी पर लिखी थी. कोई अनपढ़ भी उसको बांच सकता था. अध्यापक, मजदूर और कारीगर सभी गर्दन झुकाए खड़े थे. संकट सबके सामने था, लेकिन उससे उबरने का मार्ग किसी को नहीं सूझ रहा था.

'सर! आपके हिसाब से बोरिंग करना कहां ठीक रहेगा?' प्रिंसीपल साहब के ठीक पीछे से आवाज आई. उन्होंने पलटकर देखा. एक लड़का पीछे खड़ा उनसे सवाल कर रहा था. उसके चेहरे पर आत्मविश्वास था. आवाज में वह बल जो जीवन से गहरे जुड़ाव के बाद ही आ पाता है. उन्होंने पहचानने का प्रयास किया, लेकिन नाकामयाब रहे. बस इतना तय कर पाए कि वह उनके स्कूल के बच्चों में से नहीं है.

'क्यों?' एक अनजान बालक को जवाब देने में उन्हें अपनी हेठी महसूस हुई.

'बस यूं ही कि अगर सभी जगह पर मीठा पानी हो तो बोरिंग करना कहां पर ठीक रहेगा?'

'इसमें सोचना...ट्यूबवेल कोई बीच मैदान में तो लगवाएगा नहीं, उसे किसी कोने में ही होना चाहिए.' प्रिंसीपल साहब ने बताया.

'कौन-सा कोना?' अगले सवाल पर प्रिंसीपल साहब तिलमिलाए. परंतु इतने लोगों के बीच जब वे स्वयं कुछ न सोच पा रहे हों, तो समस्या के निदान के लिए एक बालक पर गुस्सा दिखाने का साहस न कर सके. उन्होंने एक ओर संकेत कर दिया.

'अगर वहां भी खारा पानी निकले तो?'

गुस्से को दबाते हुए प्रिंसीपल साहब ने दूसरे कोने की ओर संकेत कर दिया.

'इसके अलावा?'

प्रिंसीपल साहब झुंझला पड़े. फिर भी उन्होंने अगले ठिकाने की ओर इशारा कर दिया. विद्यालय में सबके सामने, उनसे इतने सारे सवाल-जवाब करने वाला टोपीलाल था. उस समय उसके माता-पिता सहित सभी मजदूर-कारीगर डरे हुए थे.

बरसात का मौसम गुजरे पखवाड़ा ही बीता था. जमीन में अब भी नमी थी. आम की गुठलियां जहां-जहां फेंकी गई थीं. वहां-वहां आम के नन्हे पौधे नजर आ रहे थे. स्कूल के बच्चे उन्हें उखाड़कर उनसे पपीहा बनाकर खेलते. टोपीलाल को भी पपीहा बजाने में आनंद आता था. उस समय टोपीलाल के हाथों में एक थैला था. थैले में भरी हुई थी गीली मिट्टी.

कुछ देर तक मैदान में इधर-उधर घूमता हुआ वह उन पौधों को देखता रहा. फिर उनमें से एक जैसे कई पौधे चुने. उन्हें सावधानीपूर्वक उखाड़कर थैले में रखी गीली मिट्टी में दबा लिया. ताकि पौधे मुरझाएं नहीं. उन पौधों को उसने बराबर हिस्सों में बांटा और उन स्थानों पर रोप दिया, जहां प्रिंसीपल साहब नलकूप लगवाना चाहते थे.

लोग तो अपने काम में लगे रहते. टोपीलाल रोज जाकर अपने पौधों को देख आता. चार-पांच दिनों में ही परिवर्तन साफ नजर आने लगा. एक जगह के पौधे पूरी तरह सूख चुके थे. दूसरे कोने में वे बचे रहने के लिए संघर्ष कर रहे थे. जबकि एक कोने में लगे पौधे खिले-खिले थे, मानो वहीं पर उगे हों. यह देखकर टोपीलाल के चेहरे पर चमक आ गई. अपनी खुशी को दबाए रखना उसके लिए कठिन हो गया. उसने उसी समय प्रिंसीपल के कमरे की ओर दौड़ लगा दी और उनके दरवाजे पर बैठे चपरासी की परवाह न करते हुए वह सीधा उनके कार्यालय में घुस गया.

'मैंने पता लगा लियासाहब!' प्रिंसीपल साहब कुछ समझ पाएं, उससे पहले ही वह बोल उठा. उस समय उसकी सांस धौंकनी की तरह चल रही थी. एक गंवार-से दिखने वाले लड़के को देखकर प्रिंसीपल साहब को गुस्सा आया.

'मैंने पता लगा लिया.' टोपीलाल ने अपने शब्दों को दोहराया. जैसे इससे अधिक कुछ कहना उसको आता ही न हो. तब तक प्रिंसीपल साहब उसको पहचान चुके थे.

'आराम से बताओ,क्या कहना चाहते हो.'

'आप उत्तर दिशा में ट्यूबवैल लगवाइए,वहां पर मीठा पानी ही मिलेगा.'

'यह तुम कैसे कह सकते हो?'

'मैं आपको दिखाता हूं,आइए साहब.' कहने के साथ ही वह पलट गया. जैसे बहुत जल्दी में हो. प्रिंसीपल साहब और उनके कार्यालय में मौजूद बाकी सभी लोग उसके पीछे हो लिए.

'मां ने एक बार एक कहानी सुनाई थी. मैंने सोचा कि क्यों न उसी को आजमाया जाए. और अंतर एकदम साफ नजर आ रहा है. आप अपनी आंखों से देखते ही मान जाएंगे.' आगे-आगे चलता हुआ टोपीलाल कह रहा था.

अंततः टोपीलाल द्वारा बताए गए स्थान पर ही बोरिंग कराया गया. फिर जैसा उसने कहा था, वही हुआ. पानी इतना मीठा था, जैसे अमृत. ऊपर से इतना शीतल कि जन्म-जन्मांतर की प्यास बुझा सके. सभी प्रसन्न थे. प्रिंसीपल साहब की खुशी का तो

ठिकाना ही नहीं था.

आखिर वह दिन भी आया, जब स्कूल की नई बिल्डिंग तथा नलकूप का उद्घाटन था. उस दिन बाहर से आए अधिकारियों तथा बड़े-बड़े लोगों की उपस्थिति में प्रिंसीपल साहब ने कहा था

'पीढ़ियों से कही-सुनी जाने वाली हमारी कहावतें और लोककथाएं यूं ही नहीं हैं. इनमें हमारे बुजुर्गों का वर्षों का अनुभव और ज्ञान छिपा हुआ है. ये हमारे पारंपरिक ज्ञान का अद्भुत भंडार हैं. किंतु बड़े दुःख की बात है कि नए को समेटने की आपाधापी में हम पुराने को भूलते जा रहे हैं. मैं इस लड़के का बहुत अहसानमंद हूं. इसने मुझे, बल्कि हम सब को हमारी गलतियों का एहसास कराया है.

मैं यहां उपस्थित अपने अधिकारियों से प्रार्थना करता हूं कि नियमों में ढील देकर भी इसे स्कूल में दाखिल करने की अनुमति प्रदान करें.इस शर्त के साथ कि आगे जो भी कहानी या कहावत यह सुने, उसपर खुलकर प्रयोग करे. उसका पूरा खर्च यह स्कूल उठाएगा.'

उनका भाषण समाप्त होते ही कार्यक्रम-स्थल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंजने लगा. टोपीलाल तथा उसके माता-पिता की खुशी का तो ठिकाना ही नहीं था. उनके साथ काम करने वाले बाकी मजदूर भी स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे.

इस तरह टोपीलाल को स्कूल में दाखिला मिल गया.

कहानी हो या पाठ, जो पढ़ने-सुनने के बाद उसको भली-भांति गुनते हैं, उनके लिए रास्ता बनाने मंजिलें खुद आगे आ जाती हैं.

*

यह तो अब की कहानी हुई. इससे बाद का हिस्सा भी कम मनोरंजक नहीं है. सुनने के साथ गुनना कितना जरूरी है, यह टोपीलाल ने तभी जाना था.

तो चलो उसी पर आते हैं

टोपीलाल जब कुछ बड़ा हुआ तो टोली के बच्चों के साथ खेलने लगा. उस समय बाकी बच्चों के माता-पिता की अपेक्षा होती थी कि वह अपने से छोटे बच्चों का खयाल रखे. सड़क पर वाहनों का जमघट रहता है. बच्चों को उधर जाने से रोके. जितना वह खुद पढ़ चुका है, उतना दूसरों को पढ़ाए, जो वह स्वयं जानता है, उसके बारे में बाकी बच्चों को भी बताए.

इससे हालांकि टोपीलाल के अपने मनोरंजन में खलल पड़ता था. लेकिन जब टोली के बड़े लोग कह रहे हों; और उन्हें उसके माता-पिता का भी समर्थन प्राप्त हो तो वह ज्यादा कुछ कर ही नहीं सकता था. वह खुद को तो इतना समझदार मानता था कि शहर के किसी भी कोने में घूमकर वापस आ सके. किंतु बाकी बच्चों के साथ रहने से वह बंध-सा गया

था. इससे उसके लुका-छिपी के खेल में भी खलल पड़ा था. उस खेल में छोटे-बड़े सभी बच्चे हिस्सा लेते. धमाचौकड़ी के बीच, क्या पता असावधानी में कोई बच्चा सड़क के उस पार चला जाए तो. कोई दुर्घटना हो गई तो, सब उसी को दोष देंगे. किसी को बुराई का मौका टोपीलाल बिलकुल नहीं देना चाहता था. बच्चों के मामले में तो हरगिज नहीं.

टोपीलाल ने मनोरंजन का नया तरीका निकाला. उसने एक ही स्थान पर बैठकर खेले जाने वाले खेल खेलना शुरू कर दिया.

उन दिनों उनका समूह एक बहुमंजिला इमारत को पूरा में लगा था.उन्हीं दिनों टोपीलाल को सड़क पर एक गत्ता मिला. जिसपर एक ओर कुछ छपा हुआ था. शायद किसी बच्चे का गिर पड़ा हो. टोपीलाल ने वह उठा लिया. गत्ते के एक ओर अलग-अलग रंग के चौकोर खाने बने थे. कुछ आड़े-तिरछे चित्र, रंग-बिरंगी धारियां.

टोपीलाल कई बार बच्चों को ऐसे ही गत्ते के चारों कोनों पर बैठे देख चुका था. गौर से उसको देखते, गर्दन झुकाए गोटियों की चाल चलते हुए. इतना तो वह समझता ही था कि यह कोई खेल है. वह गत्ते पर टकटकी गढ़ाए देर तक खेल को समझने का प्रयास करता रहा. घंटों तक, परंतु कुछ भी पल्ले न पड़ा.

'बिना मदद के इसको समझना मुश्किल है.' टोपीलाल ने माना. लेकिन मदद किससे ली जाए? जिन बच्चों के साथ वह खेलता था, वे सभी उससे छोटे थे. उनमें से कई तो टोपीलाल को अपना मार्गदर्शक मानते. बात-बात पर उसके पास मदद के लिए आते. संभव है कि बच्चों में से कोई इस खेल के बारे में जानता हो. लेकिन अपने से छोटे बच्चों से पूछकर वह अपनी हेठी नहीं करना चाहता था.

टोपीलाल को पहले ही इस बात का क्षोभ था कि जो बच्चे स्कूल जाते हैं, उन्हें उससे अधिक ज्ञान है. कुछ दिन के लिए स्कूल जाकर उसने देख भी लिया था. जिन प्रश्नों का उत्तर देने में वह अटक जाता, उन्हें उससे छोटे बच्चे आसानी से हल कर देते थे. वह दूसरे बच्चों के बराबर आने का भरसक प्रयास करता. रात-दिन पढ़ता, परिश्रम करता. परंतु घर में कभी पुस्तकों का टोटा पड़ जाता तो कभी कॉपियों का. दिन में बच्चों की देखभाल करनी पड़ती, रात में बिल्डिंग में घुप्प अंधेरा छा जाता. दिये की रोशनी में मच्छर इतना परेशान करते कि पढ़ना हो ही नहीं पाता था. पढ़ाई में पिछड़ा तो पाठशाला से उसका मन भी ऊबने लगा

'मुझे उनके बराबर आने में समय लगेगा.' उसने स्वयं को समझाने की कोशिश की.

उस दिन के बाद वह डटकर मेहनत करने लगा. तभी स्कूल का निर्माण कार्य पूरा हो जाने के कारण उसके माता-पिता समेत पूरा समूह वहां से रवाना होने की तैयारी करने लगा. भरे मन से टोपीलाल को भी स्कूल से अलविदा कहना पड़ा. उसके बाद उनका समूह जहां गया, वहां से पाठशाला काफी दूर थी.

टोपीलाल को अपने माता-पिता से भी शिकायत थी. चाहता था उसके माता-पिता

अपने समूह से अलग हो, एक स्थान पर टिककर कार्य करें. उसके भविष्य के बारे में सोचें. तभी उसको आगे पढ़ने का अवसर मिल सकता है. मां उसकी बात को समझ सकती है, यही सोचकर उसने अपना सुझाव मां के साथ रखा

'मां, बापू तो बाकी सब मिस्त्रियों से अच्छे कारीगर हैं!'

'हां, हमारे समूह के कई मिस्त्री उनके सिखाए हुए हैं. वे उन्हें अपना गुरु मानते हैं.'

'तुम भी कुछ कम नहीं हो, मां?' टोपीलाल ने अपनी बात मनवाने के उद्देश्य से प्रशंसा की.

'मुझे भी तो तेरे पिता ने ही सिखाया है!' कहते हुए उसकी मां मुस्करा दी, मानो उसका मंतव्य समझ चुकी हो.

'मां! तुम और बापू शहर में कहीं भी रहकर काम कर सकते हो. दोनों को आसानी से काम मिल जाएगा. संभव है इससे हमारी आमदनी भी बढ़ जाए. फिर हम अपना मकान भी बना सकते हैं.' वह कुछ और न समझ बैठे, इसलिए टोपीलाल ने अपना मंतव्य साफ कर देना ही उचित समझा

'मां, हम लोग यदि एक ही स्थान पर रहें तो मैं आसानी से पढ़-लिख सकूंगा.'

'तू पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बने, यह तो मैं भी चाहती हूं. लेकिन अलग रहने की बात, इसके लिए तेरे बापू शायद ही तैयार होंगे.'

'पर वे तो सदा ही मेरा भला चाहते हैं, क्यों?'

'सो तो है.वे कहते हैं कि हमारा एक निजी परिवार है, छोटा-सा, जिसमें सिर्फ हम तीनों शामिल हैं. इसके बाहर हमारा बड़ा परिवार भी है. उसमें हमारा पूरा समूह आता है, जिसमें पचास-साठ परिवार हैं. सबके सुख-दुःख से हमारा वास्ता है. नफा-नुकसान सबके साझे हैं.'

'परंतु मां, वे हमारे सगे थोड़े ही हैं!' टोपीलाल ने तर्क करने का प्रयास किया. हालांकि वह जानता था कि उसकी मां साधारण स्त्रियों में से नहीं है, उसके पास हर तर्क की काट हो सकती है. और हुआ भी यही...

'केवल सगा होना ही अपनत्व की कसौटी नहीं होती. एक देश, एक शहर, एक गांव, एक बस्ती और एक जैसा व्यवसाय करने वालों में भी अपनापा होता है. इस समूह के साथ हम वर्षों से रहते आए हैं. सब एक-दूसरे की अच्छाई और बुराइयों से भली-भांति परिचित हैं. सब एक-जैसा खाते-पहनते हैं. संकट में सब एक-दूसरे की मदद करते हैं. इसके अलावा एक बात और है, बेटा.' कहते हुए मां कुछ पल को रुकी, फिर जैसे निर्णय पर आती हुई बोली

'किसी भी अकेले इंसान की तरक्की का उस समय तक कोई मोल नहीं है, जब तक कि उसके अपने लोग, संगी-साथी, भाई-बंधु पिछड़े हुए हों. पड़ोसी भूखा हो तो अपना

पेट भरा होने में कोई बड़प्पन नहीं है. आदमी को सबके भले में ही अपना भला देखना चाहिए.'

'लेकिन समूह में तो बिशंभर जैसे लोग भी हैं मां, जो बापू से जलते हैं.' टोपीलाल ने फिर तर्क किया.

'ऐसा नहीं बेटा! कहावत है कि घर में चार बर्तन एक कोने में पड़े हों, तो कभी न कभी जरूर खड़क उठते हैं. तुम्हारे बिशंभर काका ऊपर से चाहे जैसे दिखते हों, दिल उनका बिलकुल साफ हैं. याद है पिछली बार जब तेरे पिता बीमार पड़े थे?'

उस घटना के बारे में टोपीलाल को ज्यादा याद दिलाने की जरूरत नहीं पड़ती. वह उसके दिमाग में सर्वाधिक डरावनी स्मृति के रूप में दर्ज है. उसके पिता को तेज बुखार चढ़ा था. गर्मी के दिन थे. बुखार का इलाज चल ही रहा था कि हैजा ऊपर से सवार हो गया. मां उस समय काम पर, घर से बाहर थी. टोपीलाल घर पर अकेला. पिता की बिगड़ती हालत देखकर वह पड़ोस में मदद के लिए पहुंचा. उस समय बिशंवर काका ने भागदौड़ कर परिवार की जैसी मदद की थी, उसे वह कैसे भूल सकता है! भुला पाना संभव ही नहीं है.

बीती घटना को याद करने के साथ ही टोपीलाल के चेहरे पर उदासी झलक आई. उसकी मां ने फौरन ताड़ लिया. टोपीलाल को सीने से लगाकर, पीठ पर प्यार से हाथ फिराने लगी 'घबरा मत! समूह में तुम्हारे जैसे और भी कई बच्चे हैं. मैं तुम्हारे पिता से बात करूंगी कि काम की तलाश में बस्ती से दूर न जाया करें. उसके बाद तुम सब अच्छी तरह पढ़ सकोगे.'

मां के तर्कों ने तो टोपीलाल को उलझा दिया था. किंतु निष्कर्ष उम्मीद जगाने वाला था. इसलिए उसकी उदासी छंटने लगी. उसी दिन से वह इस प्रतीक्षा में था, जब उसका समूह लंबे समय के लिए किसी ऐसे स्थान पर ठिकाना करेगा, जहां वह अपनी पढ़ाई दुबारा आरंभ कर सके. वह मां से अत्यधिक प्रभावित भी था.

'मां के पास हर समस्या का हल, हर तर्क का जवाब है.' गत्ते को हाथ में थामे टोपीलाल सोच रहा था.

*

और वह गलत भी नहीं था.

मां की उन दिनों अच्छे राजमिस्त्री के रूप में पहचान थी. किसी इमारत में महीन नक्काशी द्वारा जान डालनी हो तो टोपीलाल की मां को ही याद किया जाता. और वह सचमुच कोरी मिट्टी में प्राण पूर देती थी. ईंटें उसके स्पर्श से बोलने लगतीं, दीवारें छुअन-भर से गर्वीली हो तन जातीं, कंगूरों में जान आ जाती, खूबसूरत सपना साकार होने

लगता था.

'तुम्हारी टक्कर का राजमिस्त्री पूरे शहर में भी शायद ही कोई हो.' टोपीलाल के पिता मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा करते.

'सबकुछ आप ही का तो सिखाया हुआ है.'

'गुरु तो गुड़ ही रहा, पर तू शक्कर बन गई.' खुशी से उनका जी उमगाने लगता. टोपीलाल का मन भी बाग-बाग हो जाता. जहां कहीं मां का जिक्र होता, वह सांस थामे सुनने लगता. मां की तारीफ सुनना उसको खूब भाता. वह सदैव ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में रहता.

जिस समय टोपीलाल अपनी मां के पास पहुंचा, वह सोने की तैयारी में थी. वैसे भी रात हो चुकी थी. दिन-भर की कड़ी मेहनत के बाद वह बहुत ही थक जाती थी. पर टोपीलाल को चैन कहां! टिमटिमाते दिये की झीनी रोशनी में उसने गत्ता मां के सामने रख दिया

'इसे तो मैंने वर्षों से नहीं छुआ. जाकर अपने पिता से पूछ.'

'मुझे तो तुम्हीं से सीखना है.' टोपीलाल ने जिद की.

'ठीक है, चल गोटियां बिछा ले.'

टोपीलाल को बताया गया था कि यह खेल गोटियों से खेला जाता है. गोटियां न होने से वह निराश भी था. उसको गत्ता फेंकने वाले से शिकायत भी थी कि यदि उसने इस खेल से ऊबकर गत्ता फेंका है, तो गोटियों को भी साथ ही फेंक देना चाहिए था. ताकि किसी के काम आ सकें. किंतु यह शिकायत ज्यादा देर न टिक सकी.

'यह जरूर किसी बच्चे के थैले से फिसला होगा.' टोपीलाल ने सोचा था, 'तब तो वह बालक बहुत परेशान होगा.'

टोपीलाल को बहुत दुःख पहुंचा था. जैसे उसने अपनी ही कोई कीमती चीज गुमा दी हो. पर नया खेल सीखने की ललक में वह दुःख ज्यादा देर न टिक सका था.

'मां, बिना गोटियों के क्या तुम इस खेल को नहीं सिखा सकतीं?'

'सिखा भी सकती हूं.' मां ने उत्तर दिया था, 'लोग तो इसको सांप-सीढ़ी का खेल कहते हैं. परंतु असल में यह है तो जीवन और प्रकृति का खेल ही. जिन्हें इस खेल में हम गोटियां कहते हैं, जिंदगी के खेल में ये कुछ भी हो सकती हैं. यहां तक कि मैं और तुम भी. यहां से आगे समझने के लिए पासे ही जरूरत होगी. उसका काम भी ईंट के मामूली टुकड़े से चलाया जा सकता है.'

मां की बातों में गहरा रहस्य छिपा था. लेकिन खेल के उत्साह में डूबे टोपीलाल को ध्यान रहा केवल ईंट के टुकड़े से पासा बनाना. वह उसी समय ईंट का प्रबंध कर लेना चाहता था, लेकिन मां ने टोक दिया

'कुछ भी सीखने के लिए धैर्य जरूरी है. कल मैं काम पर नहीं जा रही हूं, घर के

काम से निपटने के बाद...'

मां की बात मानने से पहले टोपीलाल ने कहानी की शर्त जड़ दी.

'ठीक है, एक छोटी-सी कहानी सुनाती हूं. उसे यदि गुन लोगे तो कल इस खेल का मर्म समझने में आसानी होगी.' मां ने सहमति दी. टोपीलाल के लिए खेल केवल एक खेल था. कहानी सिर्फ एक कहानी. इससे ज्यादा उनका कोई उद्देश्य हो सकता है, उसको मालूम ही नहीं था. इसलिए कहानी सुनने के लिए वह अपनी मां से सट गया.

मां ने कहानी आरंभ कर दी

एक राजा के दो बेटे थे. एक अच्छा था, दूसरा बुरा. एक दूसरों के काम आता. दूसरा सबके काम बिगाड़ देता. एक लोगों से प्यार करता, दूसरा उनको दुत्कारता. एक मीठे बोल बोलता, ममता की चलती-फिरती मूरत नजर आता, दूसरा लोगों के साथ गुस्से से पेश आता, उन्हें डराता. एक सचाई और ईमानदारी से काम निकालना चाहता, दूसरे का मकसद था, केवल खुद के भले की सोचना. मनमानी करना...लालच साधना. सच-झूठ जैसे भी संभव हो, वह सहज भाव से कहता-करता. एक सोच-विचारकर काम को पूरा करता. दूसरे को किसी भी तरह मंजिल तक पहुंचने की जल्दी रहती. उसके लिए हर तरीके को जायज मानता था. पहले को 'कर भला सो हो भला' की नीति में विश्वास था. दूसरा 'अंत भला सो सब भला' के चलन को पानी देता था.

माता-पिता हालांकि अपनी प्रत्येक संतान को एकसमान प्यार करते हैं. लेकिन उन दोनों में से एक मां का लाडला था, दूसरा अपने पिता का.

'मेरे बेटे में राजा बनने के सारे गुण हैं.' राजा जो दूसरे बेटे को चाहता था, एक दिन रानी को चिढ़ाने के लिए बोला.

'तुम्हारा बेटा सिर्फ तानाशाह बन सकता है, मेरा बेटा तो आज भी लोगों के दिलों पर राज करता है.' रानी ने सहजभाव से कहा. लेकिन राजा तो राजा था, गर्व-गुमान से फूला हुआ. सुनते ही चिढ़ गया. और चिढ़ गया सो चढ़ गया

'ठीक है, तुम्हारा बेटा करता रहे लोगों के दिलों पर राज, गद्दी का स्वामी तो मैं अपने बेटे को ही बनाऊंगा!' हठीले राजा ने अपना निर्णय सुनाया.

रानी नहीं जानती थी कि बात इतनी बढ़ जाएगी...मामूली झाड़ आसमान जा चढ़ेगा. जिसे वह चाहती थी, वह बड़ा बेटा था. नियम से राजा का असली उत्तराधिकारी. न चाहते हुए भी रानी ने अपनी भूल के लिए राजा से माफी मांगी. अपनी गलती का दंड अपने बड़े बेटे को न देने की प्रार्थना की. आखिर राजा पिघला

'आज की हमारी तकरार तो महज संयोग है. वरना छोटे बेटे को राजगद्दी पर बिठाने का फैसला तो मैं कभी का कर चुका हूं. राज ताकत से चलता है. सचाई, ईमानदारी, और भलमनसाहत जैसे शब्द ग्रंथों में ही शोभा देते हैं. असल में तो वे राजा को कमजोर बनाते हैं. उसकी महत्त्वाकांक्षाओं की राह में रोड़े हैं ये सब. लोग जिससे डरते हैं, उससे

प्यार भी करते हैं. तुलसीदास जी ने स्वयं रामचंद्रजी के मुख से कहलवाया है'भय बिनु होय न प्रीति.'

'छोटा किसी भी तरह अपनी बात मनवाना जानता है. इसलिए उसमें मुझे चक्रवर्ती सम्राट के सभी गुण नजर आते हैं. मुझे पूरा विश्वास है, कि वह पुरखों की इस विरासत को न केवल संभालकर रखेगा, बल्कि बढ़ाएगा भी.'

रानी को चुप हो जाना पड़ा. राजा ने मनमानी की. कुछ ही दिन बाद उसने छोटे बेटे को युवराज घोषित कर दिया. बड़ा बेटा निर्द्वंद्व रहा. रानी को लगा कि कहीं अन्याय हुआ है. फिर भी वह चुप रही.

परिस्थितियां यदि प्रतिकूल हों तो प्रतीक्षा करना भी नीति बन जाता है. और जब राजा अन्याय करे तो उसका फल पूरे राज्य को भोगना पड़ता है. आखिर यही हुआ भी.

राजा दिल का बुरा नहीं था. परंतु उसके दिल में दबी-छिपी उच्चाकांक्षाएं उससे गलत निर्णय करा लेती थीं. ऐसा ही उस बार हुआ था.

युवराज बनते ही छोटे बेटे की मनमानियां और अत्याचार और भी बढ़ गए. राज्य और राजा दोनों की मान-मर्यादा को ताक पर रखकर वह राजकार्य में हस्तक्षेप करने लगा. प्रारंभ में तो राजा को सबकुछ भला लगा. लगा कि युवराज होने के कारण वह राजनीति में रुचि दिखा रहा है. लेकिन बहुत जल्दी छोटे बेटे की हरकतें उसका जी दुखाने लगीं. युवराज को समझाने की राजा की सारी कोशिशें बेकार गईं.

राजधानी के पार्श्व में एक नदी बहती थी. नदी के दूसरे तट पर बसा था एक गांव. छोटा-सा, वहां के किसान मेहनती और भले थे. युवराज अक्सर उस गांव से होकर गुजरता. एक दिन वह शिकार से लौटा और सीधे राजभवन में जा धमका. राजा उस समय राजकाज में व्यस्त था.

'पिताजी, मैं एक बाग लगवाना चाहता हूं, बहुत बड़ाइतना कि किसी भी राजा के पास वैसा बाग न हो.' युवराज ने राज्य की कार्रवाही में व्यवधान डालते हुए कहा.

राजा ने गर्दन उठाई. युवराज की ओर देखकर उसने धैर्यपूर्वक कहा'हमारे राज्य में बागों की कमी नहीं है. तरह-तरह के, एक से बढ़कर एक बाग हैं. जहां वृक्ष फलों से; लताएं फूलों से लदी रहती हैं. कोयल वहां गाती, मोर नाचते हैं. हमारे तालाबों में कमल-दलों से भरपूर नीलसरोवर हैं. जिनमें रंग-बिरंगी मछलियां तैरती रहती हैं. फिर भी तुम एक और बाग लगवाना चाहते हो तो युवराज होने के नाते तुम्हें इसका भी अधिकार है. अच्छी-सी भूमि देखकर वहां बाग लगवा लो.'

'मैं चाहता हूं कि एक बहुत बड़ा बाग हो. जिसमें शिकार के लिए हिरन, शेर, चीता आदि भी हों. भूमि मैं तय कर चुका हूं, बस आपकी अनुमति की जरूरत है?'

'कैसी अनुमति?'

'जिस भूमि पर मैं बाग लगाना चाहता हूं, उसके बीच में एक गांव आता है, हमें

उसको हटाना होगा?' कहते हुए युवराज ने गांव का नाम और पता बता दिया. सुनते ही राजा चौंक पड़ा.

'उस गांव के लोग तो बहुत भले हैं. संकट के समय वहां के निवासियों ने कई बार हमारी मदद की है. हम उन्हें कैसे उजाड़ सकते हैं?' राजा ने आहत मन से बेटे को समझाने का प्रयास किया.

'कानून के हिसाब से राज्य की समस्त भूमि का स्वामी राजा होता. इसलिए राजा का अधिकार है कि वह अपनी भूमि के साथ जो जी चाहे करे. फिर हम किसी को उजाड़ कहां रहे हैं. गांव वालों को एक स्थान से हटाकर दूसरे ठिकाने पर बसा दिया जाएगा. इसका खर्च भी राज्य उठाएगा!'

'यह नहीं हो सकता. गांव वाले जिस स्थान पर बसे हैं, वह उनका अपना है. मैं तुम्हें गांव को उजाड़ने का आदेश नहीं दे सकता.' राजा ने कहा. युवराज पांव पटकता हुआ वहां से चला गया. उसके बाद राजा और युवराज में कई दिनों तक भेंट नहीं हुई. धीरे-धीरे दिन बीते गए. बात आई-गई होने लगी.

एक दिन राजा ने राज्य-भ्रमण का निर्णय किया. रानी को बताया तो उसने भी साथ चलने की इच्छा व्यक्त की.

'हमें यात्रा से लौटने में महीनों लग सकते हैं. इस बीच राज्य की देखभाल कौन करेगा?'

'क्यों, युवराज तो है!' राजा ने तत्काल कहा.

'जाने क्यों मेरा मन घबरा रहा है. महाराज, क्या ऐसा नहीं हो सकता कि आप अपने उत्तराधिकारी को लेकर फिर से सोच-विचार कर लें?' रानी गिड़गिड़ाई.

'यह तुम्हारा भ्रम है, फिर भी तुम यदि यही चाहती हो तो यात्रा से लौटने के बाद मैं इसपर अंतिम निर्णय लूंगा.' राजा ने रानी की बात मान ली. वस्तुतः वह स्वयं भी युवराज की मनमानी से तंग आ चुका था.

महीनों लंबी यात्रा के बाद राजा और रानी लौटे तो वातावरण कुछ बदला-बदला पाया. यात्रा की थकान मिटाने के लिए राजा सीधे राजभवन में चला गया. अगले दिन राजदरबार में लौटा तो वहां सैकड़ों फरियादियों को देखकर चौंक पड़ा. पता चला कि राजा की अनुपस्थिति का फायदा उठाते हुए युवराज ने खुद को सम्राट घोषित कर दिया है. राजा के रूप में सबसे पहले उसने सेनापति को गांव खाली करने का आदेश दिया. सेनापति ने सैन्यबल के साथ गांव पर धावा बोल दिया. चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गई. जिसने भी विरोध जताने का प्रयास किया, सैनिकों ने उसको जेल में डाल दिया.

'महाराज, सैकड़ों साल से हमारे पुरखे वहां रहते आए हैं. फिर भी यदि युवराज को उस गांव की जमीन इतनी ही जरूरी थी तो हमें संभलने के लिए समय दिया होता. बदले में हमें ऐसी जगह दी जाती जो उपजाऊ हो, जहां हम सब अपने-अपने परिवार के साथ

सुखपूर्वक रह सकें. परंतु जिस स्थान पर हमें बसने का आदेश दिया गया है, वहां की जमीन बंजर और ऊबड़-खाबड़ है. पानी का तो नामोनिशां नहीं है.' फरियादियों के मुखिया ने कहा. राजा गर्दन झुकाए सुनता रहा.

'हुजूर, ऐसे तो हम भूखे-प्यासे मर ही जाएंगे.'

'क्या तुमने युवराज को समझाया नहीं था?' राजा ने मंत्री की ओर देखा. उसको विश्वास था कि मंत्री पुराना है. प्रजा का हित देखेगा. लेकिन मंत्री का तो स्वर ही बदला हुआ था, 'महाराज, मैं तो इस सिंहासन का भक्त हूं. मेरा काम है, सिंहासन पर विराजमान महाराज के कामों को आसान करना. आपके पीछे युवराज इस गद्दी के स्वामी थे. उनकी खुशी गांव की जगह पर बाग लगाने में थी, तो मेरा भी फर्ज था कि यह काम जल्दी से जल्दी पूरा हो. सुंदर से सुंदर बाग लगाया जाए, जिससे महाराज के मन को शांति मिले, और उनका नाम हो.'

राजा को गुस्सा आया. उसका मन हुआ कि मंत्री को सलाखों के पीछे डाल दिया जाए. उसने सेनापति की ओर देखा. सेनापति ने गर्दन झुका ली. राजा समझ गया कि उसके पीछे युवराज ने सभी को अपने बस में कर दिया है. राजा ने युवराज को दरबार में बुलाने का आदेश दिया. युवराज आया. सत्तामद से चूर. झूमता हुआ.

'बेटा, कम से कम मेरे लौटने तक तो इंतजार किया होता?' राजा ने मर्माहत हो युवराज से कहा.

'आप ही के कारण गांव वालों का सिर सातवें आसमान पर है. मैंने उन्हें चार दिन पहले गांव छोड़ने का आदेश दिया था. पर वे नहीं माने. मैं समझ गया कि बिना बल-प्रयोग के काम नहीं सधेगा. इसलिए उस समय राजा होने के नाते मैंने वही किया जो मुझे ठीक लगा.' युवराज के स्वर में न प्रायश्चित्तबोध था, न करुणा का भाव. थी तो सिर्फ निष्ठुरता ...मनमानी करने की आदत, जिद और गुमान. और था अहंकार, जो अज्ञानी के हाथ में अनायास बड़ी ताकत आ जाने से पैदा होता है.

'तुम बहुत कठोर हो, मैंने तुम्हें युवराज बनाकर गलती की है.'

'युवराज नहीं, सम्राट कहें. अब मैं ही यहां का राजा हूं. आप बूढ़े हो चुके हैं. भलाई इसी में है कि यह सिंहासन मुझे सौंपकर आप पूजा-पाठ में अपना मन लगाएं...' राजा ने नजर उठाकर देखा. उसको लगा कि सिवाय फरियादियों के दरबार में एक भी उसके पक्ष में नहीं है. वह खुद को अशक्त एवं मजबूर महसूस करने लगा. बेबसी में आंखों से आंसू बह निकले. धीरे-धीरे वह उठा और बोझिल कदमों से राजमहल की ओर चल दिया.

छोटे राजकुमार ने गद्दी संभाल ली.

राजा को राजमहल में नजरबंद कर लिया गया.

और बड़ा राजकुमार!

राजा ने जब छोटे बेटे को युवराज बनाने की घोषणा की थी, तो बड़े राजकुमार के

दोस्तों ने उसको खूब उकसाया था. कहा था कि छोटा राजकुमार उसके अधिकार पर कब्जा कर रहा है,कि वह चाहे तो छोटे राजकुमार को रोक सकता है, उसके दोस्त उसके साथ हैं, कि दरबार में अपनी पैठ भी कम नहीं. कि उसके एक इशारे पर हजारों लोग मर-मिटने को भी तैयार हैं.'

'क्या सभी दरबारी अपने साथ हैं?' बड़े राजकुमार ने पूछा था.

'सब तो नहींसेनापति और मंत्री समेत कुछ को छोटे राजकुमार ने खरीद रखा है. पर घबराने की बात नहीं, उनसे भी निपटा जा सकता है.'

'निपटना यानी सिंहासन के लिए संघर्ष,यदि हम उसमें नाकाम रहे तो?'

'राजगद्दी के लिए संघर्ष छिड़ेगा तो बात महाराज तक जाएगी ही. वे भले ही आपके छोटे भाई को युवराज बनाने की घोषणा कर चुके हों, मगर शास्त्रों में बड़े बेटे को गद्दी देने का विधान है. जनता भी आपके साथ है. ऐसे में आप यदि संघर्ष करेंगे तो आपका हक मार पाना संभव नहीं होगा. कम से कम आधा राज्य तो मिलेगा ही.'

'राज्य का बंटवारा,उसके बाद?'

'उसके बाद आप प्रजा पर राज्य करेंगे.'

'प्रजा पर राज!'

'प्रजा अगर मुझे राजा के रूप में चाहेगी तो खुद राजा बना देगी!'

'कोई किसी को कुछ नहीं बनाता,यहां जो बनना है, वह अपने आप बनना पड़ता है, जैसे छोटे राजकुमार ने गद्दी हथिया ली.'

'मुझे इस तरह राजा नहीं बनना. प्रजा को यदि जरूरत हुई, तब जरूर सोचूंगा.'

'तब करते रहिए इंतजार. छोटे राजकुमार स्वार्थी हैं, महाराज की तरह एक दिन आपको भी कैद कर लिया जाएगा.' दोस्तों ने कहा. उनकी आवाज में व्यंग्य था. बड़ा राजकुमार मुस्करा कर रह गया. उसकी मुस्कान को दोस्तों ने कायरता माना. धीरे-धीरे वे उससे दूर हटते गए.

बड़ा राजकुमार कुछ दिन स्थिति पर विचार करता रहा. धीरे-धीरे वहां उसका मन ऊबने लगा. एक दिन मां से अनुमति लेकर वह घर से निकल गया. खुले जंगल में घूमते, पेड़, पर्वत, लता-गुल्मों, पक्षियों, जानवरों, नदी-तलैया, हवा-धूप से बतियाते हुए उसके दिन बीतने लगे.

उधर छोटे राजकुमार के सपने बहुत बड़े थे. गद्दी पर सवार होते ही उसकी महत्त्वाकांक्षाओं को पंख लग गए. उसने आसपास के छोटे राज्यों पर हमला करके उनपर अधिकार जमा लिया. छोटी-छोटी जीतों से उसकी महत्त्वाकांक्षाएं और भी भड़क उठीं. अब उसका इरादा अपने से बड़े राज्य को हड़पने का था. वहां का राजा था नीतिसेन. बुद्धिमान, बहादुर और दिलेर. प्रजा का सच्चा हमदर्द, सुख-दुःख का खयाल रखने वाला.

मंत्री और सेनापति दोनों ने समझाया. बलवंत की ताकत के बारे में बताया भी. मंत्री

ने सलाह दी कि उसपर हमला करना आत्मघाती हो सकता है. सेनापति ने चेताया कि सैनिकों में विद्रोह भरा है, उन्हें इस समय युद्ध में ढकेल देना उचित नहीं. मगर छोटा राजकुमार नीतिसेन के राज्य पर हमला करने की जिद ठाने रहा. उसके आदेश पर सैन्य तैयारियां होने लगीं. उनकी सूचना नीतिसेन तक जा पहुंची. खबर मिलते ही उसने चढ़ाई का आदेश दे दिया. छोटा राजकुमार हड़बड़ा गया. घबराहट में उसने सेनापति को याद किया

'महाराज इतनी जल्दी युद्ध छिड़ा तो हमारी पराजय निश्चित है?' सेनापति बौखलाया.

'हार तो दरवाजे पर खड़ी है, यह बताइए कि उससे निपटने की हमारी तैयारियां कैसी हैं?' छोटे राजकुमार ने सवाल किया.

'सेना थकी हुई है, अपने से बड़ी सेना के हमले की खबर से ही उसका मनोबल गिर चुका है.'

'तुम्हारा मतलब है कि मैं हार मान लूं.' छोटा राजकुमार झल्लाया.

'पराजय को सामने देख संधि कर लेना तो कूटनीति है.' मंत्री ने कहा.

'इससे तो मेरी सारी इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी...' छोटा राजकुमार परेशान हो उठा।

'नीतिसेन जैसे बहादुर योद्धा के साथ संधि होने से तो आपका मान ही बढ़ेगा.' मंत्री ने पैंतरा बदला.

'वह हमारी संधि को मानेगा?'

'हम उसके आगे अपने खजाने का द्वार खोल देंगे.' स्वार्थी मंत्री ने सलाह दी.

मंत्री और सेनापति के कहने पर छोटा राजकुमार समर्पण के लिए तैयार हो गया. बात प्रजा तक पहुंची तो लोग तिलमिला उठे. उन्हें यह अपने मान-सम्मान पर धब्बा लगा. लोग मुंह दबाकर छोटे राजकुमार की आलोचना करने लगे.

उन दिनों बड़ा राजकुमार जंगल में झोंपड़ी डालकर रह रहा था. उसकी दाढ़ी बढ़ आई थी. जंगल में रहते हुए उसको वन-वनस्पतियों की पहचान हो गई. कुछ पुरानी शिक्षा काम आई. जड़ी-बूटी देकर वह लोगों का उपचार करने लगा. इससे आसपास के लोग उसको जानने लगे थे. जरूरत के समय उसके पास सलाह के लिए भी चले आते थे. छोटे राजकुमार के समर्पण की चर्चा आरंभ हुई तो कुछ लोग फिर उसके पास सलाह करने पहुंचे.

'महाराज आप ही मदद करें, हमारे राजा तो अपना मान-सम्मान गिरवी रखने की तैयारी कर ही चुके हैं.'

'इस समय मैं क्या कर सकता हूं. नीतिसेन तो सीमा पर आ ही पहुंचा है. अब या तो युद्ध होगा; अथवा समर्पण.'

'जब राजा और सेनापति युद्ध से पहले ही हार मान चुके हों, सेना का मनोबल गिरा

हुआ हो तो युद्ध की कोई संभावना ही नहीं बचती. इस स्थिति में तो केवल समर्पण ही संभव है.'

'राजा और सेनापति ने ही तो हार मानी है, पर राज्य तो प्रजा से होता है. क्या प्रजा भी हार मान चुकी है?' बड़े राजकुमार ने पूछा. यह सुनते ही वहां मौजूद लोगों के बीच सन्नाटा व्याप गया.

'महाराज प्रजा तो प्रजा है, उसका काम लड़ना थोड़े ही है.' मौजूद लोगों में से एक ने कहा.

'ठीक कहते हो. प्रजा का काम लड़ना नहीं है. लड़ना सेना और सेनापति का काम है. लेकिन वे तो पहले ही हार मान चुके हैं, ऐसे में प्रजा क्या हाथ पर हाथ रखकर बैठी रहेगी? इंतजार करेगी कि कोई आए और उसके मान-सम्मान की रक्षा करे, उसको इस संकट से बचाए. अगर समय रहते कोई बचाने के लिए नहीं आया तो क्या गर्दन झुकाकर चंद कायरों के फैसले को मान लेगी? अपने स्वाभिमान, अपने मान-सम्मान को यूं ही मिट जाने देगी? यदि नहीं तो बताएं कि प्रजा का ऐसे में क्या कर्तव्य है?' बड़े राजकुमार ने सवाल उछाला. लोग कानाफूसी करने लगे. अचानक उनके चेहरे पर तेज व्याप गया.

'हम समझ गए महाराज.हमारी गलती यह है कि हम हमेशा दूसरों की ओर देखते आए हैं. अब हमें हमारी भूल समझ में आ गई है. बलवंत की सेना चाहे जितनी बड़ी हो. हम उसको राज्य के मान-सम्मान से समझौता नहीं करने देंगे. मर जाएंगे, पर मान नहीं जाने देंगे, लेकिन...'

'लेकिन क्या?' बड़े राजकुमार ने कहा.

'महाराज युद्ध हो या आंदोलन. उसके लिए कोई ऐसा तो चाहिए ही जो सबसे आगे रहकर नेतृत्व की बागडोर संभाल सके.'

'उसकी तुम फिक्र मत करो. इरादे यदि नेक और दिलों में सच्चा जोश हो तो जुलूस में उपस्थित हर व्यक्ति नेता होता है.'

अगले दिन नीतिसेन ने देखा कि सामने से हजारों की तादाद में भीड़ चली आ रही है.

'महाराज हमें तो बताया गया था कि वह समर्पण की तैयारी कर रहा है, यहां तो बड़े हमले की तैयारी लगती है.' साथ खड़े सेनापति ने नीतिसेन से कहा.

'लगता है कि उसकी मौत ही उसको मैदान की ओर खींचकर ला रही है. तुम सेना को तैयार रहने का हुक्म दे दो.' नीतिसेन ने आदेश सुनाया। वह स्वयं भी युद्ध की तैयारियों में जुट गया.

उस समय तक प्रजा सामने आ पहुंची थी. नीतिसेन ने देखा तो दंग रह गया. भीड़ में स्त्री-पुरुष, बूढ़े-बच्चे, बीमार-अपाहिज सब थे. कुछ के हाथ में लाठियां थीं, कुछ के हाथ में डंडे. कुछ के हाथ में दरांत, चाकू, कुछ अपाहिज ऐसे भी थे, जो बैशाखी के सहारे अपने

शरीर को संभालने का प्रयास कर रहे थे.

'यह सब क्या है? क्या तुम्हारे राजा ने तुम्हें लड़ने भेजा है?' बलवंत ने जनसमूह का नेतृत्व कर रहे युवक से पूछा से पूछा, जो स्वयं बैशाखी के सहारे घिसटता हुआ वहां तक पहुंचा था.

'हमें किसी ने नहीं भेजा. अपने राज्य की मान-मर्यादा के लिए हम स्वयं लड़ने आए हैं. हम जान देंगे पर अपनी आजादी पर आंच नहीं आने देंगे.'

'अगर ऐसा है तो अपने राजा को समझाया होता, हम तो अपने राज्य में शांतिपूर्वक रह रहे थे. वही हमारे विरुद्ध षड्यंत्र रच रहा था.'

'तो आप राजा से निपटें. किंतु इस राज्य को अपने राज्य में मिलाने का सपना छोड़ दें.'

'राज्य क्या राजा से अलग होता है?'

'राज्य का मान-सम्मान सबसे ऊपर होता है. उसके लिए राजाओं की बलि चढ़ाई जा सकती है.'

'महाराज! आप यदि आदेश दें तो हमारे सैनिक इन भिखमंगों को पलक झपकते धूल चटा दें.' नीतिसेन के सेनापति ने कहा.

'नहीं, नीतिसेन इतना मूर्ख नहीं है, जो अपनी कीर्ति को इतनी आसानी से मिट जाने दे. मेरी सेना इन निहत्थे लोगों से लड़कर इन्हें मार तो गिराएगी, मगर इतिहास इन्हें ही नायक मानेगा. ये सब अमर हो जाएंगे, जबकि मैं हमेशा ही खलनायक माना जाऊंगा. इसलिए अपने सैनिकों से कहो कि वे हथियार नीचे कर लें. हमारी सेना निहत्थों पर वार नहीं करेगी.'

'परंतु यहां का राजा जो हमारे विरुद्ध षड्यंत्र रच रहा था, क्या उसको यूं ही छोड़ देंगे?'

'हरगिज नहीं! तुम अपने आठ-दस सैनिकों को लेकर जाओ और राजा को बंदी बना लाओ?'

'सिर्फ, आठ-दस!'

'वे भी ज्यादा हैं, देखना तलवार उठाने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी.'

यही हुआ भी. छोटा राजकुमार गिरफ्तार कर लिया गया. नीतिसेन अपनी सेना सहित वापस लौट गया. छोटे राजकुमार के गिरफ्तार होते ही प्रजा ने बुजुर्ग राजा को आजाद करा लिया. तब राजा को अपने बड़े बेटे की सुध आई. उसने अपने सैनिक बड़े बेटे की खोज में चारों तरफ फैला दिए. कुछ ही दिनों में लोगों ने साधु भेष में एक युवक को दरबार में प्रवेश करते देखा. कुछ ने उसे देखते ही पहचान लिया.

'अरे, ये तो वही महाराज हैं, इन्हीं की प्रेरणा से तो हम अपने राज्य की इज्जत बचाने में सफल हुए हैं.'

राजा को असलियत मालूम हुई तो बहुत प्रसन्न हुआ. अपने व्यवहार पर खेद प्रकट करते हुए बोला'तुम्हारी मां ही ठीक कहती थी. मैं गलती पर था. अब तुम्हीं इस राज्य की बागडोर संभालो.'

'आप अब भी गलती पर हैं महाराज.राज्य का मान-सम्मान प्रजा के कारण सुरक्षित है. इसीलिए उचित होगा कि राज्य की व्यवस्था का भार प्रजा को ही सौंप दिया जाए.'

'हमारे पूर्वज यहां सैकड़ों वर्ष से राज्य करते आए हैं.' राजा व्यथित था.

'राजा वह जो राज्य और प्रजा के मान-सम्मान की रक्षा कर सके. उसके लिए अपने प्राणों की आहुति देनी पड़े तो भी पीछे न रहे. इस राज्य पर हमारा अधिकार उसी समय खत्म हो चुका था, जब छोटे राजकुमार ने इसे नीतिसेन को सौंपने का निर्णय लिया था. '

'क्या परिवार के किसी एक सदस्य के अपराध का दंड उसके पूरे परिवार को देना न्याय है?'

'एक राजा की गलती का दंड उसकी पीढ़ियों को भोगना ही पड़ता है.' बड़े राजकुमार ने कहा.

राजा ने सोचा. अचानक उसके चेहरे पर तेज छा गया, 'शायद तुम्हीं ठीक कहते हो. इस राज्य का मान-सम्मान प्रजा ने बचाया है. इसलिए अपना राजा चुनने का अधिकार प्रजा को ही है. लेकिन जब तक प्रजा अपना नया राजा नहीं चुन लेती, तब तक तो तुम इस राजगद्दी को संभाल लो. मरने से पहले कम से कम मैं तो यह देख ही लूं कि बड़ा बेटा होने के नाते मैंने तुम्हें तुम्हारा अधिकार सौंपने में गलती नहीं की.'

बड़े राजकुमार ने बात मान ली. अगले ही दिन से राज्य में नए राजा के चुनाव की तैयारियां होने लगीं.

कहानी लंबी थी. पर टोपीलाल बिना पलक झपके सुनता गया. कहानी पूरी होते ही मां ने टोपीलाल की आंखों में झांका.

'अन्याय हड़बड़ी में रहता है, आपाधापी में वह गलती कर बैठता है; इसलिए कभी भी अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाता. जबकि न्याय की यात्रा लंबी और जीत स्थायी होती है. क्यों यही कहना चाहती हो ना मां?' टोपीलाल ने मां की आंखों में झांकते हुए कहा.

'तू ठीक समझा. अब तू उस खेल का मतलब भी आसानी से समझ जाएगा?' मां ने कहा और टोपीलाल को अपने सीने से लगा लिया. अब नींद के आगोश में जाने की बारी थी.

उस रात टोपीलाल को गहरी नींद आई और सुहावने सपने भी.

*

अगले दिन से मां उसको सांप-सीढ़ी का खेल सिखाने लगी. पासे और गोटियों का काम

ईंट और पत्थर की टिकुलियों से चलाया गया. काम के दौरान ही वह ईंट के एक छोटे टुकड़े को घिस लाई थी. उसकी लंबाई, चौड़ाई और ऊंचाई एक समान थीं. फिर कील से उसके हर पहलू पर एक से छह तक की गिनतियां लिख दी गईं. टोपीलाल कौतूहल से मां को यह सब करते हुए देखता रहा.

'मां, अपने बचपन में क्या तुम भी ऐसे ही खेल खेला करती थीं?'

'कभी-कभी, पर हमारे जमाने में ये गत्ता-वत्ता नहीं था. हम तो बस आंगन में खड़िया या गेरू से खाने बनाकर खेलने बैठ जाते थे. गोटियां और पासे तब भी मैं ही बनाया करती थी.'

टोपीलाल को जो सिखाया गया था, वह उसने ध्यान से ग्रहण किया. मां के काम पर चले जाने के बाद वह अकेला ही खेलता रहा. अपने दाएं और बाएं हाथ को उसने अलग-अलग टीम बना दिया. बारी-बारी से दोनों हाथों से चाल चलता रहा. अपने इस सोच पर उसको गुमान भी हुआ. एक-दो दिनों में वह खेल में पारंगत हो गया. अगले कुछ दिनों में उसने बाकी बच्चों को भी उस खेल में निपुण कर दिया. इससे बच्चों को नया खेल मिल गया. वे जमीन पर रेखाएं खींचकर काम चलाने लगे.

इस बीच एक बात टोपीलाल के दिमाग में लगातार करकती रही. खेल के उत्साह ने भी उसको मरने नहीं दिया. जब भी वह गोटियों और गत्ते पर बने चित्रों को देखता, उसको मां का कहा याद आ जाता. खेल सिखाने से पहले मां ने कहा था कि यह प्रकृति का खेल है. इसकी गोटियां कुछ हो सकती हैं. अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए मां ने एक कहानी भी सुनाई थी. टोपीलाल जानता था मां कोई भी बात यूं ही तो कहती नहीं.

'मुझे मां से उसी दिन इस खेल का रहस्य जान लेना चाहिए था.' यह सोचते ही टोपीलाल के मन में ग्लानिबोध उमड़ने लगता.

खेल जितना ही जरूरी है, खेल की भावना को समझना. उसके हर पहलू की बारीकी से जांच करना. यह सोचते हुए टोपीलाल ने मां की बातों की गहराई तक पहुंचने का भरसक प्रयास किया. मगर बेकार. उस दिन टोपीलाल ने खेल पूरा किया तो उसका इरादा पक्का था.

शाम को जैसे ही मां घर के काम से निपटी, टोपीलाल उसके पास पहुंच गया.

'मां, यह प्रकृति क्या होती है?' उसने बात छेड़ी.

'क्या तू सचमुच इससे अनजान है?'

'जानता तो हूं...' टोपीलाल सकुचाया. जैसे उसकी चोरी पकड़ी गई हो, 'लेकिन प्रकृति का खेल मेरी समझ से बाहर है.'

मां मुस्करा दी, 'टोपीलाल, तू मेरे सोच से भी ज्यादा चतुर है रे...ठीक है, खाना खा ले. आज सोने से पहले हम इस बारे बातचीत करेंगे...वह गत्ता तो है, न? उसको साथ रखना.'

ज्ञान आत्मा की जरूरत है. मन में सीखने की सच्ची ललक हो तो मस्तिष्क उल्लास से भर जाता है. मां के साथ सोने को चला तो टोपीलाल का मन पर उमंग सवार थी. दिये की मद्धिम रोशनी, सरसों के तेल की हल्की-हल्की धूम्र-गंध, झींगुरों और तिलचट्टों की बेसुरी आवाज के बीच मां ने टोपीलाल को अपने सीने से सटा लिया

'अब तू कह, क्या जानना चाहता है?' मां ने वात्सल्य उंडेला.

'वही, जो मेरी मां चाहती है कि मुझे जानना चाहिए.'

'हूं, तो सुन! हम सबकी जिंदगियां, इस संसार में जो कुछ भी घटता है या घटने वाला है, वह सब प्रकृति के सनातन खेल का हिस्सा है. प्रकृति विराट है. उसको समझने के लिए हमारी बुद्धि बहुत छोटी है. और जब हम उसको समझ नहीं पाते तो उसे तरह-तरह के नाम देने लगते हैं. अपनी समझ के अनुसार उसकी अलग-अलग व्याख्या करते हैं. कोई उसे किस्मत कहता है, कोई भाग्य-रेख. कोई कपाल-गाथा. पर मैं इसको खेल कहती हूं. कुदरत का खेल. सांप-सीढ़ी का खेल भी उसी की तरह है, बेटा.'

टोपीलाल ने अपना सारा ध्यान मां के शब्दों पर एकाग्र कर लिया था. ताकि उसका एक-एक शब्द, शब्द का प्रत्येक भाव, भाव में अंतर्निहित उसका स्वाभाविक स्फुरण, स्वर का उतार-चढ़ाव सीधे दिमाग में उतरता चला जाए. पर मां की जिह्वा पर तो उस समय जैसे सरस्वती विद्यमान थी. उसकी बातें लगातार जटिल होती जा रही थीं

'मैं कुछ समझा नहीं मां?' बात जब सिर के ऊपर से जाने लगी तो टोपीलाल ने टोकना ही उचित समझा.

'बहुत आसान-सी बात है बेटा. हम जैसा करते हैं, वही पाते हैं. आम का पेड़ लगाओ तो आम का फल और उसकी शीतल छाया मिलती है. बबूल बोने से कांटे...और धूप. लूडो के खेल में जो पासा है, उसकी एक-एक चाल मानो हमारे कर्तव्य हैं. हमारे अच्छे-बुरे संकल्प. अच्छे कर्म हमें सीढ़ी बनकर सहारा देते हैं. वे हमें सीधे ऊपर ले जाते हैं. लक्ष्य की ओर, जिसको इस खेल में घर बताया गया है.

दूसरी ओर बुरे कर्म हमें पीछे की ओर खींचते हैं, वे हमें नाग की तरह डंसते हैं, नागपाश बनकर हमारे कदमों की बेड़ी बन जाते हैं. वे हमारे विकास को अवरुद्ध कर, पतन का कारण बनते हैं. हमें आसमान से धरती पर ला पटकते हैं. हमारी एक चाल, एक गलत कदम हमें वापस उसी जगह पर ला सकता है, जहां से हमने अपनी यात्रा आरंभ की थी. यानी एक गलती पर उस समय तक का किया-धरा सब बराबर.'

'पर मां पासे पर तो एक से छह तक अंक लिखे होते हैं. उनमें से कौन-सा अंक कब आता है, यह तो संयोग पर निर्भर है. इसमें हमारा कौशल, अच्छा या बुरा कहां है?'

'ठीक कहते हो तुम? पासे के एक से छह अंक में से किसी एक का आना, संयोग पर निर्भर है. वह अंक कहां ले जाएगा, हमें उठाएगा कि गिराएगा; यानी उसका फल भी हमारे हाथ में नहीं होता. ठीक ऐसे ही जैसे अपने किसी कार्य के परिणाम के बारे में हम

ठीक-ठीक कुछ भी नहीं बता पाते...'

'तब तो यह जुआ ही हुआ, मां...और जुआ खेलना तो बुरी बात है, क्यों?' टोपीलाल ने बीच में टोका.

'जुए जैसा ही समझो. पर यह एकदम जुआ भी नहीं है. संभावनाओं के बीच कहीं न कहीं ठहराव, कुछ न कुछ पक्कापन भी होता है. यह पक्कापन यानी सुनिश्चितता हमारे अनुभव और विवेक पर निर्भर करती है. लगातार अभ्यास द्वारा इसे बढ़ाया भी जा सकता है. अपनी बुद्धि और अनुभव के दम पर आदमी पहले ही अनुमान लगा सकता है, कि उसके किसी काम का क्या फल मिलने वाला है.'

'सीढ़ियां और सांप, याने पुण्य और पाप?'

'हां, इन्हें आसान भाषा में पुण्य और पाप भी कह सकते हैं. असल में ये हमारे विवेक और अज्ञान के प्रतीक हैं.'

'मां तुमने यह सब कहां से सीखा है?' टोपीलाल का मन विस्मय से भरा था.

'आदमी अगर अपना दिमाग खुला रखे तो ज्ञान उसके आसपास ही बिखरा होता है? जरूरत तो सही वक्त पर सर्वोत्तम मोती चुनने और सहेजने की है.' मां ने बताया.

टोपीलाल का रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठा। भावावेश में उसने अपनी बांहें मां के गले में डाल दीं. वह दिन-भर की थकी हुई थी. टोपीलाल के मन में और भी कई सवाल थे. लेकिन उसे याद आया कि असंयमी होना उचित नहीं. एक साथ ज्यादा जानने के चक्कर में मां ने अभी-अभी जो बताया है, उसको भूल सकता है.

टोपीलाल मां के बताए एक-एक शब्द को आत्मसात कर लेना चाहता था. इसलिए नींद का बहाना करने लगा. मां समझ गई. बराबर की चारपाई पर टोपीलाल के पिता की सांसें बता रही थीं कि वे गहरी नींद में हैं. मां ने हाथ बढ़ाकर दीपक बुझा दिया.

गहराते अंधेरे के बीच दोनों नींद की प्रतीक्षा करने लगे. पर नींद तो खुद पलकों के दरवाजे से झांक रही थी. टोपीलाल को नींद की आतुरता भली लगी. उसने खुद को उसके हवाले कर दिया.

*

अगले दिन टोपीलाल जगा तो उसके मन में उत्साह था. उमंग थी बीते दिन मां से जो सीखा था, उसको सभी बच्चों को बता देने की. लेकिन उसको दुःख था कि उसके आसपास जो बच्चे रहते हैं, वे सभी छोटे-छोटे हैं. मां की बड़ी-बड़ी बातें उनके दिमाग में नहीं आ पाएंगी. फिर किसको बताया जाए? यह एक ऐसी समस्या थी, जिसका उसके पास कोई समाधान नहीं था.

टोपीलाल यदि चाहता तो अपने टोले के बड़े आदमियों को भी लूडो के खेल के मायने समझा सकता था. वे गंभीरता से सुनते भी. पर वह जानता था कि काम से छूटने

के बाद वे सभी बहुत थके होते हैं. ऐसे में उनके आगे ज्ञान की बातें बघारना गलत होगा. हो सकता है, उन्हें मालूम भी हो. जैसे मां ने अपने अनुभव से जाना है, वैसे ही वे भी जानते हों. जो मां जानती है, संभवतः उससे भी ज्यादा.

'ऊंह! मां से ज्यादा तो वे हरगिज नहीं जान सकते.' टोपीलाल ने अपनी ही बात को काटा, 'उनका अनुभव मां से बड़ा हो सकता है. पर अनुभव को सहेजने में मेरी मां किसी से भी आगे है. ज्ञान के अनंत महासागर से सही मोती चुनना और सहेजना, मां ने यूं तो नहीं कहा था.' सोचते-सोचते टोपीलाल को अपनी मां पर गर्व होने लगा.

उन दिनों टोपीलाल एक और परिवर्तन अपने बीच अनुभव कर रहा था. उसको लगता कि इन दिनों उसका दिमाग कुछ ज्यादा ही उड़ने लगा है. बड़ी अजीब-अजीब-सी बातें सोचता है. कई बार बे सिर-पैर की भी. कभी लगता है कि वह आसमान पर उड़ रहा है. पक्षियों की तरह. पंख फैलाए. कभी विचार आता कि बादलों के नीले मैदान में चांद को फुटबाल बनाकर खेल रहा हो.

कभी-कभी सोचता कि दुश्मन देश ने उसके शहर पर हमला कर दिया है. उसके विमान बम बरसाने के लिए शहर की ओर बढ़े चले आ रहे हैं. शहरवासी परेशान हैं. चीख-चिल्ला रहे हैं. तब वह अपनी गुलेल निकालकर निशाना साधता है.

'भड़ाक!' गुलेल से छूटा मामूली कंचा, एक विमान को धराशायी कर देता है. फिर वह दूसरा कंचा गुलेल पर चढ़ाता है और...

'धड़ाम!' दूसरा विमान भी धरती पर गिरकर धूं-धूं जलने लगता है. दुश्मन हैरान है. वह हमला तेज कर देता है. आसमान में दर्जनों विमान एक साथ नजर आते हैं. सांय-सांय...शहर की ओर बढ़ते हुए!

'जल्दी से बड़े कंचों का इंतजाम करो...!' वह बच्चों से कहता है.

'बड़े कंचे तो मलोहरा की दुकान पर मिलेंगे?' बच्चे घबरा जाते हैं.

'तो जाकर मलोहरा से मांगो...नहीं दे तो लूट लो.' लूटने की जरूरत नहीं पड़ती. मलोहरा कंचों की पूरी थैली लिए खुद हाजिर है. उसकी बहादुरी के आगे नतमस्तक

'ये लो, देश की खातिर पूरी दुकान हाजिर है...इन गुलेल पर चढ़ाकर दुश्मन के इन कनकौओं को धराशायी कर दो, हरामखोर जंगी सेना से टकराने का ख्वाब पाले हुए हैं।' अनपढ़ मलोहरा अपने देश के जहाजों को जंगी सेना और दुश्मन देश के जहाजों को कनकौए कहता है.

वह जोश से भरा हुआ बड़े कंचे को गुलेल पर साधता है. कंचा हवा में सरसराता हुआ आगे बढ़ता है. उसकी तेज रफ्तार से आंधियां उठने लगती हैं. दुश्मन के तीन विमान उस आंधी में फंसकर नीचे गिर जाते हैं. बिजली की-सी तेज रफ्तार से कंचा एक विमान से टकराता है. वह हवा में ही टुकड़े-टुकड़े बिखर जाता है. पहले विमान से टकराने के बाद वही कंचा तुरंत पलटता है और दूसरे विमान को धूल चटा देता है. एक ही वार में

अपने पांच-पांच विमानों को जमीन पर लोटता देख दुश्मन घबरा जाता है. वह अपने विमानों को वापस बुलाकर जमीनी हमला शुरू कर देता है.

अब उसके दर्जनों टैंक देश को तबाह करने के लिए सीमा पर चढ़े चले आ रहे हैं. उनपर लगी तोपें दनदना रही हैं. तब वह उछलता है और दुश्मन की तोपों से छूटे गोलों को फटने से पहले ही हवा में पकड़कर वापस दुश्मन-देश की तरफ फेंक देता है, एक के बाद एक...दुश्मन के गोले उसी की धरती को तबाह कर रहे हैं. उसके पसीने छूट रहे हैं, वह हैरान है कि उसके गोले उसी को हताहत कर रहे हैं.

टैंक मिट्टी के खिलौनों की तरह टूटते जा रहे हैं. दुश्मन की कमर टूट चुकी है. उसके सैनिकों के हौसले पस्त हैं. वे हथियार डाल रहे हैं. लोगों के चेहरों पर चमक है. प्रकृति के कण-कण से विजय का उल्लास रिस रहा है. कंजूस मलोहरा को अपने कंचों के जाने का गम नहीं. वह खुश है. मग्न होकर नांच रहा है.

अगले ही पल वह देखता है कि देश के राष्ट्रपति उसको सम्मानित कर रहे हैं. शहर वाले उसको अपने कंधों पर उठाए हुए हैं.

एक बार उसने और भी विचित्र दिवास्वप्न देखा. उसने देखा कि वसंत की शुरुआत में वह भरे-पूरे बाग में है. तितलियां और पशु-पक्षी उससे बतिया रहे हैं. उनकी बोली वह आसानी से समझ सकता है. तभी एक हरियल तोता उसके कंधे पर आकर बैठ जाता है

'तोपीलाल-तोपीलाल भूख लगी.' तोता कहता है.

'मेरे साथ घर चलो. मां कल ही बाजार से हरी मिर्चें लाई है, खूब खाना.'

'मिर्च नहीं...आज तो नन्ही अमियां खाने का मन है भइया!'

'अभी से, अमियां तो कम से कम दो महीने बाद मिलेंगी. क्यों दोस्तो?' टोपीलाल सामने खड़े आम के वृक्ष से प्रश्न करता है. आम का बूढ़ा पेड़ गर्दन हिलाता है

'मैं तो बूढ़ा हो चला हूं. दस-पांच दिन ज्यादा भी लग सकते हैं फल आने में. जो जवान पेड़ हैं, वे तो दो महीने में फलने ही लगेंगे.'

'पर मुझे तो आज ही खाने का मन है...कुछ करो न!' तोता खुशामद पर उतर आया. उसको रहम आने लगता है. वह मुस्कराते हुए अपनी जेब में हाथ डालकर बांसुरी निकालता है. बांसुरी देख पेड़-पौधे, पशु-पक्षी सभी के चेहरे खिल उठते हैं. हवा ठहर जाती है. तितलियां सांस रोककर बैठ जाती हैं.

अगले ही पल वह अपनी बांसुरी में फूंक मारता है. जैसे-जैसे बांसुरी की धुन आगे बढ़ती है, पेड़-पौधों का कायाकल्प होने लगता है. लताएं फूलों से लद जाती हैं. आम की डालियों पर बौर झलकने लगता है. अमराई-गंध जड़-चेतन को महकाने लगती है. न जाने कहां से भंवरे और तितलियां आकर उनपर मंडराने लगते हैं. उसके अगले ही पल और भी बड़ा चमत्कार होता है. बौर के बीच नन्ही-नन्ही अमियां नजर आने लगती हैं.

'धन्यवाद तोपीलाल भइया! मैं जानता था कि एक सिर्फ तुम्हीं हो जो यह कर सकते

हो।' कहता हुआ तोता फुर्र से उड़कर आम की डाल पर जा बैठता है. और चुनकर हरी-हरी अमियां खाने लगता है.

ऐसी ही न जाने कितनी कल्पनाएं, कितने सपने, कितनी उड़ानें टोपीलाल ने भरी हैं. अकेले-अकेले. उस समय वह भूख-प्यास सब भूल जाता है. यहां तक कि आपा भी बिसरा देता है।

एक बार की अनोखी बात. वह ऐसे ही सड़क पर घूम रहा था. उन दिनों उनका दल एक बहुमंजिला इमारत के निर्माण में लगा था. मालिक जल्दी कर रहा था. इसलिए मां और बापू जल्दी ही काम पर निकल जाते. टोपीलाल घर में अकेला रह जाता. उस दिन घर में मन नहीं लगा तो वह सड़क पर आ गया. सड़क पर वाहन आ-जा रहे थे. अपनी ही धुन में मस्त. टोपीलाल सड़क के किनारे बने फुटपाथ पर आगे बढ़ने लगा. यकायक उसके दिमाग ने उड़ान भरी. कल्पना ने कमान संभाली...आंखें बिंब सजाने लगीं.

टोपीलाल को लगा कि वह स्वयं एक साइकिल पर है, मगर उसकी साइकिल कोई ऐसी-वैसी साइकिल नहीं है. जरूरत पड़ने पर वह हवा में उड़ लेती है. पानी पर फर्राटे भर सकती है. उस समय वह अपनी साइकिल पर धीरे-धीरे चला जा रहा था. अचानक शोर मचा. साइकिल के आगे चल रहा ट्रक चरमराया. साइकिल को भी ब्रेक लगे. अचानक वह हवा में उड़ने लगी. पलक झपकते ही साइकिल ट्रक के आगे थी. ट्रक के पीछे आ रही कार का चालक टोपीलाल की तरह फुर्तीला नहीं था. उसकी कार ट्रक से टकराई और उसका आगे का हिस्सा पिचक गया. यह देख टोपीलाल के चेहरे पर मुस्कान तैर गई...

'ऐ, आंखें बंद करके चल रहा है क्या?' किसी ने टोपीलाल को टोका तो उसका दिवास्वप्न भंग हुआ. उसके सामने एक लड़का बैठा हुआ था. जूतों पर पॉलिश करने के लिए छोटी-सी दुकान सजाए. टोपीलाल को अपनी भूल का एहसास हुआ. वह एक ओर हट गया.

'यहां सभी मेहनत करके खाते हैं. और तो और मेरी मां भी काम पर जाती है. बाकी औरतों की तरह वह सिर्फ घर नहीं संभालती. इसलिए मुझे भी कुछ न कुछ करना ही चाहिए.' उस बच्चे की ओर देखते हुए टोपीलाल ने सोचा. मगर अगले ही पल उसको लगा कि काम करने से तो उसकी आजादी छिन जाएगी. फिर ये सुहावने दिवास्वप्न...यह आजादी...!

'काम के लिए तो अभी मैं बहुत छोटा हूं. फिर मुझे पढ़ना भी तो है...!' टोपीलाल ने मन को समझाया और कुछ ही पहले दिमाग में आए विचार को बाहर कर दिया. पर क्या वह इस विचार को सचमुच बाहर कर पाया था।

*

मनुष्य का दिमाग एक रहस्यमय अजायबघर की तरह होता है. जिसमें कुछ चीजें करीने

से सजी होती हैं तो ढेर सारी यत्र-तत्र बिखरी रहती हैं. यहां तक कि उसके संचालक को भी उनके बारे में ठीक से पता नहीं होता.

उस दिन वह बाकी बच्चों के साथ खेल में मग्न था कि सड़क के उस पार से एक लड़की को जाते देखा. हाथों में छोटी-सी पोटली उठाए वह बहुत तेजी से बढ़ती जा रही थी, मानो किसी काम को निकली हो और उसमें बहुत देर हो चुकी हो.

'आज से पहले तो इसे कभी नहीं देखा.' टोपीलाल ने मन ही मन सोचा. उसी समय उसे सड़क के उस पार से चीखने की आवाज सुनाई दी. टोपीलाल ने चौंककर उसी ओर देखा. एक कुत्ता लड़की के हाथ से पोटली छीनकर भागा जा रहा था. टोपीलाल खेल छोड़कर फौरन उठ खड़ा हुआ. हाथ में पत्थर उठाकर वह तेजी से दौड़ा. सड़क पर वाहनों की भरमार थी. उसने पत्थर से निशाना साधा. कुत्ता पोटली छोड़कर भाग खड़ा हुआ. टोपीलाल पोटली लेकर लड़की के पास पहुंचा. वह रोए जा रही थी. उसने लड़की को समझाने का प्रयास किया.

'मां ठीक ही कहती है. मैं कोई भी काम ठीक से नहीं कर सकती.' लड़की सुबके जा रही थी.

'कौन हो तुम, कहां रहती हो?' टोपीलाल ने सवाल किया. जवाब देने के बजाय लड़की ने एक ओर उंगली से इशारा कर दिया.

'खाना किसके लिए ले जा रही थीं?'

'मां के लिए,वहां सड़क किनारे गुमटी लगाती है.' लड़की ने एक ओर इशारा किया, फिर बताती चली गई, 'मां रोज सवेरे रोटी बनाकर ले आती थी. पर दिन होते-होते रोटियां अकड़ जाती हैं. उसके कमजोर दांतों से कटती ही नहीं. इसलिए मैंने सोचा कि मां को गर्म रोटियां बनाकर पहुंचा दिया करूंगी. मां कहती थी कि यह मुझसे नहीं होगा. आखिर वही हुआ जो मां ने कहा था. मैं कोई काम तरीके से कर ही नहीं सकती.'

लड़की फिर सुबकने लगी.

'तुम्हारे पिता जी क्या करते हैं?'

'नहीं हैं!'

'क्या, मर गए?' टोपीलाल के मुंह से निकला. परंतु अपनी गलती का एहसास उसको जल्दी ही हो गया. ग्लानिबोध में उसने अपनी गर्दन झुका ली.

'नहीं, मां को छोड़कर कहीं दूर चले गए हैं.' लड़की का स्वर सपाट था, जिसने टोपीलाल को विस्मय में डाल दिया.

'तुम्हें भी छोड़ गए?'

'हां, मैं भी मां की तरह काली जो हूं'

'ओह!' मारे दुःख के टोपीलाल का कलेजा फटा जा रहा था. आगे भी शब्द मुंह से निकाल पाना मुश्किल हो गया.

'उठो, तुम्हारी मां को भूख लगी होगी. घर से कुछ रोटियां ले लेते हैं.' रोटियों का नाम सुनकर लड़की के पैरों की जान वापस आ गई. वापस आकर टोपीलाल अपनी मां के पास पहुंचा. उससे कुछ बातें कीं. फिर वापस आकर रोटियां लीं. चूल्हे में आग गर्मा रही थी. जल्दी-जल्दी उन्हें गर्म किया. लड़की उसकी ओर चुपचाप देखती रही.

'अरे! इतनी देर हो गई. मैंने तुम्हारा नाम तो पूछा ही नहीं.' दुबारा सड़क पर आते ही टोपीलाल ने लड़की से पूछा.

'निराली,यही नाम है मेरा. लेकिन सिवाय मां के सब मुझे काली ही कहते हैं. मेरे रंग को देखते हुए उन्हें यही नाम ठीक लगता है.' लड़की ने बताया.

'तुम सचमुच निराली हो. आज के बाद मैं तुम्हें इसी नाम से पुकारूंगा. और सुनो, मेरी मां बताया करती है आदमी अपनी गलतियों से भी सीखता है. वह कभी गलत नहीं कहती.एक दिन तो यह बात सचमुच सच भी हो गई.' टोपीलाल ने कहा. लड़की को खुश रखने के लिए वह उसको बातों में उलझाए रखना चाहता था.

'कैसे?' लड़की जो कुछ देर पहले तक अपने आंसू रोक नहीं पा रही थी, अब उसकी बातों का आनंद लेने लगी थी. टोपीलाल तो यही चाहता था. वह आगे बताने लगा

'अभी कुछ दिन पहले की बात है? मां और पिताजी तो काम पर चले जाते हैं. उनके बाद घर की सफाई का छोटा-मोटा काम मुझी को करना पड़ता है. उस दिन मैं झाड़ू लगा रहा था. खेल का समय हो चुका था. बच्चे घर के सामने इंतजार कर रहे थे. कुछ ऊबकर घर लौट चुके थे. सभी को जल्दी थी. मैं भी जल्दी-जल्दी काम समेट लेना चाहता था.

सहसा पड़ोस से किसी के चीखने की आवाज आई. आवाज साफ नहीं थी. मुझे भी खेल को देर हो रही थी, इसलिए मैं अपने काम में लगा रहा. कुछ देर बाद ही बराबर के घर से रोने की आवाज आने लगी. मैंने लोगों को उस ओर दौड़कर जाते हुए देखा. झाड़ू फर्श पर पटककर मैं भी बाहर की ओर भागा.

मजदूर और कारीगर जहां काम करते हैं, वहीं पर अपने लिए छोटी-छोटी झुग्गियां बना लेते हैं. बिना किसी भेदभाव के. मजदूरों और चिनाई मिस्त्रियों की झुग्गियां बराबर-बराबर बनी होतीं. हमारी झुग्गी के बराबर में ही एक मजदूर की झुग्गी थी. गांव से भागकर धंधे की तलाश में वह शहर पर आया था. जब कोई दूसरा काम नहीं मिला तो मजदूरी करने लगा.

मां बताया करती थी कि उनपर गांव के किसी महाजन का कर्ज है. उसे उतारने के लिए ही पति और पत्नी दोनों मजदूरी करते थे. उनका दो साल का एक बेटा था. दिन में वह कुछ देर हमारे साथ खेलता. दोपहर के समय उसे नींद आने लगती तो उसकी मां बीच में आकर उसको सुला जाती. कुछ समय तक हम भी उसकी ओर से निश्चिंत हो जाते थे.

उस दिन उसकी मां उसे सुलाकर गई ही थी. इसलिए मैं उसकी ओर से बेफिक्र होकर अपने काम में लगा था. उसकी चीख को अनसुना करने के पीछे एक कारण यह भी था. लेकिन...' टोपीलाल चुप हो गया. मानो अपनी गलती पर अफसोस कर रहा हो.

'आगे क्या हुआ?' निराली जिज्ञासु बनी थी, चुप्पी उसको खलने लगी.

'उस दिन उसकी मां बच्चे को सुलाने के बाद काम पर चली गई थी. वह उसकी ओर से निश्चिंत थी. लेकिन न जाने कैसे बच्चे की नींद उचट गई. वह उठकर चूल्हे के पास चला गया. राख के नीचे आग दबी थी. बच्चा चिमटा उठाकर उसी से खेलने लगा. खेल-खेल में एक चिंगारी उछलकर बच्चे के कपड़ों पर आ गिरी. तपिश लगने से वह रोने लगा. आग की कुछ चिंगारियां उछलकर कपड़ों तक भी पहुंची थीं, जिनसे धुआं उठने लगा. उसे देख बाहर काम कर रहे किसी मजदूर का माथा ठनका. वह फौरन भीतर भागा. उसने फटाफट जाकर आग पर काबू किया. बच्चा भी काफी झुलस गया था.'

'इसमें तुम्हारा क्या दोष है?' निराली ने पूछा. उसे साथ चल रहा टोपीलाल इतना भला लग रहा था कि उसपर संदेह करना भी मुश्किल लग रहा था.

'गलती कैसे नहीं थी, उस दिन अगर मैं बच्चे की पहली चीख सुनते ही उसके घर चला जाता तो संभव है कि उसको झुलसने से भी बचा लेता. मेरी ही गलती से...'

'इसलिए मेरी चीख सुनते ही आज तुम फटाफट दौड़कर चले आए.'

'आदमी अपनी गलती से भी सीखता है,मेरी मां बिलकुल सही कहती है?'

'आदमी जब गलतियों से भी सीखता है तो जरा-सी भूल होने पर शर्म कैसी?' निराली ने निराला तर्क दिया.

'कभी-कभी गलती सुधारने में बहुत देर हो जाती है.' दुःखी मन से टोपीलाल ने कहा.

'अच्छा उस ओर मुड़ जाओ. मेरी मां वहीं बैठती है.' और टोपीलाल बिना कुछ कहे जिधर निराली ने इशारा किया था, उसी ओर मुड़ गया.

अगर मन साफ हो तो अच्छे मित्र राह चलते हुए भी मिल जाते हैं. काफी सोचने के बाद उस दिन निराली इसी नतीजे पर पहुंची.

*

वह गलत थोड़े ही थी.

टोपीलाल के रूप में निराली को एक अच्छा दोस्त मिला; और सच्चा हमदर्द भी. उम्र में वह टोपीलाल से एक-दो वर्ष कम ही होगी. किंतु टोपीलाल से मिलने से पहले वह गुमसुम और खोई-खोई रहती थी. चेहरे पर पीलापन छाया रहता. टोपीलाल के साथ रहकर उसकी उदासी छंटने लगी. जिसका असर उसके शरीर पर भी पड़ा. उसपर निखार आने लगा. एक दिन टोपीलाल से मिली तो बहुत प्रसन्न लग रही थी. टोपीलाल उसकी ओर देखता ही रह गया.

'मैंने एक फैसला किया है.'

'कैसा फैसला?'

'सोचती हूं कि कुछ काम करने लगूं. इससे मैं अपनी मां की और अधिक मदद कर सकती हूं.'

टोपीलाल को अच्छा लगा. उस यह सोचकर दुःख भी हुआ कि उसने स्वयं कभी अपने माता-पिता की मदद करने के बारे में नहीं सोचा. कभी ऐसा कोई विचार तक दिमाग में नहीं आया. अगर आया भी तो निकाल बाहर किया. निराली अपनी मां की मदद करना चाहती है, इसलिए वह उससे अच्छी है. जो बच्चे किसी भी प्रकार से दूसरों की मदद करना चाहते हैं, वे अच्छे ही होते हैं.

'काम क्या करोगी?' टोपीलाल के प्रश्न पर निराली ने मुंह लटका लिया. मानो सकुचा रही हो.

'तुमने जवाब नहीं दिया?' टोपीलाल ने खुद को दोहराया.

'हमारी बस्ती की कई लड़कियां कबाड़ चुनने जाती हैं, सोचती हूं मैं भी उन्हीं के साथ जाने लगूं. काम बहुत अच्छा नहीं है. आदमी तो आदमी कुत्ते भी दुतकारे बिना नहीं रहते. लेकिन यदि मैं मां की मदद करने की ठान ही लूं तो कोई भी काम मुझे बुरा नहीं लगेगा. फिर धीरे-धीरे आदत तो पड़ ही जाती है.' कहकर वह चुप हो गई. टोपीलाल की प्रतिक्रिया का इंतजार करने लगी. टोपीलाल खुद सोच में पड़ा था. निराली इतना गहरा सोच सकती है, उसे कतई उम्मीद न थी.

'कबाड़ बीनने के अलावा क्या किसी और काम के बारे में भी सोचा है?' कुछ देर बाद टोपीलाल ने पूछा.

'मुझे कोई और काम आता कहां है. मां गलत थोड़े ही कहती है कि मैं सिर्फ घर पर रहकर रोटियां तोड़ सकती हूं.'

'मां के कहे का बुरा क्यों मानती हो, दिन-भर काम करते-करते वे बहुत थक जाती होंगी.'

'काम तो तुम्हारी मां भी करती हैं. चिनाई का काम तो एक जगह बैठकर सौदा बेचने से कहीं ज्यादा मेहनत का है.'

'गुस्सा आने पर तो मां भी नाराज होती है. लेकिन उनके गुस्से का शिकार पिताजी को होना पड़ता है. मुझसे तो मां बहुत प्यार करती है.' टोपीलाल की गर्दन अभिमान से तन गई. मगर निराली की उदासी और भी बढ़ गई. टोपीलाल कुछ समझ न पाया. वह जान न सका कि अनजाने ही उसने निराली के दुःख को हरा कर दिया है. तो भी उसको लग रहा था कि उसने कुछ गलत कहा है.

'काम तो कोई भी बड़ा या छोटा नहीं होता, लेकिन...' कहते-कहते टोपीलाल चुप हो गया.

'क्या तुम नहीं चाहते कि मैं कोई काम करूं?' निराली ने पूछा.

'जरूर करना चाहिए. यदि मकसद नेक है तो इसमें कुछ भी बुराई नहीं है. परंतु मेरी मां कहा करती है कि हम बच्चों को बड़े-बड़े सपने देखने चाहिए. भले ही वे उस समय हकीकत में तब्दील ना हो पाएं.'

'अगर सच न हो पाएं तो ऐसे सपने देखने का लाभ ही क्या?' निराली ने बीच ही मैं टोक दिया. टोपीलाल के पास जवाब एकदम तैयार था.

'मां तो कहती है कि सपनों के अंकुराने से ही भविष्य के फूल खिलते हैं. इसलिए आदमी को सपना देखने में कभी कंजूसी नहीं करनी चाहिए. हम गरीब सही, पर सपने देखने पर पाबंदी क्यों हो, क्यों हम सपना देखने में भी मन को मारें?' टोपीलाल ने तर्क दिया. मां का नाम जुबान पर आते ही उसका आत्मविश्वास जोर मारने लगा, चेहरे की चमक सवाई हो गई. ऐसा अक्सर होता था. मां का जिक्र कहीं भी, किसी भी रूप में हो, टोपीलाल का रोम-रोम प्रफुल्लित हो जाता था.

'सिर्फ सपने! बड़ी अजीब बात है. मेरी मां तो कहती है कि आदमी को पांव उतने ही पसारने चाहिए जितनी कि उसकी चादर हो.'

'अरे! यही प्रश्न तो मैंने अपनी मां से किया था, जब उन्होंने बड़े से बड़ा सपना देखने को कहा था. तब जानती है उन्होंने क्या कहा?'

'मैं कैसे बता सकती हूं!' निराली के चेहरे पर मासूमियत छा गई.

'तब मां ने कहा था कि ठीक है, आदमी को अपने पांव उतने ही पसारने चाहिए जितनी कि उसकी चादर है. मगर यह सपना तो वह देख ही सकता है कि आने वाले दिनों में वह बड़ी चादर जरूर खरीद लेगा...फिर एक घर होगा, चारपाई होगी, जिसपर दिन-भर की मेहनत के बाद वह आराम से सो सकेगा. बच्चों के अच्छे भविष्य के लिए योजनाएं बना सकेगा.'

'हां, चादर बड़ी करने का सपना देखना तो कोई गुनाह नहीं है.' निराली ने सहमति जताई.

'पर मां के सामने मैंने इस बात को आसानी स्वीकार नहीं किया था.'

'क्यों...?'

'उस समय मेरा मन था कहानी सुनने का; और मां के पास हर स्थिति को समझाने के लिए कहानी तैयार रहती है.'

'तो कहानी सुनाई थी, उन्होंने?'

'हां!' कहते हुए टोपीलाल मुस्करा दिया.

'कहानियां तो मुझे भी बहुत अच्छी लगती हैं. चलो आज का काम यहीं पूरा करते हूं. वहां पेड़ की छाया में बैठते हैं. तुम मुझे वह कहानी सुनाओ?'

न जाने क्यों टोपीलाल को निराली का साथ अच्छा लगता था. उनकी जान-पहचान

तो कुछ ही दिनों की थी, मगर लगता जैसे कि वह वर्षों पुरानी हो. इसलिए जब निराली ने कहानी सुनाने को कहा तो वह खुशी-खुशी तैयार हो गया. दोनों सड़क किनारे खड़े जामुन के पेड़ के नीचे जा बैठे.

'कहानियां कहना तो सिर्फ मां को आता है, मैं तो उसको बता ही सकता हूं. उसमें तुम्हें वह आनंद नहीं आएगा, जो मुझे मां के मुंह से सुनने में आता है.' टोपीलाल ने बताया. निराली बस मुस्कुरा दी.

टोपीलाल ने सुनी-सुनाई कहानी आरंभ कर दी

एक सेठ के दो लड़के थे. सेठ भला आदमी था. बेटे थे आज्ञाकारी. उसने आम आदमी का सादा-सरल जीवन जिया था. मृत्यु करीब आई तो उसने अपने दोनों बेटों को पास बुलाकर कहा, 'इस छोटे-से गांव में रहकर मैंने अपनी मेहनत और सादे चलन के बाद जो बचाया है, उसको दो हिस्सों में बांट दिया है. आधा-आधा धन इन दो हांडियों में बंद है. मैं चाहता हूं कि इनमें से एक-एक को तुम दोनों मेरे जीते जी संभाल लो, ताकि बाद में तुम्हारे बीच किसी भी प्रकार का झगड़ा न हो.'

इतना कहकर सेठ ने पलंग के नीचे रखी हांडियों पर से कपड़ा हटा दिया. वहां एक ही रंग और आकार की दो हांडियां रखी थीं. दोनों भाई उनमें से एक-एक उठाकर चलने लगे तो सेठ ने टोका

'मेरी आखिरी बात और सुन लो...अगर मन भाए तो अमल करना, नहीं तो बिसरा देना.' दोनों बेटों के रुकने पर सेठ ने कहा'मेरे गुरुजी कहा करते हैंनंगे पांव चलना,
सपने बड़े देखना. इन शब्दों को मैं तो अपने जीवन में पूरी तरह से उतार नहीं पाया. तुम अगर उतार सको तो मैं समझूंगा कि मेरी गुरुदक्षिणा मेरे बेटों ने चुका दी.'

दोनों बेटे पिता के इन शब्दों को मन ही मन दोहराते हुए वापस लौट आए. कुछ ही दिनों के बाद सेठ चल बसा. उसके बाद दोनों अपना-अपना धंधा संभालने लगे.

पिता के शब्दों का दोनों बेटों पर अलग-अलग प्रभाव पड़ा था. बड़े बेटे ने पांव में जूतियां डालना छोड़ दिया था. पिता की बात पर अमल करने के लिए वह हमेशा नंगे पांव रहता. उसी तरह आता-जाता. शाम ढलते ही वह बिस्तर पर चला जाता. फिर अगले दिन बांस-भर सूरज ऊपर चढ़ने के बाद ही आंखें खोलता. धीरे-धीरे उसका धंधा पिटने लगा. परेशानी और चिंता बढ़ी तो देह की आब घटने लगी. शरीर दिनोंदिन क्षीण पड़ने लगा. उधर छोटा बेटा मोटा पहनता, मोटा ही खाता. चुपचाप अपने काम में डूबा रहता. उसका धंधा बढ़ता ही जा रहा था.

बड़े की बीमारी जब लंबी खिंचने लगी तो उसकी पत्नी ने वैद्य को बुलवाया. वैद्य ने रोगी की नाड़ी की जांच की. कुछ समझ में नहीं आया तो पूछा

'नाड़ी तो ठीक ही लगती है, परेशानी क्या है?'

'मैं बहुत तकलीफ में हूं. खाना-पीना कुछ भी अच्छा नहीं लगता. न भूख लगती

है, न प्यास. नींद न रात को ढंग की आती है, न दिन को?'

'ऐसी कौन-सी चिंता खाए जा रही है, जहां तक मुझे मालूम है, मरने से पहले सेठजी तुम दोनों भाइयों के लिए ठीक-ठाक संपत्ति छोड़ गए हैं.'

'वह तो ठीक है पर...' बड़े लड़के ने हामी भरी. वैद्यजी उसके चेहरे पर नजर गड़ाए हुए थे. यह देख वह आगे बताने लगा, 'मरने से पहले बाबू जी ने कहा थानंगे पांव रहना, सपने बड़े देखना. मैंने उसी दिन से जूतियां पहनना छोड़ दिया. रोज यह सोचकर सोता हूं कि आज की रात खूब बड़ा सपना देखूं. लेकिन क्या करूं...अव्वल तो नींद ही नहीं आती. और जब आती है, तो बहुत डरावने सपने आते हैं. भय से देह पसीना-पसीना हो जाती है. नींद बीच ही में टूट जाती है, और उसके बाद तो सो भी नहीं पाता. बड़ा बेटा होकर भी मैं पिताजी की आखिरी इच्छा पूरी नहीं कर पा रहा हूं. बस यही चिंता मुझे खाए जा रही है. इसकी कोई दवा हो तो आप बताएं.'

अनुभवी वैद्य रोग की थाह तो पा गए, लेकिन कहा कुछ नहीं. कहने से पहले वे खुद को परख लेना चाहते थे, 'बेटा, मैं तो सीधा-सादा वैद्य हूं. वर्षों पहले बड़े वैद्यजी ने जो सिखाया था, उसी के सहारे लोगों के काया-कष्ट दूर करने का काम करता हूं. तुमने जो कहा, उसके बारे में तो बड़े वैद्यजी ने मुझे कुछ नहीं बताया था. पर मैं इतना जानता हूं कि तुम्हारे पिता बहुत गुणी इंसान थे। उनकी बात का कोई न कोई सार तो जरूर होगा. मुझे विणज-व्यौपार का जरा-भी अनुभव होता तो कुछ उपचार सोचता. हां, कोशिश जरूर करूंगा. यदि कुछ समझ पाया तो आज से ठीक पंद्रहवें दिन हाजिर हो जाऊंगा. उस समय तक यदि किसी और से सलाह लेना चाहो तो तुम्हारी मर्जी.'

इतना कहकर वैद्यजी वहां से प्रस्थान कर गए.

बाहर निकलकर उन्होंने सोचा कि अब छोटे भाई को भी परख लिया जाए. व्यापारी की बात का अर्थ कोई व्यापारी ही भली-भांति बूझ सकता है. सेठ के दो बेटे हैं. मरने से पहले उसने अपने छोटे बेटे से भी वही शब्द कहे होंगे. वैद्यजी को मालूम था कि छोटा बेटा दिनोंदिन तरक्की कर रहा है. इस बोध के साथ ही उनके चेहरे पर उत्साह छा गया. मन में जिज्ञासा और कौतूहल लिए वे सेठ के छोटे बेटे से मिलने चल दिए.

छोटा बेटा अपनी गद्दी पर ही विराजमान था. वैद्यजी को देखा तो उठकर खड़ा हो गया. स्वागत किया, बिठाया. उस समय वह पांव में साधारण-सी जूतियां पहने हुए था. कपड़े भी स्वच्छ एवं साधारण थे. चेहरे पर भली मुस्कान थी. मन को खींचने वाली.

'सेठजी के जाने के बाद अच्छी तरक्की की है?' वैद्यजी ने बात आरंभ की.

'जी नहीं, मुझे उनके जैसा बनने में तो अभी बहुत समय लगेगा.'

'मैंने तो सुना है कि तुम्हारा व्यापार दूर-दूर तक फैला हुआ है?'

'सो तो है, पर दुनिया बहुत बड़ी है. आकाश में भले ही मत उड़ो, पर आगे बढ़ने लिए धरती पर ही इतने कोने बाकी हैं, जहां तक, मुझे लगता है कि पिताजी का नाम जाना

ही चाहिए.'

'सेठजी तो बहुत संतोषी जीव थे.' वैद्यजी ने हैरानी जताई.

'जी हां, ईमानदारी से कमाना, खूब मेहनत करना और अपनी ही कमाई में संतोष रखना हमें उन्होंने ही सिखाया था.' छोटे बेटे के स्वर में विनम्रता थी, आंखों में आत्मविश्वास. वैद्य जी के चेहरे पर मुस्कान छा गई. छोटे बेटे को कोई संदेह न हो, इसलिए वे उठकर प्रस्थान कर गए. इसके बाद वे रोज उसके पास जाते. बातचीत करते और चुपचाप वापस लौट आते. हर बार वे देखते कि छोटे बेटे की कथनी और करनी में कोई भेद तो नहीं है.

पूरी तरह आश्वस्त होने के बाद, ठीक पंद्रहवें दिन वे बड़े बेटे के पास पहुंच गए. इस बीच उसके चेहरे का पीलापन और भी बढ़ गया था. देह कमजोर होकर चारपाई से जा लगी थी. उस समय वह चारपाई पर पड़ा था. उसकी पत्नी सिरहाने बैठकर पंखा झल रही थी. वैद्य जी के पहुंचते ही वह रोने लगी. उसे ढांढस बंधाते हुए वैद्य जी बराबर में पड़ी चौकी पर बैठ गए.

'घबराओ मत, इनके उपचार के लिए मैंने बड़े वैद्य जी की पोथियों को छान मारा. और कुदरत का करिश्मा देखिए कि आज से पचास साल पहले ठीक ऐसा ही मामला बड़े वैद्य जी के सामने भी आया था. तब उन्होंने मिश्री पाक द्वारा रोगी का उपचार किया था. तीसरे ही दिन वह रोगी दौड़ लगाने लगा था.'

'मिश्री पाक?' बड़े बेटे की पत्नी ने कहा, 'इस बारे में मैंने कभी नहीं सुना.'

'सुनती कैसे बेटी. बड़े वैद्य जी तो तेरे जन्म से पंद्रह वर्ष पहले ही स्वर्ग सिधार चुके थे. उनके बाद न तो किसी की निगाह में ऐसा विचित्र रोग आया, न कोई ऐसे उपचार के बारे में सोच ही पाया. पर एक समस्या है, मिश्री पाक बनाने की विधि बहुत जटिल है, बेटी!'

'आप कहें तो वैद्य जी. इस रोग से छुटकारा पाने के लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूं.'

'बताऊंगा? मैंने तुम्हारे छोटे भाई को भी बुलवाया है. वह बस आता ही होगा.'

उसी समय सेठ के छोटे बेटे ने प्रवेश किया. तब वैद्यजी ने बताने लगे, 'मिश्री पाक बनाने के लिए परस्पर विपरीत दिशा में स्थित दो गांवों के कुओं का जल लाना होगा. शर्त यह है कि उन कुंओं से पहले किसी ने एक भी बूंद जल न लिया हो. मुझे तैयारी करने में पंद्रह दिन लगेंगे. उससे पहले तुम दोनों भाइयों को जल लेकर पहुंचना होगा.'

दोनों भाई जाने लगे तो वैद्य जी ने कहा, 'एक बात और ध्यान से सुनो, जल लाने के लिए तुम दोनों अलग-अलग दिशा में प्रस्थान करोगे और जब तक निवासे कुंए का जल नहीं मिल जाता, तब तक आपस में कोई संपर्क नहीं रखोगे.'

'मेरी समझ में आपकी कोई बात नहीं आ रही.' जाने से पहले छोटे भाई ने कहा,

'लेकिन मेरी खुशी बड़े भइया को स्वस्थ देखने में है. इसलिए जैसा आप चाहते हैं, वही होगा.'

इसके बाद बड़े भाई ने पूर्व की दिशा पकड़ी. छोटा भाई पश्चिम की ओर चल पड़ा. पंद्रह दिन बाद हाजिर होने को कहकर वैद्यजी अपने घर की ओर प्रस्थान कर गए.

ठीक पंद्रहवें दिन पहले बड़े भाई ने प्रवेश किया. उसकी हालत और भी बिगड़ चुकी थी. चेहरा धूप से काला पड़ चुका था. उसके अवसादग्रस्त चेहरे से कोई भी अनुमान लगा सकता था कि मौत उसके चेहरे पर नाच रही है. आते ही वह धम से चारपाई पर पड़ गया.

'मिश्री पाक के लिए सारी सामग्री तैयार है...निवासे कुंए का जल मिला?' वैद्यजी ने प्रवेश करते हुए पूछा.

'जाने दीजिए. मैं जानता हूं कि अब कुछ नहीं हो सकता. अब केवल मौत ही मुझे इस बीमारी से छुटकारा दिला सकती है.' यह सुनते ही उसकी पत्नी की रुलाई फूट गई.

'निराश क्यों होते हो, तुम्हारे रोग में मिश्री पाक रामवाण औषधि है. खाते ही चंगे हो जाओगे. तुम्हारा छोटा भाई भी आता ही होगा. तुम फटाफट जल दो ताकि मैं मिश्री पाक तैयार कर सकूं.'

'कहा नहीं कि अब कुछ नहीं हो सकता,' बड़े बेटे के स्वर में छिपी निराशा बोल उठी. निवासे कुंए का जल लेने के लिए मैं पूर्व दिशा में पूरे सौ कोस तक गया. एक-एक गांव छान मारा. मगर कहीं भी ऐसा कुंआ नहीं मिला, जो निवासा हो, जिसके जल को पहले किसी ने प्रयोग न किया हो. इसलिए मैं मान चुका हूं कि अब मेरी मौत पक्की है. वही मुझे इस लाइलाज बीमारी से मुक्ति दिला सकती है.'

यह सुनकर बड़े की पत्नी जोर-जोर से रोने लगी. उसी समय सेठ के छोटे बेटे ने घर में कदम रखा. उसके सिर पर घड़ा था. देह सिर से पांव तक तर, चेहरे पर थकान के भाव थे, पर मंजिल तक पहुंचने का उल्लास भी कम नहीं था'माफ करना वैद्य जी, मैं आ ही रहा था कि एक व्यापारी टकरा गया. दिसावर में व्यापार जमाने की बात करने लगा. उससे बात करने में थोड़ी देर हो गई. मैं निवासे कुंए का जल ले आया हूं. कम हो तो चिंता मत करना. जितना कहोगे, और मंगवा दूंगा.'

'तुम कहां से ले आए? तुम्हारे बड़े भाई को तो सौ कोस तक एक भी निवासा कुंआ नहीं मिला.' वैद्य जी ने हैरानी जताई.

इसपर छोटा बेटा मुस्करा दिया, बोला'मैं जानता था कि अगर कुंआ है तो वह निवासा क्यों होगा. मुझसे पहले तो किसी न किसी ने उससे जल लिया ही होगा. इसलिए ऐसे कुंए की खोज में जाना ही बेकार था.'

'फिर तुमने क्या किया?'

'करना क्या था. पंद्रह दिनों तक व्यापार से अलग रहना भी उचित नहीं था, इसलिए

मैंने पश्चिम दिशा में जो भी पहला गांव पड़ा, वहीं कुंआ खुदवाना शुरू कर दिया. उसी गांव में टिककर अपना काम भी देखता रहा. आज सुबह जैसे ही पानी निकला, सबसे पहले आपके लिए ले आया.'

'शाबाश बेटा! मैं जानता था कि तुम यही करोगे.' वैद्य जी बोले. उसके बाद वे बड़े बेटे की ओर मुड़कर कहने लगे, 'देखा, भाषा तो एक माध्यम होती है. जरूरी नहीं कि हम जो कहना चाहते हैं, उसको ठीक-ठीक शब्दों में व्यक्त कर ही सकें. मन में छिपी बात को बाहर लाने में कभी-कभी भाषा भी पीछे रह जाती है. उस समय शब्दों का सीधा अर्थ न लेकर उनके निहितार्थ को पकड़ना पड़ता है. जो सिर्फ शब्दों के प्रकट अर्थ के फेर में रहते हैं, वे अक्सर नाकाम जाते हैं. मरने से पहले बड़े सेठजी ने जो तुमसे कहा था, उसका अभिप्राय...'

'रहने दीजिए वैद्य जी, मुझे अपनी गलती का एहसास हो चुका है.' बड़े भाई ने कहा. उसके बाद वह संभलने लगा. कुछ दिनों के बाद उसका व्यवसाय भी पटरी पर आने लगा.

'कुछ समझीं...!' कहानी पूरी करने के बाद टोपीलाल ने निराली से पूछा.

'और नहीं तो क्या धरती पर तुम्हीं अकेले समझदार हो.' कहकर निराली हंस दी, 'बहुत देर हो चुकी है. अब मैं चलूंगी. मां घर पहुंचने ही वाली होगी.'

'मैं भी चलता हूं. बस्ती के बच्चे इधर-उधर भटक रहे होंगे. किसी को कुछ हो गया तो मां डांटेगी.' टोपीलाल चलने को हुआ. तभी पीछे से निराली ने टोक दिया

'सुनो!'

'राह चलते को टोकना अच्छा नहीं होता, बात क्या है?' टोपीलाल ने नकली गुस्से का प्रदर्शन किया.

'आज के बाद किसी से यह मत कहना कि तुम्हें कहानी सुनाना नहीं आता. तुम्हारी मां बहुत बड़ी किस्सागो होंगी. पर तुम भी कुछ कम नहीं हो. आगे मां जो भी कहानी सुनाए, वह मुझे जरूर सुनाना.'

'कहानी को सुनना-कहना जितना आसान है, उसको गुनना उतना ही कठिन. कभी-कभी तो कई दिन, बल्कि महीनों निकल जाते हैं कहानी की गहराई तक पैठने में, फिर भी उससे पेश नहीं जाती. हर बार कुछ न कुछ छूट ही जाता है.'

कहकर टोपीलाल पलटा और तेज कदमों से अपने घर की ओर चल दिया.

कहानी सुनने से मुश्किल होता है, कहानी को गुननाक्या टोपीलाल ने गलत कहा था?

*

बिलकुल नहीं, टोपीलाल ने जो कहा, वह मां के मुंह से कई कहानियां सुनने और गुनने के बाद ही कहा था. उसको हमेशा लगता कि हर कहानी के पीछे एक कहानी होती है.

उस तक तभी पहुंचा जा सकता है, जब कहानी को गुनने की कला भी आती हो. पर आदमी चाहे कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो. कहानी को एक बार में गुनना कहां संभव हो पाता है! यह प्रक्रिया तो हर समय चलती रहती है. कभी मंद होती है, कभी तेज. कभी लगातार सोचने पर भी कोई परिणाम नहीं निकलता तो कभी भीतर से ज्ञान का स्रोत अचानक फूट पड़ता है.

किसी कहानी को सुनने-गुनने के बाद आदमी को लग सकता है कि वह उसके बारे में पर्याप्त बातें जान चुका है. लेकिन अगली बार जब भी वह कहानी से गुजरता है, वही कहानी उसको एक झटका दे सकती है, चौंका सकती है. कुछ इतना कि आदमी कह उठे

'अरे! इस बारे में तो मैंने सोचा ही नहीं था...यह तो एकदम अनूठी बात हुई, वाह!'

शब्दों को गुनना...खुद को उसके अर्थ से पूरी तरह परचाना...उसकी पर्तों को खोलना, उनकी तह तक जाना बड़ा ही कठिन, एक चुनौती की तरह होता है. निराली को कहानी सुनाने के बाद टोपीलाल वहां से उठा तो कुछ इसी प्रकार सोच रहा था. जब उसने मां मुंह से यह कहानी सुनी थी, तब भी इसने उसको प्रभावित किया था. कहानी के बाद बातों-बातों ने मां ने उसके बारे में समझाया भी था. उसका प्रभाव उसके दिलो-दिमाग पर अभी तक था.

आज, निराली को कहानी सुनाने के बाद उसको लगा कि आज से पहले उसने कहानी को सुना-भर था, गुन नहीं पाया था.

सेठ की कहानी का अभी तक उसके लिए यही संदेश था कि आदमी को बड़े से बड़ा सपना देखना चाहिए. ऊंची उड़ान भरने का मनोरथ पालना चाहिए. पर आज एक और पर्त खुली कि भाषा केवल एक माध्यम होती है. वह अपने शब्दों द्वारा सीधे-सीधे जो संदेश देना चाहती है, जरूरी नहीं कि उसका मकसद वही हो. वह एकदम अलग भी हो सकता है.

कि शब्द प्याज के छिलकों की भांति होते हैं. कभी हम उनके स्वाद का एक अंश जान पाते हैं, कभी उनकी गंध का कोई एक अंश. कभी उनके स्वाद और गंध के थोड़े-थोड़े अंश से हमारा परिचय हो जाता है. किसी भी क्षण में हम न प्याज के स्वाद को पूरी तरह भोग पाते हैं, न उसकी गंध को. यही हमारी सीमा है. यही हमारी भाषा की भी सीमा है. उस समय बाकी का काम हमें अपने अनुभव और विवेक से चलाना पड़ता है.

कि शब्दों का मतलब निकालना केवल शब्दों पर नहीं, उन्हें सुनने-पढ़ने वाले पर भी निर्भर होता है. कि शब्दों में छिपा अर्थ तो अधूरा होता है. श्रोता और पाठक उसको पूरा करते हैं. अपनी-अपनी तरह से, अपने अनुभव और विवेक के अनुसार.

कभी-कभी टोपीलाल को लगता है कि उसकी मां उसको यूं ही उलझा देती है. कभी सोचता कि अनपढ़ मां के दिमाग में इतनी भारी-भरकम बातें कहां से आ जाती हैं!

'जिंदगी के अनुभव से?' उसे याद आता है, मां ने एक बार यही कहा था. तो क्या

ऐसा नहीं हो सकता कि कोई बात पढ़ते या सुनते ही उसके सभी अर्थ सीधे दिमाग में उतरते चले जाएं. सोचने-समझने में एक भी पल गंवाए बिना. गुनने की तो जरूरत ही न पड़े. कितना अच्छा हो अगर उसके पास यह शक्ति आ जाए.

टोपीलाल फिर कल्पना में उड़ने लगा. चलते-चलते उसको लगा कि उसके पास एक ऐसी ताकत आ चुकी है, जिससे वह एक झटके में चीजों की गहराई में उतर सकता है. पलक झपकते बड़ी-बड़ी पहेलियां हल कर सकता है. मां और बापू हैरान हैं. मां की प्रसन्नता का तो ठिकाना ही नहीं है. लोग उसके पास बड़ी-बड़ी पहेलियां लेकर आते हैं. जिन्हें वह चुटकी बजाते हल कर देता है.

टोपीलाल के पास चीजों को समझने की जादुई ताकत है, चारों ओर यह बात फैल जाती है. यह विचार ही टोपीलाल के चेहरे को उजास से भर देता है.

घर लौटा तो बापू सामने ही दिख गए. चारपाई पर लेटे हुए. मां उस समय काम पर थी. पता चला कि तबियत खराब होने के कारण बापू ने आधे दिन की छुट्टी की है. टोपीलाल के दिमाग में विचारों का तांता लगा था. अपने पिता से वह कम ही बोलता था. कुछ कहना होता तो मां के माध्यम से कहलवा देता. पर उस समय वह सीधे उन्हीं के पास पहुंच गया

'बापू, अनुभव क्या होता है?' उसने दिमाग में चल रही उथल-पुथल का समाधान चाहते हुए कहा.

'चल हट! न जाने कहां-कहां अपना दिमाग दौड़ाता रहता है...!' आशा के विपरीत बापू ने डपट दिया. टोपीलाल का मन बुझ-सा गया. वह जाने को हुआ कि पीछे से बापू की आवाज कान में पड़ी

'छोटी उम्र के बच्चों के साथ रहकर तू अभी तक खुद को बच्चा ही समझता है. जबकि तेरी उम्र के लड़के काम-धंधे में अपने मां-बाप का हाथ बंटाते हैं. खाली दिमाग शैतान का घर. कल से मेरे साथ चलना, कहीं हल्का-फुल्का काम दिलवा दूंगा.'

जिस बहुमंजिला इमारत का निर्माण चल रहा था, उसका मालिक इमारत के चारों ओर पार्क बनवा रहा था. उसके लिए घास बिछाने और पेड़-पौधे लगाने का काम चल रहा था. टोपीलाल रोज देखता कि माली के साथ उसका बेटा भी पौधों की देखभाल करने, पानी लगाने के लिए आता है. उसको काम करते देखना उसको बुरा नहीं लगता.परंतु इस विचार के साथ उसका दिल बैठता चला गया. इसलिए नहीं कि वह काम से जी चुराता था. इसलिए कि जिंदगी को लेकर उसका सपना कुछ और ही था.

'मैं तो पढ़ना चाहता हूं बापू!' टोपीलाल ने अनुभव किया कि उसकी भाषा में तल्खी थी. इतना जोर देकर उसने बापू से कभी बात नहीं की थी. मां सुन लेती तो उसकी खूब खबर लेती. अपनी भाषा की गरमी से वह खुद ही घबरा गया; और बापू की प्रतिक्रिया जाने बिना बाहर निकल आया.

शाम हो चुकी थी. किंतु अंधेरा अभी दूर था. वह सीधा सड़क पर पहुंचा और निरुद्देश्य-सा एक ही दिशा में बढ़ने लगा. अपनी ही धुन में. बढ़ता गया, बढ़ता ही गया. आगे और आगे. स्ट्रीट लाइटें जलीं तो उसको एहसास हुआ कि वह घर से काफी आगे आ चुका है. उसका मन घबराने लगा.

वापस मुड़ते समय टोपीलाल की निगाह पार्क के बीचों-बीच बनी एक मूर्ति पर पड़ी. उसको कुछ दिन पाठशाला जाने का अवसर मिला था. उस अवधि में उसने अक्षरों को जोड़ना सीखा था. अपने उसी बोध के सहारे टोपीलाल मूर्ति के नीचे खुदे अक्षरों को बांचने का प्रयास करने लगा.

'ह..मा..रे...रा..ष्ट्र..पति....डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन!' अपनी इस कोशिश पर वह स्वयं ही इतरा गया. मूर्ति भव्य थी. कुछ देर तक वह अपलक उसको देखता रहा. फिर वापस लौट पड़ा। घर पहुंचा तो मां काम से लौट चुकी थी. संभव है, इतनी देर तक घर से बाहर रहने पर मां उसको डांटे. इसलिए भीतर कदम रखने से पहले उसके कदम ठिठक गए. सहसा उसके कानों में पिता की आवाज पड़ी. वे उसकी मां से कह रहे थे

'लगता है कि वह नाराज है...!'

'ऐसा क्यों लगता है तुम्हें?'

'तबियत ठीक न होने के कारण मैं परेशान था. उसने मुझसे कुछ पूछा तो मैंने डांट दिया. सच तो यह है कि मैं अपनी कमजोरी छिपा नहीं पाता. जब भी वह मुझसे कोई प्रश्न करता है तो मुझे अपना अनपढ़ होना याद आ जाता है; तब मैं आपा खोकर झुंझला पड़ता हूं.'

'टोपीलाल पढ़ना चाहता है, और आप जानते हैं कि इसमें कोई बुराई नहीं है.'

'बुराई कौन कहता है. बल्कि मैं तो सच्चे दिल से चाहता हूं कि वह पढ़े. वही क्यों बस्ती के सारे बच्चे पढ़ें. पढ़-लिखकर कामयाब इंसान बनें. पर मैं भी क्या करूं. टोले के मिस्त्री और मजदूर, औरत और मर्द सभी मुझपर भरोसा करते हैं. हर फैसले के लिए मुझे आगे कर देते हैं. ऐसे में मुझे वही निर्णय लेना पड़ता है, जिसमें पूरे टोले का हित, सभी की मर्जी हो.

अब जैसे इसी इमारत के ठेके को लो. मैंने सोचा था कि इस बार किसी स्कूल के निकट लंबा काम पकड़ूंगा. जहां हमारे बेटे की पढ़ाई का पक्का इंतजाम हो सके. उससे पहले ही इस बिल्डिंग का मालिक प्रस्ताव लेकर आ गया. मैंने टोले में बातचीत की तो सभी इस काम को पकड़ने की जिद करने लगे. दो-तीन वर्ष तक लगातार चलने वाले काम को वे लोग छोड़ना ही नहीं चाहते थे। मुझे मजबूर होकर उन्हीं की बात माननी पड़ी. ये बातें मैं टोपीलाल को कैसे समझाऊं!'

'अपना टोपीलाल इतना नासमझ नहीं है...' बाहर खड़े टोपीलाल ने सुना, मां कह रही थी. उसके बाद वहां एक पल भी खड़े रहना उसको भारी पड़ने लगा. वह दौड़कर भीतर

गया और बापू की गोद में पड़ गया. बिना कुछ कहे बापू उसके बालों में हाथ फिराने लगे। मां ने खाना लगाया तो पिता-पुत्र ने एक ही थाली में साथ-साथ भोजन किया.

'यदि भावना सच्ची तथा उसका प्रवाह तीव्र हो तो संवाद के लिए शब्दों और वाक्यों की जरूरत नहीं पड़ती; चुप्पी की भी अपनी स्वतंत्र भाषा होती है.' बापू की गोदी में पड़े-पड़े टोपीलाल को एकदम नया बोध हुआ.

*

हर नई जानकारी ज्ञान के अनगिनत दरवाजों को खोल जाती है.

टोपीलाल सोने चला तो एक और एहसास हुआ. उस रात उसको गहरी नींद आई. सुबह आंख खुलने से पहले उसने सपना देखा कि राष्ट्रपति महोदय उसको अपने हाथों से पुस्तक सौंप रहे हैं. उनकी कद-काठी हू-ब-हू वैसी ही थी, जैसी उसने मूर्ति में देखी थी. आंखें खुलीं तो सपने के प्रभाव से उसका शरीर खिला हुआ था. चेहरे पर चमक थी, मन में उमंग. चाल में मस्ती.

वह जल्दी से जल्दी निराली से मिलना चाहता था. ताकि उसको अपने सपने के बारे में बता सके. बता सके कि उसके बापू उतने बुरे और लापरवाह नहीं हैं, जितना वह कहता आया है. कि बापू के बारे में वह अब तक जो सोचता था, जितनी बातें उनके बारे में बताईं हैं, वे कितनी गलत, कितनी झूठ हैं. इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उसका दिमाग अभी कितना हल्का सोचता है. कि उसको पढ़ाई की कितनी जरूरत है. कि किसी भी बालक के लिए पढ़ाई कितनी जरूरी होती है. कि पुस्तकें ही प्राणीमात्र को मनुष्यता से परचाती हैं.

देर तक वह सड़क पर टकटकी बांधे देखता रहा. निराली नहीं आई. उसके दिमाग में तरह-तरह के सवाल उठने लगे. वह उठा और उस स्थान की ओर बढ़ गया, जहां निराली की मां अपनी गुमटी लगाती थी. वहां जाने के बाद पता चला कि उसकी मां की तबियत ठीक नहीं. आज नहीं आ सकी.

बोझिल कदमों से अनमना-सा वह वापस लौट आया. लौटते हुए फिर उसी पार्क के करीब से गुजरा. मूर्ति को देखकर फिर उसके कदम फिर ठिठक गए. वह एकटक उसी की ओर देखने लगा. इतना डूब गया कि अपनी सुध ही न रही. सहसा सामने से एक वाहन आता हुआ दिखाई पड़ा. उससे बचने के लिए वह पीछे हटा ही था कि सहसा उससे कोई टकराया. वह संभल पाए कि...

साइकिल पर चिट्ठियों, पत्रिकाओं का बंडल ले जाता हुआ डाकिया उससे टकराया था. इसके साथ ही उसकी चिट्ठियां धूल चाटने लगीं. डाकिया नीचे उतरकर चिट्ठियों को समेटने लगा. टोपीलाल का कोई दोष नहीं था. फिर भी खुद को बीच रास्ते में खड़े होने का कुसूरवार मानते हुए वह चिट्ठियों को समेटने में डाकिया की मदद करने लगा.

'क्या तुम्हें घर पर कोई काम नहीं है, जो सड़क पर निठल्ले खड़े हुए हो?' डाकिया ने कहा, 'इतनी सारी डाक बांटनी है. लोग इंतजार कर रहे होंगे.'

टोपीलाल ने डाकिये की बात पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की. वह चुपचाप सड़क पर बिखरे पड़े पत्रों को समेटने में लगा रहा. जब भी कोई नया पत्र उसके हाथ में आता तो उसका दिल मखमली एहसास से भर जाता. आंखों में इंद्रधनुष की आभा उतर आती. उस काम में उसे खूब मजा आया.

'सभी को डाकिये का इंतजार रहता है. मैं बड़ा होकर डाकिया ही बनूंगा.' टोपीलाल के दिमाग में आया. अपने सोच पर वह खुद ही मुस्करा दिया.

डाकिया को पत्र बांटने की जल्दी थी. पत्रों को समेटकर वह जल्दी-जल्दी मंजिल की ओर बढ़ गया. टोपीलाल उसको साइकिल पर जाते हुए देखता रहा. फिर घर जाने की याद आई तो पलटा. सहसा जमीन पर गिरे पेन पर उसकी नजर पड़ी. वह चौंका. उसने डाकिया को अपना पेन ले जाने के लिए आवाज भी दी. किंतु तब तक वह एक गली में मुड़ चुका था. टोपीलाल ने अनमने भाव से कलम उठा ली.

'वह रोज इसी रास्ते से गुजरता होगा...कल मुझे कलम लौटाने के लिए दुबारा यहीं आना पड़ेगा...' टोपीलाल ने वापस लौटते हुए सोचा.

'मामूली कलम ही तो है, न लौटाऊं तो भी क्या है!' अगले ही पल उसके दिमाग में आया. मगर अपने इस स्वार्थी सोच पर उसको आत्मग्लानि होने लगी.

'चीजों को उनके मूल्य के बजाय उनकी उपयोगिता से आंकना चाहिए'उसके मास्टरजी ने एक बार कहा था. उनकी बात टोपीलाल को जंची थी. इसी कारण वह उसको आजतक याद है. तब टोपीलाल ने निर्णय लिया कि कल वह कलम लौटाने के लिए इस ठिकाने पर दुबारा आएगा.

'कम से कम एक दिन तो यह कलम मेरे पास रहेगी ही.' टोपीलाल ने सोचा.

इस विचार के साथ उसका मन एक अजीब-सी गर्माहट से भर गया. उसके हाथ कलम को आजमाने के लिए मचल उठे. कागज के अभाव में कलम को हथेली पर चलाकर उसकी जांच की. उसको फर्राटेदार स्थिति में चलते देख टोपीलाल को कुछ तसल्ली हुई. लेकिन मन न भरा. घर लौटते समय रास्ते में पड़े एक साफ-सुथरे कागज पर उसकी नजर पड़ी तो उसने उसको फौरन उठा लिया. टोपीलाल ने कागज पर पेन को आजमाना चाहा. मगर उसके हाथ ठिठक गए

'इस सुंदर कागज को इस तरह खराब करना ठीक नहीं है.' सोचते हुए उसने सड़क किनारे पड़ा कागज का दूसरा टुकड़ा उठाया. उसपर कलम को रगड़ा देखा. गोल-मोल रेखाओं ने उसको फिर आश्वस्ति दी कि वह ठीक है.

अपने ठिकाने पर वापस पहुंचने तक टोपीलाल का मन इस सोच से भरा-भरा रहा कि अब उसके पास कागज और कलम है. कलम भले ही एक दिन के लिए हो, मगर कागज

उसका अपना है. रास्ते-भर वह कागज उसे मूर्ति के हाथ में लगी पुस्तकों याद दिलाता रहा. उसके एहसास ने टोपीलाल को इतना जकड़ा कि रास्ते में एक-दो रद्दी कागज उसको दिखाई पड़े तो उसने उन्हें फौरन उठा लिया.

'हर चीज अपने सदुपयोग की चाहत रखती है.' पंद्रह अगस्त के दिन भाषण देते हुए प्रिंसीपल साहब ने कहा था. उस पाठशाला में वह कुछ ही महीने पढ़ पाया था. क्योंकि इस बीच उसके पिता स्कूल का काम निपटा चुके थे. उन्हें अपने टोले के साथ दूसरी जगह काम मिला. नया स्थान स्कूल से इतनी दूर था कि वहां पढ़ने जा ही नहीं सकता था. पढ़ाई बीच में छूटने पर वह कितना रोया था, उसको आज भी अच्छी तरह याद है.

इस कागज-कलम का कैसे सही उपयोग हो? टोपीलाल अपनी बुद्धि को भरसक दौड़ाने लगा. इसी सोच में डूबा वह अपने ठिकाने पर लौटा. बाकी बच्चों को चुपचाप खेलता हुआ देख उसको तसल्ली हुई. इमारत के लिए बनी पानी की टंकी के नीचे अपेक्षाकृत ठंडक रहती थी. वहां एकांत भी था. वह टंकी के लिए बने स्तंभ का सहारा लेकर बैठ गया. कलम हाथ में थाम ली. अभ्यास के लिए पहले पुराने कागजों पर सही-सही अक्षर बनाने का प्रयास किया. दो-चार शब्द लिखे. शब्दों को वाक्य में ढालने का अभ्यास किया. इस कोशिश में पुराने सभी कागज समाप्त हो गए.

कुछ और कागजों की खोज में वह दुबारा सड़क की ओर दौड़ पड़ा. फिर उठाए गए कागजों पर देर तक कलम साधने का अभ्यास करता रहा. इस बीच सूरज सिर पर तना, गर्माया और फिर ठंडा होने लगा.

'यह कागज अपने सदुपयोग की प्रतीक्षा में है.' साफ कागज को टकटकी बांधकर देखते समय टोपीलाल के मन में कौंधा. लेकिन सदुपयोग कैसे हो, इस बारे में वह कोई निर्णय न कर सका. देर तक वह उसी स्थान पर बैठा रहा. दोस्त उसको लिवाने आए तो उसने उनकी ओर कोई ध्यान न दिया. वे सभी खेल में डूब गए.

सहसा एक विचार उसके दिमाग में कौंधा. किंचित असमंजस के बीच उसने कागज सामने फैलाया. मस्तिष्क को एकाग्र किया. टूटे-फूटे अक्षरों के साथ कलम अपने आप आगे बढ़ने लगी

'श्रीमान जी!

मेरा नाम टोपीलाल है. मेरे पिता राजमिस्त्री हैं. वे बड़ी-बड़ी इमारतें बनाते हैं. जब तक इमारत का काम पूरा होता है, हम आमतौर पर उसमें रहते हैं. इमारत तैयार होने के बाद, उसको मालिक के हवाले कर हम नए ठिकाने की ओर बढ़ जाते हैं. एक और इमारत बनाने के लिए.

मां कभी-कभी मुझे एक गरीब बंजारे की कहानी सुनाया करती है. उसके पास कुछ भेड़ें थीं. वह बहुत ही ईमानदार था. और मेहनती भी. फिर भी अपने परिवार का पेट बड़ी मुश्किल से भर पाता था. वह खेती करना चाहता था. उसका यह सपना कभी फला नहीं.

क्योंकि उसको शाप लगा था, कहीं न टिकने का. कुछ ऐसी ही जिंदगी हमारी भी है.

पिता जी कहते हैं कि हमारा एक गांव भी है. पर मैंने उन्हें कभी गांव जाते नहीं देखा. बताते हैं कि वहां एक महाजन के पास हमारी जमीन गिरवी पड़ी है. हर साल वह कुछ न कुछ रुपये गांव भिजवाते रहते हैं, फिर भी कर्ज है कि पीछा ही नहीं छोड़ता. मैं पिता जी और मां को जमीन के बारे में बातचीत करते हुए सुनता हूं. जमीन न छुड़ा पाने के कारण पिता जी बहुत दुःखी रहते हैं.

मेरी मां भी राजमिस्त्री है. देश की शायद सबसे पहली महिला राजमिस्त्री. पिता मानते हैं कि उनके टोले में कोई भी काम के मामले में मां की बराबरी नहीं कर सकता. जब भी अच्छे काम की जरूरत हो, उसके लिए या तो उन्हें खुद आगे आना पड़ता है, या फिर मां को. पिता जी मां की झूठी तारीफ नहीं करते. वह है ही ऐसी. बल्कि इससे भी कहीं ज्यादा.

छिः छिः! मेरा लेख कितना गंदा है. मैं इसको सुधारना चाहता हूं. पर मेरे पास न कागज हैं, न कलम. यह कागज तो बस भर ही चुका. कलम कल इसके मालिक को सौंप दी जाएगी. परसों बापू कह रहे थे कि वे मुझे पढ़ाना चाहते हैं. मैं उनकी मजबूरी जानता हूं. जिस इमारत को वे बनाने में जुटे हैं, वह दो साल में पूरी होगी. मुझे उस दिन का इंतजार है, इसलिए कि मैं पढ़ना चाहता हूं.

टोपीलाल

इन शब्दों को जोड़ने में टोपीलाल को करीब एक घंटा लग गया. एक-दो जगह काट-छांट भी करनी पड़ी. पर अंत में उसने अपने विचारों को कागज पर उतार ही दिया. तत्पश्चात उसने कागज को सहेजकर रख लिया. उस कागज का क्या हो, वह सोच ही नहीं पाया. कुछ देर बाद वह वहां से उठा और घर की ओर चल दिया. रास्ते में उसको यह एहसास बना रहा कि वह हवा में तैर रहा है. मन-मयूर नाचता ही रहा.

रात को सोने चला तो भी बहुत प्रसन्न था. मां ने कारण जानना चाहा तो वह मुस्कुरा दिया. कागज उसने मोड़कर तकिये के नीचे रख लिया. रात को एक बार आंखें खुलीं तो उसको हाथ से सहलाया. मन हुआ कि दीया जलाकर एक बार फिर अपनी लिखी इबारत पर नजर डाल ले

'मेहनती लोगों को नींद से जगाना पाप होता है'मां और पिताजी की ओर देखकर उसके दिमाग में आया. उसने अपना इरादा बदल दिया.

अगले दिन जैसे ही मां और बापू काम के लिए रवाना हुए, वह डाकिया की कलम लौटाने के लिए निकल पड़ा. साथ में उसने वह कागज भी सहेज लिया, जिसपर पिछले दिन जतन से कुछ अक्षर उकेरे थे. रास्ते में उसने रुक-रुककर कई बार उस पत्र को पढ़ा. सोचा कि आगे क्या किया जाए. पर बेकार. दिमाग कोई निर्णय ले ही नहीं पा रहा था.

'अरे! आज तू फिर यहां, कल की तरह क्या आज भी मेरी डाक को गिरवाएगा?' साइकिल पर आते डाकिया ने उसको देखकर दूर ही से कहा.

'आपका पेन!' बिना कुछ कहे टोपीलाल ने डाकिया का पेन उसकी ओर बढ़ा दिया.

'अरे वाह! कल मैंने इसे काफी खोजा था. अब याद आया कि यह यहीं पर छूट गया था।' पेन देखकर वह बोला। सहसा उसकी आंखों में विस्मय-भाव उभरने लगे, 'किंतु यह पेन तो बहुत मामूली है. मुश्किल से तीन-चार रुपये का. माना कि मुझे इसके गुम होने पर भी अफसोस हुआ था. मगर तुझे इसके लिए यहां आने की क्या जरूरत थी!' टोपीलाल चुप। क्या कहे, कुछ समझ ही नहीं पाया।

'रहता कहां है?' डाकिया ने खुशी और संतोष-भरे शब्दों में पूछा. टोपीलाल ने चुप्पी को सहेजते हुए अपने ठिकाने की ओर इशारा कर दिया.

'हूं, अच्छी बात है. हालांकि आजकल कुछ लोग इसे कतई आवश्यक नहीं मानते. पर मुझे अब भी यही लगता है कि ईमानदार होना बहुत अच्छी बात है. मेरे पास समय होता तो इसपर और भी बातें करता. तुम जैसे बच्चों से बात करने में तो मुझे बहुत ही मजा आता है. लेकिन समय ही नहीं मिलता. काम ही ऐसा है. प्रतिदिन कई किलो डाक बांटता हूं. फिर भी हर दिन ढेर सारी डाक आ जाती है. इतनी फुर्सत भी नहीं कि किसी के साथ जी खोलकर बात कर सकूं. पर कोई बात नहीं, आज नहीं तो कल, कभी न कभी तो इतना समय जरूर मिलेगा, जब हम दोनों अच्छे दोस्तों की तरह बैठकर देर तक बतिया सकेंगे. अच्छा, अब मैं चलता हूं. देर हुई तो गुर्राते सूरज का कोप चांद पर झेलना पड़ेगा. और आज तो जल्दबाजी में मैं अपनी टोपी भी घर भूल आया हूं।'

डाकिया को मुड़ते देख टोपीलाल को अचानक कुछ सूझा

'जरा अपना पेन दिखाएंगे?'

'अब क्या है? मुझे पहले ही काफी देर हो चुकी है।' कहते हुए डाकिया ने पेन टोपीलाल की ओर बढ़ा दिया। पेन लेकर टोपीलाल सड़क किनारे घुटनों के बल बैठ गया। फिर डाकिया से नजरें बचाते हुए उसने जेब से कागज निकाला और उसपर झुक गया।

'इन चिट्ठियों में न जाने कितने जरूरी संदेश छिपे हों...इस तरह देर करना तो अपनी ड्यूटी के साथ नाइंसाफी होगी। मैं चलता हूं. पेन तुम्हारे लिए जरूरी है तो रख लो।' कहते हुए डाकिया ने हैंडल संभाला। पैडल मारने ही जा रहा था कि टोपीलाल फिर सामने आ गया

'लीजिए!' कहते हुए उसने पेन आगे बढ़ाया। उस समय वह बुरी तरह सकुचाया हुआ था। डाकिया ने हाथ बढ़ाया। तत्क्षण उसने अपना बायां हाथ आगे कर उसमें छिपाया हुआ कागज डाकिया को थमा दिया। उस समय उसका दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। सांसें घुटी जा रही थीं। पल-पल खड़ा रहना भारी साधना लग रही थी।

'यह क्या है?' डाकिया ने कागज को हाथ में लेकर उल्टा-पलटा. फिर कागज के

पीछे लिखे शब्दों को पढ़ा. टूटे-फूटे अक्षरों में वहां लिखा था'हमारे राष्ट्रपति जी...'

'क्या मैं इसे श्रीमान् राष्ट्रपति महोदय के नाम तुम्हारी ओर से चिट्ठी समझूं.' डाकिया ने गर्दन ऊपर उठाई. पर टोपीलाल वहां कहां? वह तो कभी का वहां से भाग छूटा था. हालांकि ऐसा कुछ नहीं था। परंतु उसको लगा कि डाकिया उसको आवाज देकर रोक रहा है। साइकिल पर बैठकर उसका पीछा कर रहा है। साइकिल के पैडल की आवाज उसके कानों में गूंजती रही। काफी देर तक वह भागता ही रहा। पलटकर देखने की हिम्मत ही न पड़ी.

अज्ञान डर का स्वाभाविक उत्प्रेरक है...बचपन की सरलता डर को भी रचनात्मक बनाने का सामर्थ्य रखती है।

*

सोच से बड़ा स्वप्न मन में भूचाल लाए बिना नहीं रहता।

टोपीलाल को घर पहुंचने के बाद भी चैन न मिला. तरह-तरह के विचार दिमाग में आने लगे. चौकन्नी निगाह से वह बार-बार इधर-उधर देखता. जरा-सी आहट पर चौंक पड़ता. दिल जोर-जोर से धड़कने लगता. अपनी मूर्खता पर कभी हंसी आती, कभी तेज गुस्सा...राष्ट्रपति के नाम पर चिट्ठी और वह भी बिना डाक टिकट, बगैर लिफाफे के? पुलिस उसको पकड़ने के लिए आती ही होगी. कभी लगता कि पुलिस आ ही पहुंची है. वह घबराकर छिपने का ठिकाना ढूंढने लगता.

ऊपर से पत्र के अंत में वह राष्ट्रपति जी को 'नमस्ते' लिखना भी ध्यान न रहा. यह तो सरासर मूर्खता है. अपमान है उनका. राष्ट्रपति जी का पत्र पढ़ेंगे तो क्या सोचेंगे. कि कितना बेशऊर लड़का है. बड़ों के साथ व्यवहार करना भी नहीं आता. माता-पिता ने उसे कुछ सिखाया कि नहीं.

गलती मेरी, पर बदनामी तो मां और बापू की ही होगी. मां को कितना बुरा लगेगा. और बापू, हो सकता है मुंह से कुछ न कहें, पर दुःख तो उन्हें भी होगा न! लोग दोष भी उन्हीं को देंगे. बेचारे गरीब, राजमिस्त्री जो ठहरे. हाथ के कितने हुनरमंद है, यह कौन जान पाएगा? पूरी दुनिया में उनकी बदनामी होगी, सिर्फ मेरी वजह से।

फिर कागज तो उसने यूं ही लिख मारा था. यह देखने के लिए कि उसको लिखना आता भी या नहीं. जब लिख रहा था तो कहां सोचा था कि उसे राष्ट्रपति जी को भिजवाएगा ही. ऐसा वह सोच भी कैसे सकता है। वह तो जेब में रखा था. डाकिया को देखकर न जाने क्या सूझा कि पत्र उसको थमा दिया. सचमुच बहुत बड़ी मूर्खता की है उसने.

बावजूद इसके इस समय उसको इतना घबराना भी नहीं चाहिए. यह समय घबराने का है भी नहीं। उसको हिम्मत से काम लेना पड़ेगा। यह भी जरूरी नहीं है कि डाकिया बिना टिकट के उस पत्र को उसके ठिकाने तक पहुंचा ही दे. हो सकता है वह उसको

फाड़ ही डाले. जब बड़े आदमियों का पत्र समय पर नहीं पहुंचा पाता तो एक बच्चे के पत्र के लिए उसको कहां फुर्सत होगी.

अगर वह पत्र राष्ट्रपति जी के हाथों तक पहुंच ही गया तो. क्या वे उसको पढ़ेंगे? आखिर क्यों नहीं पढ़ेंगे. उस दिन भाषण में प्रधानाचार्य जी बता रहे थे कि इस देश में सभी बराबर हैं. कोई भी छोटा या बड़ा नहीं है. तब तो राष्ट्रपति जी उस पत्र को जरूर पढ़ेंगे. हो सकता है उसका जवाब भी दें.

उनका जवाब आया तो अगले पत्र में लिखूंगा कि अपने टोले में मैं अकेला ही अनपढ़ नहीं हूं. बाकी बच्चे भी हैं. जो पढ़ना चाहते हैं. मेरी मां तो फिर भी बहुत समझदार हैं. पर सभी बच्चे तो मेरे जितने भाग्यशाली नहीं हैं. उन्हें स्कूल की बेहद जरूरत है. पत्र को पढ़ते-पढ़ते जब वे उसके अंत में पहुंचेंगे. हो सकता है कि टोपीलाल नाम को पढ़कर उन्हें हंसी भी आ जाए. जैसे उस दिन जब मैं पहली बार पाठशाला गया था तो कक्षा के सारे बच्चे मेरा नाम सुनकर हंस पड़े थे. उस दिन मास्टरजी अगर उन्हें डांटते नहीं तो वे हंसते ही रहते.

फिर भी राष्ट्रपति जी को पत्र लिखने से पहले मुझे मां से जरूर पूछ लेना था. वह इतना तो बता ही देतीं कि इतने बड़े आदमी को नमस्ते में क्या लिखना चाहिए. चरणस्पर्श या हाथ जोड़कर प्रणाम. या इससे भी अधिक कुछ हो सकता है! क्या अब बात करके देखूं मां से! पर न जाने वह क्या सोचने लगे. हो सकता है कि विश्वास ही न करे कि मैं इतने बड़े आदमी को चिट्ठी लिख सकता हूं. या बुरी संभावनाएं उसको भी डरा दें.

ऊंह चिट्ठी! न लिफाफा, न डाक टिकट, न पूरा पता, न मजमून। एक मामूली कोरे कागज पर लिखे चंद अक्षरों को भला कौन चिट्ठी मानेगा. दिमाग खराब है मेरा.

पूरे दिन टोपीलाल बेचैन रहा. उल्टे-सीधे विचार दिमाग को लगातार मथते रहे. उस रात उसका न तो भोजन में मन लगा, न ही मां की कहानी में. सोने की कोशिश की तो नींद छूमंतर हो गई. जैसे पलकों पर पहरा बैठा दिया हो किसी ने. वह देर तक करवट बदलकर नींद आने का इंतजार करता रहा. मां ने कारण जानने की कोशिश की, परंतु उसने टाल दिया. बस डरे हुए बालक की तरह मां से चिपक गया.

ऐसी ही खींचातानी के बीच कब पलकें भारी हुईं, कब नींद ने मेहरबानी की, वह जान ही नहीं पाया. उस रात उसे सपने भी आए तो डरावने से. सुबह होने से पहले ही नींद अचानक टूट गई. उसके बाद उसने सोने का प्रयास किया तो नींद आंखों को भुलावा देती रही. छलावा बनकर छलती रही. जल्दी सुबह हो, करवटें बदलते हुए देर तक वह यही सोचता रहा.

छोटा हो या बड़ा, जब कोई निःकलुष मन से किसी के बारे गहराई से सोचता है तो वह कभी न कभी अपने लक्ष्य को छू ही लेता है.

*

उम्मीद के विपरीत आने वाली सुबह ताजगी से भरी थी.

माता-पिता के काम पर जाने के बाद टोपीलाल ने जल्दी-जल्दी काम निपटाया. फिर बाहर आ गया. उसको विश्वास था कि निराली उधर से जरूर गुजरेगी. कि सिर्फ उसी से वह अपने दिल की बात कह सकता है. उसको मालूम था कि निराली अब देर से आती है. मां की बीमारी के कारण घर का पूरा काम उसी को निपटाना पड़ता है.

निराली की मां अब भी अपनी गुमटी पर जाती. मां के काम पर निकल जाने के बाद जल्दी-जल्दी घर का काम समेटती. फिर कबाड़ बीनने का थैला लेकर निकल जाती. दो-ढाई घंटे तक सड़कों और गलियों की खाक छानती. रास्ते में ही कबाड़ को बेचकर घर लौटती. घर पहुंचकर जल्दी-जल्दी चूल्हा सुलगाती. फिर छोटी-छोटी रोटियां सेंकती, उसके बाद घर का बाकी काम सहेजती है.

तब तक मां के लिए रोटी पहुंचाने का समय हो जाता. खाना लेकर सड़क पर पहुंचती. रास्ते में टोपीलाल उसे मिल जाता था. दोनों साथ-साथ स्कूल तक रोटियां पहुंचाने जाते. लौटते समय निराली कुछ देर के लिए टोपीलाल के पास रुकती. दोनों बाकी बच्चों के साथ खेलते, गपशप करते. दोपहर बाद घर निराली वापस लौट आती. घर का काम समेटने. अपने धंधे के बारे में निराली ने मां को कुछ नहीं बताया था. और तो और टोपीलाल से भी छिपाकर रखा था. इस डर से कि कहीं वह मां से कह न दे.

लगभग एक घंटे की प्रतीक्षा के बाद निराली दिखाई पड़ी. तेज कदमों से चलती हुई. टोपीलाल को देखकर उसने मुस्कराने का प्रयास किया. वह आगे बढ़कर उसके रास्ते में खड़ा हो गया

'आज बहुत देर कर दी?'

'हां, लकड़ियां कुछ गीलीं थीं. खाना बनाने में ज्यादा समय लगा.' टोपीलाल को याद आया. बीती रात बूंदा-बांदी हुई थी. टोले में लोग ईंटें खड़ी करके उनके ऊपर पॉलिथीन डाल लेते थे. वह कम पड़े तो सीमेंट के खाली थैले और पुराने कपड़े सर पर छत का काम देते. यह व्यवस्था बारिश के समय धोखा देने लगती. उस समय लोग निर्माणाधीन बिल्डिंग में ही ठिकाना ढूंढते. जगह कम पड़े तो एक ही बरामदे में पचासों भर जाते. गीली लकड़ियां जलते समय धुआं करतीं. मर्द तो घूमने के बहाने बाहर निकल जाते थे. पर औरतों और छोटे बच्चों के लिए वे क्षण बहुत ही कष्टमय होते. उस समय कभी-कभी तो पूरी रात जागकर काटनी पड़ जाती थी. रात को याने बच्चे रो पड़ें तो बाकी पूरी रात बारिश थमने की उम्मीद में बितानी पड़ती.

'मुझसे कह दिया होता, मैं चार रोटियां मां से सिंकवा लेता.' टोपीलाल ने निराली का दुःख बांटना चाहा.

'कहती कब? बारिश तो रात आई थी. तेरी मम्मी तो सवेरे ही काम पर निकल जाती हैं.' कहकर निराली हंसी.

'हां, मैं भी कभी-कभी एकदम मूर्खों जैसी बात कर देता हूं.' टोपीलाल ने अपना माथा ठोकते हुए कहा.

'मैं तो रोज ही सुनती हूं.' निराली ने कहा और अपनी बात पर स्वयं ही हंस दी, 'अब रास्ता छोड़. मां भूखी होगी.'

टोपीलाल को अपनी भूल का एहसास हुआ. वह साथ-साथ चलने लगा. उसके मन में अजीब-सी हलचल मची थी. चिट्ठी के बारे में निराली को बताए या नहीं, वह इसका फैसला कर ही नहीं पा रहा था.

उलझन में निराली भी थी. मित्रता में अधिक से अधिक पारदर्शिता जरूरी है, उसने कहीं सुना था. तभी से उसको लग रहा था कि अपने काम के बारे में टोपीलाल से छिपाकर वह गलती कर रही है,

'एक बात बताऊं...' रास्ता चलते हुए निराली ने कहा, 'मैंने काम पर जाना शुरू कर दिया है.'

'सभी को कोई न कोई काम तो करना ही पड़ता है.' टोपीलाल ने कहा. वह अपने ही सोच में डूबा हुआ था.

'मां बता रही थी कि उसको आजकल मेरी शादी की बड़ी चिंता है.' टोपीलाल की उदासीनता से आहत निराली ने उसको दूसरा झटका देने की कोशिश की.

'अभी से...!' निराली का यह प्रयास कारगर सिद्ध हुआ. टोपीलाल एकाएक चौंक पड़ा. दिमाग में घूम रही बाकी बातें हवा हो गईं.

'हम लड़कियों को तो ब्याह करना ही पड़ता है. साल दो साल इधर या उधर. मां कह रही थी कि उसका कोई भरोसा नहीं, किसी दिन आंखें मुंद गईं तो...!'

'तेने कुछ नहीं कहा...मना कर देती!'

'क्यों कर देती मना! मां ठीक ही तो कहती है. सवेरे-सवेरे पीठ पर बोरा डालकर निकलना. दिन-भर गली-मुहल्ले के आवारा कुत्तों से उलझना, लोगों की छींटाकशी सहना, भला कौन लड़की चाहेगी. शादी के बाद कम से कम यह तो करना नहीं पड़ेगा.' निराली ने कहा. वह सबकुछ बताया जिसे अभी तक छिपाए थी. टोपीलाल चुप. लगा कि उसका दिमाग घूम रहा हो. आवेश में कहे-सुने का होश ही नहीं रहा

'तुम सब पागल हो...एकदम पागल. इतनी कम उम्र में कोई ब्याह किया जाता है. मैं लिखूंगा, राष्ट्रपति जी को लिखूंगा...!'

टोपीलाल की बात सुनकर निराली हंसने लगी.

'ये राष्ट्रपति कौन हैं?' हंसी थमने के बाद निराली ने पूछा. उसके चेहरे पर मासूमियत थी. टोपीलाल को लगा कि अनायास ही चर्चा उस ओर मुड़ गई है, जिस ओर वह लाना चाहता था. जिसके लिए वह बीती रात से परेशान था. इसलिए अपनी हैरानी जताते बोला

'अरे! तू इतनी-सी बात भी नहीं जानती...कभी बड़े पार्क की तरफ नहीं गई?'

'अक्सर जाती रहती हूं...वहां ऐसा क्या है?'

'पार्क में जो मूर्ति लगी है, वह राष्ट्रपति जी की ही है. वे खुद राजधानी में रहते हैं. उनके हजारों नौकर-चाकर, घोड़ा-गाड़ी, मोटर-बंगला हैं.'

'धत! पागल हुआ है क्या! मेरी मां तो बताती है कि मूर्तियां उन्हीं की लगाई जाती हैं, जो मर चुके होते हैं.'

'झूठ, मरे हुओं की मूर्तियां भला कोई क्यों लगवाएगा?'

'उन्हें याद रखने के लिए. महान लोगों के प्रति एहसान जताने का दुनिया का यह भी एक तरीका है.' निराली ने ऐसे कहा, मानो लिखा हुआ बांच रही हो.

'किसने बताया?'

'मामा ने, वे बापू के साथ रह चुके थे. पिछले ही वर्ष उनकी मृत्यु हुई है.'

'तब तो वे बहुत बड़े आदमी थे.' कहते समय टोपीलाल का ध्यान फिर उस पार्क की ओर चला गया.

'तो पार्क में जिनकी मूर्तियां लगी हैं, वे सभी मर चुके हैं.'

'मां तो यही कहती है.'

'क्या, राष्ट्रपति जी मर चुके हैं?'

टोपीलाल को एक बार फिर झटका लगा. दिमाग एकदम भन्ना गया. उल्टे-सीधे विचार भरमाने लगे. जैसे-तैसे उसने राष्ट्रपति जी को चिट्ठी लिखी है, क्या वह बेकार ही चली जाएगी. रात-भर उसने जो सपने देखे वह क्या यूं ही थे. उसको लगा कि जैसे उसके पैरों की ताकत किसी ने सोख ली हो. उसको खड़ा होना भारी लगने लगा. लगा कि किसी भी समय धरती पर जा गिरेगा.

निराली ने उसको कई बार टोका. माफी मांगी. बार-बार आश्वासन दिया कि घर जाते ही मां से कह देगी कि अभी उसकी शादी की जल्दी न करें. जब तक वह नहीं चाहेगा, मां से शादी की हामी भरेगी ही नहीं. मगर उसके सभी प्रयास असफल रहे. टोपीलाल की चुप्पी कायम रही. उसकी उदासी सलामत रही.

रोटी पहुंचाने के बाद वापसी में भी टोपीलाल का मौन उसके साथ रहा. निराली समझ ही नहीं पाई कि उसको कैसे मनाए. क्या करे कि उसका मौन टूटे. और जब वह थक गई तो उसने भी चुप्पी साध ली. ठिकाना करीब आते ही टोपीलाल ने मुंह खोला

'मैं चलता हूं. अगर तेरी मां तेरे ब्याह की जल्दी कर रही है, तो इसी में तेरी भलाई है. इन बड़े आदमियों का कोई भरोसा नहीं, कभी भी चल बसते हैं. इनसे कोई उम्मीद रखनी ही बेकार है.'

इसके बाद वह बिना कुछ कहे, निराली से अलग हो गया. उसका उत्साह मर चुका था.

आने वाली रात टोपीलाल के जीवन की शायद सबसे उदास रात थी. उसका अपना दिमाग कोई भी फैसला करने में असमर्थ था. माथा घूम रहा था. झंझावातों के बीच यदि उम्मीद बची रहे तो संकट जल्दी टलता है, आने वाला समय अनुकूल हो जाता है.

*

अगला दिन आया. उदास-उदास. फिर कुछ और दिन बीते. टोपीलाल के मन में कोई उल्लास न था. उस दिन हमेशा की तरह मां घर के काम में जुट गई थी. रोटी बनाकर जैसे ही मां और बापू काम पर जाने को तैयार हुए, टोपीलाल उनके पास पहुंच गया

'बापू, तुम मुझे काम दिलवाना चाहते थे?'

'क्यों? ऐसी क्या जल्दी है?' पिता को आश्चर्य हुआ, 'कहीं मां ने डांट तो नहीं दिया. पर वह तो कभी ऐसा नहीं करती.'

'सभी बच्चे काम करते हैं, मुझे भी काम करना चाहिए...' कहते समय टोपीलाल के मन में निराली की छवि कौंध रही थी. कंधे पर थैला लटकाए, गलियों से कबाड़ चुनती, कुत्तों और शैतान बच्चों से खुद को बचाती हुई.

'और तेरी पढ़ाई...तू तो पढ़ना चाहता है न!'

टोपीलाल ने कोई जवाब नहीं दिया. गर्दन झुकाए पांव से जमीन कुरेदता रहा. तब तक मां रोटियां बांध चुकी थी. वह बाहर आई तो टोपीलाल एक तरफ हो गया.

'काम के लिए तो पूरी जिंदगी पड़ी है, अभी तो तेरे खेलने-खाने के दिन हैं.' टोपीलाल न जाने किस सोच में था. अपने स्थान पर अटल. तब उसके पिता ने उसके कंधे पर हाथ रखकर कहा, 'चिंता मत कर. मैंने मालिक को मजदूर और कारीगर बढ़ाने के लिए राजी कर लिया है. भगवान ने चाहा तो यहां का काम सात-आठ महीने में पूरा हो जाएगा. उसके बाद हम ऐसी जगह काम करेंगे, जहां तेरी पढ़ाई चल सके.'

इस तरह का आश्वासन बापू कई बार पीछे भी दे चुके थे. इतनी बार कि टोपीलाल को उनकी बातों पर अविश्वास होने लगा था. फिर भी बापू का यह आश्वासन उसको भला लगता. इससे एक उम्मीद बंधती थी. परंतु उस समय बापू का आश्वासन उसकी खास मदद नहीं कर सका.

वह बोझिल कदमों से धीरे-धीरे बाहर आया और बिल्डिंग के उस छोर की ओर बढ़ गया, जहां बाकी बच्चे उसके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे. वहां पहुंचकर उसने लूडो का खेल निकाला और साथी बच्चों के साथ प्रकृति के उस खेल को नए सिरे से समझने की कोशिश करने लगा. उसने खेल में खुद को लगाए रखने का प्रयास किया, लेकिन मन न लगा. अंततः वह उठा और एक साफ स्थान देखकर जमीन पर लेट गया.

साथी बच्चों को उसका व्यवहार अजीब-सा लगा. वे खेल छोड़कर टोपीलाल के पास जमा होने लगे.

'टोपी भइया आपकी तबियत तो ठीक है.' एक लड़के ने पास आकर पूछा.

'मेरा भइया जब लेतता है तो मां कहती है कि उसको बुखार है, तोपी भइया को भी बुखार है.' एक और बच्चे ने कहा. पल-भर में बच्चों के बीच बात फैल गई. उसी समय एक मासूम-सी लड़की आगे आई. उसके हाथ में लाल मिर्चें थीं. बाकी बच्चों को पीछे ठेलने का प्रयास करती हुई, वह चिल्लाई

'हटो-हटो, मेरे पास लाल मिर्च हैं, मेरी मां बुखार होने पर घर में लाल मिर्च का धुआं करती है. उपला लाओ, आग जलाओ...लाल मिर्च का धुआं सूंघते ही बुखार फौरन छू-मंतर हो जाएगा.' बच्ची की मासूमियत देख टोपीलाल हंस दिया. कुछ देर के लिए उसका सारा तनाव गायब हो गया. वह बच्चों के प्यार और उनकी बातों में खो गया. इस बीच वह लड़की आगे आकर टोपीलाल पर झुक गई

'चलो हटो, मुझे कुछ नहीं हुआ है.'

'पर अभी-अभी तो तुम्हें बुखार था.' एक बच्चा बोला.

'नहीं, मैं अब बिलकुल ठीक हूं.' टोपीलाल ने बैठने का प्रयास किया.

'देखा, मिर्च का नाम सुनते ही बुखार दुम दबाकर भाग गया.' हाथ में मिर्च थामे उस लड़की ने कहा.

'मैं इन ढकोसलों पर विश्वास नहीं करता. मां कहती है कि टोने-टोटके बकवास होते हैं.'

'ठीक होने के बाद सब यही कहते हैं.' लड़की बोली. अभिमान झलकाते हुए. सभी बच्चे हंसने लगे. उसके बाद टोपीलाल ने लाख भरोसा दिलाने की कोशिश की कि उसे बुखार वगैरह कुछ भी नहीं था. मगर एक ने भी उसकी बात पर भरोसा नहीं किया. सभी बच्चे मानते रहे कि बुखार लाल मिर्च देखकर भागा है.

'दीदी, लाल मिर्च से बुखार क्यों भाग जाता है?' एक बच्चे ने आगे आकर पूछा. लड़की इस बारे में अनजान थी. वह बगलें झांकने लगे या कोई बहाना बनाए, उससे पहले ही एक लड़का पीछे से चिल्लाया

'लाल मिर्च खाकर बुखार का मुंह जल जाता है, उसको पानी तो कोई पिलाता नहीं, इसलिए बेचारा नदी की ओर दौड़ लगा जाता है, क्यों टोपीलाल भइया?'

'यह तो बिन्ना की मां ही बता पाएगी.' कहकर टोपीलाल ने उस लड़की की ओर इशारा किया, जो मिर्च लेकर आई थी. वह शरमाकर पीछे हट गई.

'अब तो आप ठीक हैं, चलिए हमारे साथ खेलिए.' कुछ बच्चे घेरा तोड़कर आगे आए. निराली से मिलने का समय हो चुका था. मगर टोपीलाल का जी कहीं जाने का न हुआ. इसलिए वह बच्चों के साथ बैठ गया. दिन आहिस्ता-आहिस्ता बीत रहा था.

तभी बाहर खटका हुआ. टोपीलाल का ध्यान उस ओर चला गया. सामने निराली थी. टोपीलाल खेल छोड़कर खड़ा हो गया.

'कब आई तू?' टोपीलाल ने सवाल दागा. स्वर में शिकायत भरी थी. वह जवाब की प्रतीक्षा कर ही रहा था कि निराली ने उसको चौंका दिया

'मैंने कबाड़ बीनना छोड़ दिया है.'

'कब से?'

'आज ही से. मैंने मां को अभी मेरी शादी न करने को भी मना लिया है.'

'तो अब क्या करेगी?'

'तू बता, क्या करना चाहिए मुझे?' निराली ने उल्टा प्रश्न दाग दिया. टोपीलाल उसके लिए तैयार ही नहीं था. वह बगलें झांकने लगा

'मैं क्या बताऊं? जाकर अपनी मां से पूछ.'

'मां से पूछूं तो क्या वह काम करने देगी. कहेगी कि अगर इतनी ही बड़ी बनती है तो ब्याह कर ले.'

'तो कर ले ब्याह, मेरा दिमाग क्यों चाटती है!' टोपीलाल गुस्साया. परंतु अगले ही पल उसको लगा कि उससे ज्यादती हुई है. इतने सारे बच्चों के सामने निराली के साथ उसका ऐसा व्यवहार ठीक नहीं. मन ही मन पछताता हुआ वह आगे बढ़ गया. निराली पीछे-पीछे चलती गई.

'तेरी मां को बुढ़ापे में अकेले काम करते देख मुझे अच्छा नहीं लगता. तेरी जगह अगर कोई लड़का होता तो उन्हें आराम मिलता...' कहकर वह सोचने लगा.

'तू तो मुझसे भी बड़ा है, क्या तू अपनी मां को आराम पहुंचाता है. बल्कि तू तो घर का उतना काम भी नहीं करता, जितना कि मैं कर लेती हूं.' निराली के जी में आया कि टोपीलाल को खरा-खरा जवाब दे. किंतु वह उसको नाराज नहीं करना चाहती थी. इसलिए चुप्पी साधे रही. कुछ देर पश्चात टोपीलाल ने ही पूछा

'तूने कभी यह नहीं बताया कि रहती कहां है?'

'कल्लार बस्ती में, किराये की झुग्गी है. पर तू यह सब जानकर क्या करेगा?'

'कल्लार बस्ती से तो स्कूल बहुत दूर है, तेरी मां को पैदल आने-जाने में घंटों लग जाते होंगे?'

'क्या करें, जाना तो पड़ेगा ही.'

'अगर तू चाहे तो अपनी मां को लेकर यहां रह सकती है. दिन में मजदूरों और कारीगरों को प्यास लगती है. एक जगह पानी भी लेकर बैठ जाएंगी तो मजदूरों की प्यास बुझेगी, बदले में मजदूर जो देंगे उससे तुम दोनों का काम चल जाएगा. मजदूर लोगों की अपनी भी छोटी-छोटी जरूरतें होती हैं, पानी न पिलाना चाहें तो उनके हिसाब की छोटी-मोटी चीजें भी रख सकती हैं. कम से कम किराया बचेगा और आने-जाने की परेशानी से भी मुक्ति मिल जाएगी.' टोपीलाल को लगा कि उसने बहुत बड़ी सलाह दी है. गुरुता का एहसास उसको देर तक उल्लासित करता रहा.

'तुम्हारे टोले के लोग इसके लिए राजी होंगे?' निराली ने शंका प्रकट की.

'वे मेरे बापू और मां का कहना नहीं टाल सकते. फिर तुम दोनों के आने पर तो उनको आराम ही मिलेगा. जिन चीजों के लिए उन्हें दूर जाना पड़ता है, वे उन्हीं दामों में बिलकुल करीब मिल जाया करेंगी.'

'मैं मां से बात करूंगी? वह मान गई तो...' निराली ने आश्वासन दिया.

'अगर मना करें तो कल ही मुझे बताना. मैं उन्हें जबरदस्ती लिवा लाऊंगा.'

'तू कौन होता है, मेरी मां के साथ जबरदस्ती करने वाला...' निराली ने बनावटी गुस्से के साथ कहा. टोपीलाल ऐसी प्रतिक्रिया के लिए तैयार न था. उसको तत्काल कोई जवाब न सूझा. कुछ देर तक निराली उसके मुंह की ओर देखती रही। फिर सहसा हंस पड़ी

'अरे! तू तो सचमुच बुरा मान गया, मैं तो बस मजाक कर रही थी. अच्छा कल मिलेंगे.' कहकर वह उल्टे पांव भाग गई. उसकी चाल में उमंग थी. पैरों में तेजी. लंबे बाल हवा में लहरा रहे थे। इतने दिनों बाद पहली बार टोपीलाल उसको खिला-खिला देख रहा था.

जीवन में वही दिन यादगार बनता है, जब कोई नया और भला काम होता है.

*

अच्छा सोच बेहतर परिणाम भी लाता है.

चौथे दिन निराली अपनी मां के साथ टोले का हिस्सा बन गईं. टोपीलाल खुश था. उसको अपनी उपलब्धि पर गर्व था. निराली की मां ने गुमटी लगाना जारी रखा. पहले वे स्कूल के बच्चों की जरूरत का सामान रखती थीं, अब मजदूरों के काम आने वाले चीजें बेचने लगीं. टोपीलाल के मजदूरों को पानी पिलाने के सुझाव पर उन्होंने ध्यान तो दिया, मगर अपनी तरह से. एक मां की तरह टोपीलाल को समझाया भी था

'भगवान ने धरती का तीन-चौथाई हिस्सा पानी से भरा है। ऐसे में प्यासे से पानी की कीमत वसूलना या वैसी उम्मीद रखना भयंकर पाप, ईश्वर को नाराज करना है.'

यह सोचकर कि टोपीलाल ने सीख गांठ बांध ली है, निराली की मां ने आगे कहा'जिंदगी में पुण्य कमाने का अवसर तो कभी मिला नहीं, अब पानी से पैसे कमाने का पाप तो मैं हरगिज अपने सिर नहीं लूंगी. पर तेरी बात भी टालूंगी नहीं.'

उसने उसी दिन दो नए घड़े मंगवा लिए. उन घड़ों में ताजा पानी रखकर अपनी गुमटी के सहारे रखने लगी. बगैर किसी लाभ-कामना के. न चाहते हुए इसका उसे व्यावसायिक लाभ भी हुआ. दिन में प्यासे मजदूर पानी के बहाने उसके पास आते. उस समय सामने दुकान के रूप में फैली चीजों को देखकर उनका मन मचल उठता. इससे उसकी कमाई बढ़ने लगी. अपने खेल के बीच से फुर्सत निकालकर टोपीलाल निराली की

मां के पास बैठ जाता. दोनों देर तक बातें करते.

वह स्त्री पहले ही कम दयालु न थी. वहां आने के बाद उसकी भलमनसाहत और दयालुता बढ़ती ही जा रही थी. मजदूरों के बच्चों से उतना ही प्यार करती जितना कि निराली से. उनके लिए टॉफियां, बिस्कुट, नान-खटाई वगैरह बांटती ही रहती.

उसके आने से काम पर जाने वाली मजदूर औरतों को भी सहारा मिला था. उनके बच्चों को जब भी कोई समस्या होती तो वे उसी के पास ले आतीं. उसके लंबे अनुभव का लाभ उठाने. बीमार होते तो वह रोग का उपचार बताती. भूखे होते तो खिला-पिलाकर चुप करने का प्रयास करती. कभी-कभी तो अपनी दुकानदारी का खयाल छोड़कर भी वह उनके बच्चों की देखभाल करती.

बिल्डिंग की चार मंजिलें तैयार हो चुकी थीं. तीन मंजिलों का निर्माण अभी बाकी था. टोपीलाल और उसके दोस्तों की चौकड़ी अब तीसरी मंजिल की छत पर जमती. चारों तरफ से खुली होने के कारण वहां ठंडी हवा बहती. वातावरण ठंडा-सुहावना रहता. वहां खड़ा होने पर शहर का नजारा दूर-दूर तक एकदम साफ नजर आता था.

उस दिन टोपीलाल बच्चों के साथ खेल में मग्न था. तभी नीचे दो आदमी दिखाई पड़े. उनमें से एक खाकी वर्दी में था. दूसरा सफेद कुर्ता-धोती पहने. धूप से बचने के लिए उसने एक सफेद टोपी अपने सिर पर रखी हुई थी. खाकी वर्दी वाला आदमी टोपीलाल को पहचाना-सा लगा. दोनों को नीचे पूछताछ करते देख टोपीलाल घबराया. उसका दिल जोर से धड़कने लगा.

अगले ही क्षण दोनों को ऊपर आते देखा. न जाने क्यों उन अजनबियों को देखकर टोपीलाल की घिग्गी बंध गई. मन में डरावने खयाल आने लगे. अजीब-अजीब बातें मन को डराने लगीं. उन्हीं से घबराया हुआ वह खुद को छिपाने का प्रयास करने लगा. पचास-साठ मजदूर, कामगारों के रहते खुद को छिपाना आसान नहीं था. फिर भी बदहवास टोपीलाल अपने लिए ठिकाने की खोज करने लगा. उसी समय एक लड़का तेजी से ऊपर आया

'टोपीलाल..टोपीलाल...!'

'क्यों चिल्ला रहा है?'

'वे लोग तुझे नीचे बुला रहे हैं.'

'वे कौन?'

'मुझे क्या मालूम?'

'किसलिए आए हैं?'

'नहीं पूछा!'

'घनचक्कर, कम से कम नाम और पता तो पूछा ही होगा?'

'मुझे नहीं मालूम. बता रहे हैं कि राजधानी से आए हैं.'

'यह राजधानी क्या होती है?' किसी बच्चे ने पूछा. किंतु राजधानी का जिक्र छिड़ते ही टोपीलाल को झटका लगा. राष्ट्रपति जी के नाम लिखा हुआ पत्र अचानक याद आ गया. याद आया कि उसमें वह नमस्कार लिखना तो भूल ही गया था. ऊपर से पत्र बिना डाक टिकट लगाए डाकिया को भी सौंप दिया था. यह आदमी राष्ट्रपति जी के यहां से ही आया होगा. पुलिस भी साथ होगी. पहचान के लिए डाकिया साथ है. पर निराली तो बता रही थी कि राष्ट्रपति जी मर चुके हैं. चिट्ठी तो उन्हें मिली ही नहीं होगी...फिर पुलिस के आने का कारण?

टोपीलाल के दिमाग में विचारों का अंधड़ था. डर था और सघन आतंक भी. उसको कुछ सूझ ही नहीं रहा था. वे लोग सीधे ऊपर ही आ रहे थे. इसीलिए खुद को बचाने का कोई अवसर भी नहीं था. टोपीलाल के दिल की धड़कनें बढ़ गईं. लड़खड़ाते कदमों से वह आने वाले क्षणों की प्रतीक्षा करने लगा.

'अच्छा होता कि मैं मां से किसी तरह भगवान को मनाने का तरीका सीख लेता. इस समय वह काम आता.' भयभीत टोपीलाल के मन में कौंधा. तभी सफेद कपड़ों वाले आदमी को साथ लिए डाकिया छत पर पहुंच गया.

'वो रहा टोपीलाल!' उनके साथ आ रहे लड़के ने इशारा करके बताया. टोपीलाल की सांस थमने लगी. भय से देह थरथरा उठी. अब छिपने का भी लाभ न था।

'साहब, यही वह लड़का है, जिसने मेरा मामूली पेन भी अगले दिन लौटा दिया था. मुझे तो आज ही पता चला कि उस पेन को लौटाने के लिए यह यहां से मीलों दूर पैदल चलकर गया था. इतना ईमानदार और भला लड़का मैंने आज तक नहीं देखा.' डाकिया की आवाज टोपीलाल के कानों में पड़ी. दूर होने के कारण वह उसके शब्दों को समझने में नाकाम रहा. परंतु उसके चेहरे और हाव-भाव देख उसकी बेचैनी घटने लगी. हालांकि दिल में धुकधुकी अब भी मची हुई थी.

'मुझे राष्ट्रपति जी ने भेजा है.' वह आदमी आगे बढ़ता हुआ बोला. उसके चेहरे पर मुस्कान थी, 'उन्हें तुम्हीं ने पत्र लिखा था, न!'

'जी..वो तो बस यूं ही. मैं भूल गया था कि मेरी जेब खाली है. पर आप चिंता मत कीजिए, मां से कहकर मैं डाक टिकट के पैसे दिलवा दूंगा.' टोपीलाल ने किसी तरह कहा.

'अरे हां, याद आया, तुम्हारा वह पत्र बैरंग था...' डाकिया के साथ आया आदमी लगातार मुस्करा रहा था.

'पत्र में मैं नमस्ते भी नहीं लिख पाया था. वह मेरा पहला खत था. मेरी मूर्खता थी कि बिना यह जाने कि पत्र कैसे लिखा जाता है, मैंने राष्ट्रपति जी को पत्र लिखा. पर पहली बार इतनी चूक तो माफ होनी चाहिए...'

'चूक कैसी! राष्ट्रपति जी तो तुमसे बहुत प्रसन्न हैं. वे बच्चों से बेहद प्यार करते हैं. उन्होंने ही मुझे तुम्हारे पास भेजा है.'

'मेरे पास क्यों?' टोपीलाल के मुंह से सहसा निकला. उस आदमी की बातों में अजीब-सी कशिश थी. टोपीलाल ने महसूस किया कि वह उसकी ओर खिंचता जा रहा है. लेकिन मन में समाया हुआ डर अब भी उसके सहज होने में बाधक बना था.

'लोग तो कहते हैं कि राष्ट्रपति जी मर चुके हैं.'

'छिः! वे हमारे महान राष्ट्रपति जी हैं. हमारे देश के गौरव, मान-अभिमान सबकुछ. उनके लिए ऐसे कुवचन नहीं बोलते...'

'फिर वे मूर्तियां जो पार्क में लगी हैं, निराली की मां कहती हैं कि जिनकी वे मूर्तियां हैं, वे सभी मर चुके हैं.'

'तुम बहुत भोले हो. साथ में गलतफहमी का शिकार भी. राष्ट्र की तरह राष्ट्रपति भी अमर होते हैं.'

'फिर वे मूर्तियां?' टोपीलाल का कौतूहल जागा.

'जो मूर्तियां तुमने देखीं वे उन महान व्यक्तियों की होंगी, जिनकी इस दुनिया में अब सिर्फ याद ही बाकी है. मुझे तुम्हारे पास राष्ट्रपति महोदय ने ही भेजा है. अब कुछ दिन मैं तुम्हारे साथ ही रहूंगा.'

'हमारे साथ, कहां?'

'यहीं इस इमारत में, जहां तुम्हारे टोले के दूसरे लोग रहते हैं.'

'पर मेरी मां तो काम पर जाती है. घर आते-आते बुरी तरह थक जाती है. आपके लिए खाना कौन पकाएगा?' टोपीलाल ने पूछा. वह जानता था कि दिन-भर चिनाई करने वाली मां घर आते-आते बुरी तरह टूट जाती है. ऊपर से घर का काम भी उसको देखना पड़ता है. किसी अजनबी के कारण वह मां पर बोझ नहीं बढ़ाना चाहता था.

'हम ढेर सारी बातें करेंगे. फिलहाल तो मैं कुछ फल तुम्हारे और इन बच्चों के लिए लाया हूं. लो अपने हाथों से तुम इन बच्चों को बांट दो.' कहते हुए आदमी ने अपनी पोटली खोली. उसमें केले, आम, नींबू आदि तरह-तरह के फल थे. उनमें से कुछ फल निकालकर उसने टोपीलाल की ओर बढ़ाए. मगर टोपीलाल अपने स्थान पर अडोल खड़ा रहा.

'घबराओ मत, मैं यहां किसी पर बोझ बनने नहीं आया हूं. अपना खाना मैं खुद बनाऊंगा. मैं अपना बाकी काम भी खुद ही करूंगा. बापू के साथ रहकर मैंने यही सीखा है कि आदमी को अपना काम स्वयं ही करना चाहिए.'

टोपीलाल बापू का नाम पहले भी सुन चुका था. एक बार शहर से गुजरते हुए एक मूर्ति की ओर संकेत करके मां ने बताया भी था कि यह बापू की है. इससे अधिक बापू के बारे उसको कोई जानकारी न थी. जिस दिन मां ने मूर्ति दिखाई थी, उस दिन वह जरूर मां से उनके बारे में पूछना चाहता था. पर किसी तरह बात टल गई. उसके बाद उसको भी याद नहीं रहा.

उस आदमी के जोर देने पर टोपीलाल ने केले ले लिए. उसके हाथ में केले आते

ही बच्चे उनपर टूट पड़े. डाकिया जाने लगा तो टोपीलाल ने दौड़कर दो केले उसके हाथों में भी थमा दिए. इसपर डाकिया ने उसकी ओर प्यार से देखा'मुझे मालूम था कि तू यही करेगा. अच्छे बच्चे हमेशा खुशियां लुटाते हैं.'

उसी समय टोपीलाल की निगाह निराली पर पड़ी जो दूर खड़ी उसको देख रही थी. बच्चों को केले देने के बाद वह निराली के पास पहुंचा

'मैं तो दो केले लूंगी?'

'सभी बच्चों को एक-एक मिला है, तुम्हें दो क्यों दूं?' टोपीलाल ने बरजा.

'तुमने डाकिया बाबू को भी तो दो केले दिए हैं?'

'वे बड़े हैं. फिर वे उन केलों को खुद तो खाएंगे नहीं, अपने बच्चों को ले जाकर देंगे. अगर मैं एक केला देता और बच्चे दो हों तो उनकी मुश्किल हो जाती न!'

'मुझे एक केला अपनी मां के लिए चाहिए.'

'केले सिर्फ बच्चों के लिए हैं...'

'तुम्हें मां के लिए केले क्यों चाहिए बेटा?' उनकी बात सुन रहा आदमी निराली के पास जाकर बोला. निराली चुप्पी साधे रही.

'शरमा मत बेटी! मेरा नाम बद्री नारायण है. पर बच्चे मुझे बद्री काका ही कहते आए हैं. तुम भी वही कह सकती हो.' बद्री काका ने कहा. उनके स्वर में प्यार उमड़ता हुआ देख निराली पिघल गई. आंखों में नमी उतरने लगी.

'मां ने आज सुबह से कुछ भी नहीं खाया. रात से ही उनको बुखार है.' निराली ने बताया.

'अरे! तो पहले क्यों नहीं बताया. बुखार में केले के बजाय सेव ठीक रहता है. जो मेरे पास हैं. लो ये दोनों सेव तुम्हीं रख लो.' कहते हुए बद्री काका ने थैले से सेव निकालकर निराली के हाथों में थमा दिए.

'तुम रहती कहां हो?'

'वहां, नीचे जमीन पर!' बद्री काका के पूछने पर निराली ने इशारा किया.

'तो चलो, सबसे पहले तुम्हारी मां से ही पहचान कर ली जाए.' बद्री काका ने अपना झोला उठा लिया. वे नीचे की ओर चले तो बच्चों का दल भी उनके साथ हो लिया. निराली की मां के पास पहुंचकर बद्री काका ने उनकी कलाई पकड़कर बुखार की जांच की. फिर थैले से निकालकर कुछ गोलियां निराली को थमा दीं, बोले

'इनमें से दो गोलियां अभी खिला दो. दो घंटे के बाद दो गोलियां और दे देना. शाम तक बुखार उतर जाएगा.' कहकर बद्री काका ने अपना झोला उठा लिया

'अब मैं नहाकर कुछ देर आराम करूंगा. हम लोग शाम को मिलेंगे. तब तक तुम्हारा जो भी मन करे कर सकते हो. अरे हां, कोई बच्चा मुझे बताएगा कि यहां लोग नहाते कहां हैं?'

बद्री काका के पूछने पर कई लड़के आगे आए. टोपीलाल जान-बूझकर पीछे खड़ा रहा. बद्री काका के निकल जाने के बाद वह निराली के करीब पहुंचा, बोला'अम्मा को ये गोलियां खाने मत देना.'

'क्यों?' निराली असमंजस में थी.

'मां, कहती है कि अजनबी से कभी कोई चीज नहीं लेनी चाहिए. क्या पता यह आदमी कौन है? कहां से आया है?' टोपीलाल फुसफुसाया. उस समय उसके दिमाग में ढेर सारी कुशंकाएं कौंध रही थीं.

'उन्होंने बताया तो कि राष्ट्रपति महोदय ने ही यहां भेजा है.' निराली ने कहा.

'राष्ट्रपति जी यहां क्यों भेजेंगे? हो सकता है, यह उनका कोई जासूस हो.'

'तो हमें क्या करना चाहिए?'

'मां इस समय एकदम सही सलाह देती. लेकिन अवसर ऐसा है कि मैं उससे बात भी नहीं कर सकता.'

'फिर?'

फिर का उत्तर टोपीलाल के पास भी नहीं था. वह परेशान था. इसलिए भी कि वह स्वयं कोई निर्णय नहीं कर पा रहा था. अभी तक उसको अपने दिमाग पर भरोसा रहा था. जरूरत के समय हर बार वह सही फैसला करता आया था. उसके कारण अनेक बार लोगों की प्रशंसा भी बटोरी थी. आज लग रहा था कि उसकी समझ उसको धोखा दे रही है. दिमाग बैठता जा रहा है. कारण उसकी समझ से बाहर था.

दूसरी परेशानी यह थी कि वह अपनी मां से भी मदद नहीं ले पा रहा था. उसको लगता था कि समस्याएं उसने खड़ी की हैं, इसलिए उनका निदान भी स्वयं उसी को करना होगा. मां और बापू को वह बीच में हरगिज नहीं लाएगा.

*

नेकी सदैव पुण्य-लाभ देती है.

नहाने के बाद बद्री काका जमीन पर चादर बिछाकर लेट गए. करीब एक घंटा आराम करने के वे बाद उठे. शाम हो चुकी थी. मजदूर और कारीगर अपना काम समेटकर वापस लौटने लगे थे. इमारत में जगह-जगह चूल्हे जल रहे थे. छौंकने-बघारने की आवाजें आ रही थीं. भूखे बच्चे मांओं के आगे बिलख रहे थे. वे उन्हें समझा और दुलार रही थीं. बिल्डिंग के कोने-कोने में स्थित चूल्हों से उठता हुआ धुआं उन स्थानों पर जीवन की उपस्थिति का संदेश दे रहा था.

जागने के बाद बद्री काका बिल्डिंग का एक चक्कर लगा चुके थे. चारों मंजिलों पर घूमने के बाद वे उस कोने में पहुंचे, जहां बच्चे खेल रहे थे. टोपीलाल भी वहीं था. अपनी उलझन से घिरा हुआ, एकाकी. बद्री काका के कंधे पर एक सूती चादर थी. वस्त्र हाथ

से बुने कपड़े के थे.

बच्चों के पास बैठकर उन्होंने चादर जमीन पर बिछा ली. फिर हाथ फैलाकर, मोहक मुस्कान के साथ उन्हें आमंत्रित करते हुए बोले

'तुम में से कौन-कौन मुझसे दोस्ती करना चाहेगा?' यह सुनकर बच्चों का खेल से ध्यान हट गया. सब चौंककर बद्री काका की ओर देखने लगे.

'जिन्हें मुझसे दोस्ती करनी है, वे इस चादर पर आ जाएं.' उन्होंने दोहराया. मगर इस बार भी कोई बच्चा उस चादर पर नहीं पहुंचा. उन्होंने बच्चों की ओर देखा. वे अपने स्थान पर गुमसुम-से खड़े थे. चेहरे पर डर और आशंका के भाव लिए हुए.

'कोई बात नहीं, यदि तुम में से कोई भी मुझसे दोस्ती नहीं करना चाहता तो तुम्हारी मर्जी. पर मैं तो तुम सभी को अपना दोस्त मान चुका हूं.'

'आप यहां किसलिए आए हैं?' एक बच्चे ने टोका.

'आपको हमसे क्या काम है?' दूसरे बच्चे ने जोड़ा.

'हम आपको नहीं जानते...बस्ती में कोई भी आपको नहीं जानता।' सवालों की बौछार बढ़ती ही जा रही थी।

'बताता हूं, बताता हूं.' अगर एक साथ सारे बच्चे सवाल करने लग जाएंगे तो मेरी चांद पर बचे-कुचे बाल भी नहीं रहेंगे.

'कैसे?' बच्चों को बद्री काका की बात में मजा आया.

'सीधा-सादा गणित है भई. तुम्हारा एक सवाल अगर मेरा एक बाल भी ले उड़ा तो सुबह तक मैं पूरी तरह गंजा हो जाऊंगा.' इसपर कई बच्चे हंस पड़े. बद्री काका को भी भला लगा.

'आप तो पहले ही गंजे हैं, हमने आपको नहाते हुए देखा था, आपकी चांद पर एक भी बाल नहीं है?'

'अरे..रे...! तुम सब तो बहुत तेज हो, आते ही मेरी कलई खोल दी.' बद्री काका ने दुःखी होने का नाटक किया, 'इसकी भी एक दर्द-भरी कहानी है. बताओं कौन-कौन सुनना चाहेगा?

'मैं...!' कई बच्चे एक साथ बोल पड़े। केवल टोपीलाल चुप्पी साधे रहा। तिरछी नजरों से उसको देखते, मन ही मन मुस्कराते हुए बद्री काका ने कहना आरंभ किया

'एक बार हमारे बाल बहुत बढ़ गए. हम नाई के पास उनकी छंटाई कराने पहुंचे. वह अपनी दुकान बंद करने जा रहा था. हमने उससे कहा, 'भाई, कल हमें दावत में जाना है, जरा बालों की छंटाई तो कर दो.'

'कल आइएगा श्रीमान. अब तो दुकान बंद करने का समय हो चुका है.' नाई ने जवाब दिया.

'हमें जल्दी है, सुबह मुंह-अंधेरे ही निकलना है. मैं पूरी मजदूरी दूंगा. तुम्हारी अपनी

दुकान है, थोड़ी देर बाद बंद कर लेना.' मैंने उसको फुसलाने की कोशिश की. लेकिन वह भी कम नहीं था, बोला

'बापू कहते हैं कि हर काम समय पर होना चाहिए. दुकान बंद करने का समय सात बजे का है, मैं एक मिनट भी ऊपर नहीं रुकने वाला.'

बापू समय के पाबंद हैं. यह बात पूरा देश जानता था. इसलिए उससे आगे कुछ कहने का कोई लाभ ही नहीं था.

'पर मुझे तो मुंह-अंधेरे ही एक जगह जाना है. वहां इस जुल्फी स्टाइल में तो जा नहीं सकता.' मैंने अपनी समस्या रखी. हालांकि मैं यह कतई नहीं चाहता था कि वह मेरे लिए अपना अनुशासन भंग करे.

'उसका भी इंतजाम है. गर्मी के दिन हैं, आप टोपी की जगह एक खद्दर का गीला तौलिया सिर पर रख लीजिए. उससे बाल दबे रहेंगे, किसी को पता भी नहीं चलेगा.'

मरता क्या न करता. मैंने अगले दिन खद्दर के गीले तौलिये में बालों को लपेटा और चल दिया दावत खाने. घंटे-भर बाद ही जुकाम ने जकड़ लिया. छींकें आने लगीं. पहली छींक आई'आ...छी!' और मैं चौंक पड़ा। जी को जोर का धक्का लगा।

'अरे, यह क्या हुआ! छींक के साथ बालों की पूरी एक बस्ती धराशायी हो चुकी थी. दूसरी छींक आई तो वह दूसरे मुहल्ले को ले उड़ी. इसके बाद तो छींकों के आने और केश-कुंजों के उजड़ने का सिलसिला चलता ही गया. मैंने सोचा कि गीले तौलिये से छींक आती है, तो क्यों न तौलिये को हटा ही लूं. लेकिन जब तौलिया हटाकर देखा तो बालों के मुहल्ले के मुहल्ले हवा हो चुके थे. अब तो बिना तौलिया रह पाना संभव ही नहीं था. उधर गर्मी में सूखा तौलिया रखने से सिर तपने लगा था. सो तौलिया फिर से भिगोना पड़ा. शाम को जब मैं घर लौटा तो बालों की तीन-चौथाई फसल तबाह हो चुकी थी.

मैं दौड़ा-दौड़ा फिर नाई के पास पहुंचा. जाते ही उसपर चढ़ गया, 'तुम्हारी बताई गई तरकीब से ही यह हाल हुआ है. अब बताओ तुम्हारा क्या हाल करूं?'

'सिर्फ शुक्रिया अदा कीजिए जनाब! हर महीना नाई की दुकान पर आना पड़ता था. कभी दुकान खुली मिलती थी, कभी नहीं. बीस रुपये रिक्शे वाले को देते थे, दो-तीन घंटे आने-जाने में खराब हो जाते थे. ऊपर से नाई का मेहनताना. जितनी देर उसके सामने रहो, उतनी देर गलत कैंची चल जाने का डर. मुफ्त की सलाह पर सिर्फ एक शुक्रिया के बदले इन सारी परेशानियों से मुक्ति मिल रही है. बिना अधेला खर्च किए और क्या लेना चाहेंगे जनाब!' कहकर नाई महाशय हंस दिए. मैं और नाराज होऊं उससे पहले ही बोले

'आप तो बापू के भक्त हैं...'

'हूं पर इतना भी नहीं कि भक्ति के नाम पर गंजा बन जाऊं...' मैंने रोष प्रकट किया. इसपर नाई मुस्करा दिया'आप तो नाराज हो गए. चलिए छोड़िए, इसी बात पर मैं एक किस्सा सुनाता हूं. एक बार बापू को जुकाम हुआ. किसी ने उन्हें खद्दर का रूमाल

थमा दिया. जुकाम तेज था. रूमाल से रगड़ते-रगड़ते नाक लाल हो गई. शाम को जब घूमने निकले तो एक पत्रकार ने बापू से मजाक करते हुए पूछा'बापू, खादी के मोटे रूमाल से अगर नाक को इसी तरह रगड़ते रहे तो यह दो-चार दिनों में गायब हो जाएगी.'

'तब जानते हैं बापू ने क्या कहा? खैर, आपने सुना है तो और यदि नहीं सुना है तो भी, मैं आपको बताए देता हूं. बापू ने उस पत्रकार से हंसते हुए कहा था, 'अच्छा ही है कि गायब हो जाए, आए दिन के जुकाम से छुट्टी तो मिलेगी. न बांस रहेगा, न बांसुरी बजेगी.'

किस्सा सुनाने के बाद नाई मेरी ओर पलटा, 'जनाब, आपके तो केवल बालों पर ही बीती, गांधी जी तो रोजमर्रा की मुश्किल से बचने के लिए अपनी नाक भी गंवाने को तैयार थे.'

मैं बापू के नाम पर लोगों को उपदेश देता था. नाई ने मेरा हथियार मेरे ही ऊपर तान दिया था. मैं क्या करता. चला आया चुपचाप. वह दिन है और आज का दिन. सिर की बगिया से उस दिन जो बहार रूठी, वह आज तक नहीं लौटी. लाख जतन किए, पर यह जंगल कभी आबाद न हो सका.'

बद्री काका ने बात समाप्त की तो बच्चों के चेहरे खिले हुए थे. कई बच्चे उनके करीब खिसक आए थे.

'अब आप में से कोई है जो इस सदाबहार गंजे को अपना दोस्त बनाना चाहेगा?' बद्री काका ने पूछा तो कई बच्चे चादर चढ़ गए. वे उन्हें चारों ओर से घेरकर बैठ गए. सहसा बद्री काका की निगाह निराली पर पड़ी. वह सबसे पीछे खड़ी थी. उदास और परेशान. बद्री काका को अनायास कुछ याद आया. वे उठकर निराली के पास पहुंचे और उसके सामने घुटनों के बल बैठकर बेहद प्यार से पूछा

'बेटी, तुम्हारी मां का बुखार अब कैसा है?'

जवाब देने के बजाय निराली ने अपनी गर्दन झुका ली.

'निराली की अम्मा बहुत बीमार है?' एक बच्चे ने बताया.

यह सुनते ही बद्री काका उठकर खड़े हो गए, 'मैंने जो गोलियां दी थीं, उनसे बुखार तो उतर जाना चाहिए था. अगर नहीं उतरा तो जरूर कोई वजह है. हो सकता है कि उन्हें अस्पताल भी ले जाना पड़े. चलो पहले उन्हीं को चलकर देखते हैं.'

बाकी बच्चे भी बद्री काका के पीछे-पीछे चल पड़े.

निराली की मां जमीन पर चादर बिछाकर लेटी हुई थी. देह बुखार से तप रही थी. हालत दिन की अपेक्षा और भी खराब हो चुकी थी. यह देख बद्री काका के चेहरे पर चिंता की लकीरें बढ़ गईं. उन्होंने नाड़ी देखकर बुखार का अनुमान लगाया

'बुखार ज्यादा है, लेकिन इस हालत में इन्हें अस्पताल ले जाना भी उचित न होगा. अच्छा होगा कि पहले पानी कि पट्टी लगाकर तापमान नीचे लाया जाए.'

बद्री काका ने निराली से एक चौड़े बरतन में पानी लाने को कहा. फिर कंधे से अंगोछा उतारा. उसको पानी में भिगोया और निराली की मां के माथे पर रखने लगे. निराली उनके पास ही खड़ी थी. कुछ दूरी पर टोपीलाल था. अपराधबोध से ग्रसित. बाकी बच्चे भी वहीं मौजूद थे.

'बच्चो, इनकी फिक्र मत करो. कुछ देर में बुखार उतरने लगेगा. तब तक तुम सब अपने-अपने घर जाओ. हम लोग सुबह मिलेंगे. कुछ नई बातों के साथ.' बद्री काका के कहने पर कुछ बच्चे जाने लगे. कुछ वहीं खड़े रहे. माथे पर पानी की पट्टी रखकर बुखार का इलाज करना उनकी निगाह में किसी कौतूहल से कम न था. उनकी माएं बुखार आने पर अक्सर पानी से दूर रहने की सलाह दिया करती थीं. उनकी निगाह में बद्री काका अनूठे थे। अनूठा था उनका बुखार के उपचार का तरीका।

लगभग तीस मिनट तक माथे पर गीली पट्टी रखने के बाद बुखार कुछ हल्का पड़ा. कमजोर शरीर में मामूली हरकत हुई. बद्री काका के चेहरे पर संतोष झलकने लगा. वे उठकर खड़े हो गए, 'बापू का बताया बुखार के उपचार का यह तरीका एक बार फिर कारगर सिद्ध हुआ. अब कोई चिंता की बात नहीं है. एक घंटे के बाद बुखार एकदम उतर जाएगा. तुम अगर चाहो तो इन्हें कुछ दूध पिला सकती हो।'

सहसा उन्हें कुछ ध्यान तो आया, पूछा'बेटी, तुम्हारे पास दूध तो होगा?'

निराली गर्दन झुकाए खड़ी रही. कोई जवाब न सूझा.

'गुरुजी, दूध मैं अपने घर से ले आता हूं.' टोपीलाल ने उत्साहित होकर कहा. बिना सहमति की प्रतीक्षा किए वह तुरंत दौड़ भी गया. पांच-छह मिनट बाद लौटा तो उसके हाथों में गिलास था, दूध से भरा हुआ.

'मां ने कहा है कि कच्चा है, उबाल लेना.' टोपीलाल ने दूध से भरा गिलास निराली को थमाते हुए कहा. काफी देर बाद उसके चेहरे पर चमक दिखाई पड़ी थी. मानो किसी तनाव से बाहर निकलने की कोशिश में कामयाबी नजर आई हो.

निराली ने आग जलाकर दूध गर्म किया. तब तक बद्री काका अपने झोले से दो गोलियां और निकाल चुके थे. निराली दूध गर्म करके लाई तो उन्होंने वे गोलियां उसकी मां के हाथों में थमा दीं.

'अब इन्हें आराम करने दो. कुछ घंटों के बाद ये बिलकुल ठीक हो जाएंगी.' गोलियां खिलाने के बाद बद्री काका वहां से चल दिए. जाते-जाते जैसे कुछ याद आया हो, वे निराली की ओर मुड़े, 'मैं बाहर सोने जा रहा हूं. रात में यदि कोई परेशानी दिखे तो फौरन जगा देना.'

निराली और टोपीलाल उन्हें छोड़ने बाहर तक आए. बच्चे धीरे-धीरे अपने घर जाने लगे थे. भोजन का समय हो चुका था. जगह-जगह चूल्हे जल रहे थे. कहीं दाल बघारी जा रही थी तो कहीं पर गर्म रोटियों से उठती गंध हवा को महका रही थी। भूख टोपीलाल

को भी सता रही थी. पर वह अपनी ही जगह पर अटल रहा.

'क्या तुम्हें भूख नहीं है?' टोपीलाल को अकेला देख बद्री काका ने प्रश्न किया.

'मैं आपसे अपनी एक भूल के लिए माफी चाहता हूं?' टोपीलाल का स्वर पछतावे से भरा था.

'भूल! भला तुमने ऐसा क्या कर दिया?' बद्री काका ने टोपीलाल के चेहरे पर नजर जमाते हुए पूछा.

'आपकी दी गई गोलियां खिलाने को मैंने ही मना किया था, जिसके कारण निराली और उसकी मां के साथ-साथ आपको भी परेशान होना पड़ा.'

'क्या तुम नहीं चाहते कि निराली की मां जल्दी ठीक हो?'

'बिलकुल चाहता हूं. परंतु उस समय मुझे आपके ऊपर भरोसा ही नहीं था. मुझे लगा कि आप सरकार के जासूस हैं.'

'मैंने तो पहले ही बता दिया था कि मुझे राष्ट्रपति जी ने तुम्हारे पास भेजा है.' बद्री काका ने हैरानी प्रकट की.

'जी, मुझसे भारी भूल हुई है.'

'भूल होना तो स्वाभाविक है, किंतु आदमी को चाहिए कि वह भूल को अपने स्वभाव का हिस्सा न बनने दे. जब भी ऐसा होता है, आदमी अपने आप से मुंह चुराने लगता है. और अपने आप से मुंह चुराना, भविष्य की ओर से मुंह फेर लेना भी है.'

टोपीलाल की आंखें जमीन में गड़ी थीं.

*

नकारात्मक सोच और अनावश्यक डर सबसे पहले अपने ही व्यक्तित्व पर हमला करते हैं. ये आदमी को बहुत पीछे ले जाते हैं, उसके विवेक को खोखला कर देते हैं।

अपनी भूल के लिए तो टोपीलाल ने बद्री काका से माफी मांग ली. उन्होंने माफ भी कर दिया था. पर टोपीलाल के मन को चैन कहां. अभी तक वह अपने ऊपर गर्व करता आया था. अपनी बुद्धि पर भी उसको गुमान था. उसी के कारण उसको लोगों की शाबाशी मिलती थी. परंतु अब उसे लग रहा था कि पिछले कुछ दिनों से उसके दिमाग ने काम करना बंद कर दिया है. सोचने-समझने की शक्ति समाप्त हो चुकी है. वह सही फैसला कर ही नहीं पाता. आदमी को पहचानने में उससे भूल हो जाती है. ऐसा क्यों हुआ? इसका ठीक-ठीक कारण तो वह नहीं जानता. पर कोई भी घटना अकारण तो होती नहीं. टोपीलाल उस कारण को जानना, उसकी तह तक पहुंचना चाहता था. पर व्यर्थ, उसका हर प्रयास निष्फल था.

कहीं घमंड तो इसकी वजह नहीं है? मां कहती है कि घमंड अच्छे-खासे आदमी को गड्ढे में ले जाता है. हो सकता है कि खेल-खेल में राष्ट्रपति महोदय को पत्र लिखने से

उसके मन में घमंड समा गया हो. ऐसा उसने कई बार सोचा है. हालांकि उस समय ऐसा कुछ नहीं था. बस कागज-कलम सामने देखकर उसने कुछ शब्द कागज पर उकेर दिए थे. उनका सही-सही अर्थ भी वह नहीं जानता था. जैसा उस समय मन में आया वही लिख मारा था.

डाकिया की मेहरबानी हुई जो अनजाने में लिखा गया उसका पत्र सही ठिकाने पर जा लगा. तुक्का तीर बन गया. ऐसे संयोग को लेकर गुमान कैसा! यह भी संभव है कि अनजाने डर ने उसकी सारी दिमागी ताकत को निचोड़ लिया हो. संभावनाएं तो अनेक हैं, पर असलियत तक पहुंचना...बेहद मुश्किल.

इस बीच टोपीलाल ने एक बात और नोट की. पहले जब वह दूसरों के बारे में सोचता, सबके भले की कामना करता, सबसे हिल-मिलकर रहता थातब उसके दिमाग में नए-नए विचार भी आते. मस्तिष्क कल्पनाओं की उड़ान में रहता था. कोई भी समस्या हो, उसका निदान तुरंत सुझा देता. परंतु अब!

कुछ दिनों से तो अनजाना डर उसके दिलो-दिमाग में पैठा हुआ है. हर बच्चा उसको अपना प्रतिद्वंद्वी, हर आदमी अपना दुश्मन नजर आता है. संदेह मन से दूर ही नहीं होता.

टोपीलाल इस मसले पर मां से बात करना चाहता था. परंतु कई दिनों से वह देख रहा था कि मां और बापू देर तक काम करते हैं. बिल्डिंग जल्दी पूरी करने के लिए उन्हें ओवरटाइम लगाना पड़ता है. मां घर लौटते ही खाना बनाने में जुट जाती है. बापू बाकी कारीगरों के साथ बैठकर अगले दिन के काम की योजना बनाते हैं. जरूरत हो तो मालिक से बातचीत करते हैं. ऐसे में टोपीलाल की हिम्मत कहां कि अपनी किसी समस्या के लिए मां को परेशान करे! मन हल्का करने के लिए उसके पास बैठे, बातचीत करे.

इन दिनों उसकी अजीब हालत है. हमेशा गुम-सुम बना रहता है. जहां बैठ जाए वहां बैठा ही रह जाता है. दुनिया-जहान की सुध ही नहीं रहती. ऊपर से दिमाग है कि न जाने क्या-क्या अलाय-बलाय सोचता, अटकलें लगाता है. बेकार की बातें, जिनमें जरा-भी तारतम्य नहीं.

इस बीच यदि कुछ अच्छा लगता है तो निराली का साथ. टोले के दर्जनों बच्चों में वह उसकी सबसे गहरी मित्र है. वही उसको सर्वाधिक पसंद भी है. जब तक निराली साथ रहे, तो उसका मन खिला-खिला रहता है. नहीं तो बुझ-सा जाता है. तभी तो उसने निराली को अपनी मां के साथ टोले में आकर रहने का कहा था. इसके लिए उसको अपनी मां और बापू दोनों ही को मनाना पड़ा था.

जिस दिन निराली और उसकी मां ने बस्ती में कदम रखा, उस दिन वह बेहद प्रसन्न था. लगता था कि बहुत बड़ी जीत हासिल हुई है। इन दिनों निराली की मां बीमार रहती है. उसको घर का सारा काम करना पड़ता है. टोपीलाल से बातचीत के लिए वह समय ही नहीं निकाल पाती.

'क्या सोच रहा है, टोपी?' बराबर में लेटी मां ने टोपीलाल को लगातार करवट बदलते देखा तो पूछ लिया. इसपर वह चौंक पड़ा. वह माने हुए था कि मां थकान के कारण नींद में है. पर आवाज से तो लगा कि वह उसकी हर एक सांस, हर एक धड़कन और उसकी हर एक गतिविधि पर नजर जमाए हुए है.

'कुछ नहीं, कुछ भी तो नहीं!' मां से कभी, कुछ भी न छिपाने वाले टोपीलाल ने झूठ बोला. इसपर मन में कहीं कुछ कचोट भी हुई।

'लगता है तेरी तबियत ठीक नहीं है. आज शाम ही से देख रही हूं कि तू परेशान है. निराली की मां तो ठीक है न!'

'हां, बद्री काका ने बुखार की गोलियां दी हैं. कहा है कि सुबह तक पूरी तरह ठीक हो जाएंगी.'

'निराली बहुत अच्छी लड़की है. बेचारी को छोटी-सी उम्र में ही कारण कष्ट भोगना पड़ रहा है. लेकिन तू परेशान क्यों होता है. सुख-दुःख तो जिंदगी में लगे ही रहते हैं.' मां ने प्यार जताया तो टोपीलाल से न रहा गया. उसका मन पसीज गया. मन की गांठे अपने आप खुलने लगीं. फिर तो प्रारंभ से अंत तक की सारी बातें, सभी गांठें उसने एक-एक कर मां के सामने खोलकर रख दीं. मां शांत मन से सुनती रही, गुनती रही. हौले-हौले तसल्ली भी देती रही।

टोपीलाल की बात समाप्त हुई तब उसने कहा

'बेटा, इस दुनिया में बुरे लोग भले ही ज्यादा नजर आते हों, पर अच्छे लोग भी कम नहीं हैं. ऐसे लोग सिर्फ अपनी आत्मा का कहा मानते हैं. कोई और उनके बारे में क्या सोचता है, वे इस बात की परवाह ही नहीं करते. इसलिए इस बात की चिंता छोड़ कि तेरी गलती से बद्री काका पर क्या प्रभाव पड़ेगा. वे क्या सोचेंगे. बुरा मानेंगे या नादानी समझकर बिसार देंगे. अपना देख, लोगों पर विश्वास करना सीख. दूसरों के साथ वैसा ही बर्ताव कर, जैसा तू उनसे अपने साथ चाहता है.'

'दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करो, जैसा तुम उनसे अपने लिए उम्मीद रखते हो.' टोपीलाल को आज एक नया गुरुमंत्र मिला. उसको लगा कि उसकी आंखों के आगे छाया अंधेरा छंट चुका है. भावनाएं गंगाजल-सी प्रवाहमान हैं. मस्तिष्क पुनः जाग्रत हो चुका है. वह हल्का होकर नीलगगन में उड़ान भरने को फिर से तैयार है. भावावेश में वह मां के सीने से लग गया

'मां, अगर तुम पढ़-लिख जातीं तो स्कूल में जरूर मास्टरनी होतीं.'

'नहीं रे! मैं औरत हूं. पढ़-लिखकर और चाहे जो भी बनती, पर पहले मैं मां ही होती.'

'सचमुच!' कहते हुए टोपीलाल मां से चिपट गया. रात अपनी पींगे बढ़ाए जा रही थी. नींद का हिंडोला सज चुका था. उसे सपनों की सैर कराने, दूर तारों के उस पार ले

जाने के लिए.

*

लंबी से लंबी यात्रा का आनंद तभी तक है, जब तक कि पांव जमीन पर होने का एहसास हो.

अगले दिन टोपीलाल की आंखें मां के साथ ही खुल गईं. वह उठ बैठा. मां चूल्हा सुलगाने की तैयारी करने लगी. उससे अनुमति लेकर वह अपने तंबुनुमा घर से बाहर निकला. फिर तेज कदमों से चलता हुआ सीधा उस स्थान पर पहुंचा, जहां बद्री काका को सोते हुए छोड़ा था. टोले के प्रायः सभी मर्द देर से उठते थे. औरतों को घर का काम निपटाना होता, वे मुंह-अंधेरे काम पर जुट जातीं. इसलिए इतने सवेरे बद्री काका को अपने स्थान से गायब देखकर वह हैरान रह गया.

बिल्डिंग में ही जीने की ओट में बद्री काका को देख वह उनकी ओर बढ़ गया. वे व्यायाम कर रहे थे.

'तुम! इतने सवेरे, क्या रात को नींद नहीं आई?'

'मैं तो बस आपसे मिलने चला आया...!' टोपीलाल ने उत्तर दिया.

'ऐसी भी क्या जल्दी थी?'

'कल आप बता रहे थे कि आपको राष्ट्रपति जी ने भेजा है? तब तो आप हम बच्चों को पढ़ाने के लिए आए होंगे?'

'ठीक समझे.' बद्री काका ने धोती बांधते हुए कहा, 'मैं बच्चों को ही नहीं, बड़ों को भी पढ़ाऊंगा. सुबह की पारी में बच्चे और शाम की पारी में बड़े. हर सप्ताह में एक दिन बच्चों और बड़ों को साथ-साथ बिठाकर टेस्ट लिया करूंगा...उसमें जो सबसे ज्यादा अंक लाएगा, उसको पुरस्कार भी मिलेगा.' बद्री काका ने बताया.

'हमारे पास तो कॉपी-कलम-पुस्तकें कुछ भी नहीं हैं...' टोपीलाल ने अपनी समस्या बताई.

'घबराओ मत, उनका इंतजाम हो जाएगा.'

'सभी बच्चों के लिए...?'

'हां, सभी बच्चों के लिए।'

'बड़े तो कमाते हैं, न?'

'उनके लिए भी किताब-कॉपी मुफ्त मिला करेंगी.'

'बड़ों के लिए भी...फिर तो बहुत रुपयों की जरूरत पड़ेगी.'

'हमारे सिर पर राष्ट्रपति जी का आशीर्वाद है. फिर किस बात की चिंता.'

'राष्ट्रपति जी के पास क्या इतने रुपये हैं?'

'राष्ट्रपति जी को रुपये-पैसों की जरूरत नहीं पड़ती...उन्हें तो काम करने वाले

नागरिकों की जरूरत होती है. ऐसे लोग उनसे प्रेरणा लेकर अपने आप खिंचे चले आते हैं. और जब कारबां बनता है तो बाकी चीजें भी जुट ही जाती हैं.' बद्री काका की बात टोपीलाल के सिर के ऊपर से गुजर गई. वह उनका मुंह देखने लगा

'चलो, वहां खुली हवा में बैठकर बात करते हैं, सुबह-सुबह शरीर को ताजी हवा मिले तो देह पूरे दिन खिली-खिली रहती है.' बद्री काका बोले और बिल्डिंग के सामने खड़े अशोक के वृक्ष की ओर बढ़ गए. चलते-चलते टोपीलाल का हाथ न जाने कब उनके हाथों में चला गया, उसको पता ही न चला. टोपीलाल को यह एहसास सुखद लगा. वह देर तक उनके स्नेहिल स्पर्श को अनुभव करता रहा. बैठने के बाद बद्री काका फिर उसी विषय पर लौट आए

'मैं कह रहा था कि काम करने वाले नागरिक राष्ट्रपति जी से मिलने अपने आप चले आते हैं. असल बात यह है कि ऊंचे सोच, लंबी देशसेवा तथा सर्वस्व समर्पण के बाद ही कोई व्यक्ति राष्ट्रपति के आसन तक पहुंच पाता है. ऐसे महापुरुष का जीवन तो आदर्श की स्वयं मिसाल होता है. इसलिए उनका व्यक्तित्व लाखों लोगों को प्रेरणा देता है. उनसे प्रभावित लोग ऐसे कार्यों में खुशी-खुशी योगदान देते हैं. मैं राष्ट्रपति जी का बेहद आभारी हूं कि इस काम के लिए उन्होंने हमारी संस्था को चुना है.'

'संस्था?'

'संस्था माने एक मकसद, एक लक्ष्य, एक अभियान और समझो तो एक चुनौती भी, जिसको पूरा करने के लिए मुझ जैसे अनेक लोग, निःस्वार्थ-भाव से एकजुट हो जाते हैं. ऐसे लोगों की गिनती करोड़ों में है. वे पूरे देश में फैले हुए हैं.'

'क्या सचमुच राष्ट्रपति जी को मेरी बिना टिकट लगी चिट्ठी मिली थी?'

'हां, उस डाकिया की मेहरबानी से. तुम्हारी ईमानदारी से प्रभावित होकर उसने तुम्हारे पत्र पर अपनी ओर से डाक टिकट चिपका दिए थे. साथ में एक छोटी-सी पर्ची भी लिख छोड़ी थी. तुम्हारे पत्र और उस पर्ची की छायाप्रतियां मेरे पास भी हैं. जानते हो उसमें डाकिया ने तुम्हारे बारे में क्या लिखा है?'

'मैं भला कैसे जानूंगा?'

'अभी सुनाता हूं...' कहते हुए बद्री काका ने अपनी जॉकेट की जेब में हाथ डाला. पर्ची निकाली और पढ़ने लगे, ''सुनो, उस भले आदमी ने लिखा है

'माननीय राष्ट्रपति जी! जिस बच्चे ने यह चिट्ठी मुझे सौंपी है, वह बहुत ही भोला है. यह भी नहीं जानता कि पत्र को डाक विभाग को सौंपने से पहले उसपर डाक टिकट लगाना आवश्यक होता है. पर वह बालक है बहुत ईमानदार. देखने पर यह भी लगता है कि उसके माता-पिता बहुत गरीब हैं. वे मेरे कार्यक्षेत्र के कहीं पास ही मेहनत-मजदूरी करते हैं. लड़के को मैंने कई बार सड़क पर भटकते देखा है. लगता है माता-पिता के काम पर चले जाने के बाद वह वक्त बिताने के लिए इधर-उधर निकल जाता है.

बच्चा ईमानदार है. एक मामूली कलम को लौटाने के लिए भी वह बहुत दूर चलकर आया था. वह दूसरों के दुःख को समझता है। दिल में परोपकार की भावना है. साथ में पढ़ने की ललक भी. ढंग का मौका मिले तो बहुत आगे तक जा सकता है। ये सब बातें उसके पत्र से जाहिर हो जाएंगी. यदि संभव हो तो उस बच्चे की पढ़ने की इच्छा पूरी करने के लिए सभी जरूरी उपाय किए जाएं.

महोदय! मैं जानता हूं कि दूसरे का पत्र पढ़ना और उसके साथ अपनी और से कुछ जोड़ना अपराध है. पर मैं भी क्या करता! अपनी चिट्ठी सौंपने से पहले उस बच्चे ने मुझे कुछ भी नहीं बताया था. यहां तक कि अपना नाम भी नहीं. इसलिए बच्चे का मकसद समझने के लिए मुझे उसका पत्र पढ़ना पड़ा. मैं उससे बहुत प्रभावित हूं. इसलिए मान्यवर के सामने अपनी ओर से कुछ निवेदन करने का साहस जुटा पाया हूं...'

पर्ची पर लिखी इबारत पूरी पढ़ने के बाद बद्री काका ने उसको जेब के हवाले किया. फिर बोले'तुम्हारी चिट्ठी ने राष्ट्रपति महोदय को बहुत प्रभावित किया. उन्होंने तत्काल मुझे याद किया और मुझे यहां पहुंचने की जिम्मेदारी सौंप दी. चलते समय राष्ट्रपति जी ने जो कहा, वह मैं कभी नहीं भूल पाऊंगा.'

'ऐसा क्या कहा था उन्होंने?' टोपीलाल की जिज्ञासा बढ़ चुकी थी.

'उन्होंने कहा थावहां टोपीलाल जैसे गुणवान बच्चे और भी हो सकते हैं. धूल में छिपे हीरकणों जैसे. उन सभी को खोजकर, उनकी प्रतिभा को निखारने, उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाकर समाज के सामने लाने की जिम्मेदारी मैं आपको सौंप रहा हूं. यह एक बड़ा दायित्व है. पर मैं जानता हूं कि महात्मा गांधी और विनोबा भावे के सान्निध्य में रहकर आपको ऐसे कार्य साधने का अच्छा-खासा अभ्यास हो चुका है.'

उस दायित्व-भार से मैं खुद को धन्य समझने लगा था. फिर तो बिना पल गंवाए मैंने अपना झोला उठाया और तुम्हारे पास चला आया. राष्ट्रपति जी ने मुझसे कहा है कि मैं तुमसे मदद लूं. आगे जिधर भी कदम उठें, उधर हम दोनों साथ-साथ रहें.'

'मेरी मदद! मैं आपकी भला क्या मदद कर सकता हूं?' मनोयोग से बद्री काका की बात सुन रहा टोपीलाल एकाएक चौंक पड़ा.

'तुम्हीं मुझे बताओगे कि यहां कितने बच्चे हैं जो पढ़ना चाहते हैं. उन सबको तुम मेरे पास लाओगे. जो बच्चे पढ़ने से बचते हैं, उन्हें तुम पढ़ाई-लिखाई की आवश्यकता के बारे में बताओगे. जरूरत पड़े तो उन्हें मेरे पास भी ला सकते हो, ताकि मैं उन्हें पढ़ने के लिए तैयार कर सकूं. क्या तुम मुझे अपने माता-पिता से नहीं मिलवाओगे?'

'मां और बापू से भी...?'

'यह बताने के लिए कि उनका बेटा कितना समझदार है. मैं उनसे यह निवेदन भी करूंगा कि बच्चों और बड़ों को शिक्षित बनाना, हम सबकी मिली-जुली जिम्मेदारी है. इसलिए वे हमारा साथ दें. टोले के बड़े लोगों को भी अक्षर-ज्ञान के लिए आगे लाएं. तभी मेरे यहां

आने का उद्देश्य पूरा हो सकता है.'

टोपीलाल को वे सभी बातें एक सपना, हवाई उड़ान जैसी ऊंची कल्पनाजन्य और अविश्वसनीय लग रही थीं. मगर जो था, वह उसकी आंखों के सामने था. जो कहा गया था, उसकी ध्वनि उसके कानों में गूंज रही थी.

'क्या निराली भी मेरे साथ पढ़ेगी?'

'सभी बच्चे एकसाथ पढ़ेंगे.'

'उसकी तो मां बीमार रहती है! वह बेचारी तो आ ही नहीं पाएगी!' कहते-कहते टोपीलाल उदास हो गया.

'यह चिंता तुम छोड़ दो. निराली की मां की हालत यदि जल्द ही न सुधरी तो हम उन्हें अस्पताल भिजवा देंगे. जहां डॉक्टर और नर्स उनकी देखभाल करेंगे. वहां से कुछ ही दिनों में स्वस्थ्य होकर वह घर लौट आएंगी। उसके बाद तो निराली के पास समय ही समय होगा, क्यों?'

'जी!' टोपीलाल बस यही कह सका. उसी समय उसकी मां की आवाज गूंजी. वह तत्काल खड़ा हो गया

'अरे! बातों-बातों में मैं यह तो भूल ही गया कि मां और बापू के काम पर जाने का समय हो चुका है. दोनों मेरा इंतजार कर रहे होंगे...मैं जल्दी ही आऊंगा.'

टोपीलाल ने घर की ओर दौड़ लगा दी. उस दौड़ में आत्मविश्वास था. मन में थे अनगिनत सपने और आगे बढ़ने का अटूट संकल्प. बद्री काका उसको जाते हुए देखते रहे. उसके बाद वे अपने ठिकाने की ओर बढ़ गए. उस समय उनके चेहरे पर अलौकिक मुस्कान थी. दिल में विश्वास और चेहरे पर था अभूतपूर्व तेज. खुद पर भरोसा और मन में दूसरों के कल्याण की कामना हो तो ऐसा तेज स्वतः आभासित होने लगता है.

सच्चे कर्मयोगी का जीवन मिश्री का पहाड़ होता है, जो मिठास रखता है, मिठास बांटता है और मिठास जीता भी है.

*

नेकी हजार फसल देती है। सुंदरता और मिठास दोनों ही मामलों में मिश्री जैसी कोई मिसाल नहीं.

बद्री काका ने टोपीलाल से कहा था, पांच साल से ऊपर के बच्चों को बुलाकर लाने को. बस्ती में ऐसे बीसियों बच्चे थे. उनमें से कुछ से उसकी दोस्ती भी थी. बद्री काका के कहने पर एक-एक के पास टोपीलाल पहुंचा. हर एक को बद्री काका के आगमन की खबर दी. उनके आने का उद्देश्य बताया. कहा भी कि वे उन्हें बिना फीस पढ़ना सिखाएंगे. कि आदमी के लिए कितना जरूरी है पढ़ना. इसके लिए उन्हें स्कूल जाने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी. जहां हम हैं, वहीं स्कूल बन जाएगा.

और कॉपी-किताब के लिए तो जरा-भी परेशान न हों. माता-पिता को एक पाई भी खर्चने की जरूरत नहीं। बद्री काका ने हर चीज के इंतजाम का आश्वासन दिया है. बिलकुल मुफ्त. यह कोई छोटी बात नहीं. इसलिए आज शाम को सभी बच्चे दो घंटा पहले खेलना छोड़कर, सीधे बद्री काका के पास पहुंचें. उन्होंने कहा है कि वे आज ही से पढ़ाई आरंभ करना चाहते हैं.

बच्चों ने उसकी बात को सुना. कुछ ने समय पर पहुंच जाने का आश्वासन दिया. कुछ ने अच्छा कहा। कुछ ऐसे भी थे जिन्होंने उसकी जमकर खिल्ली उड़ाई. कुछ ने तो पढ़ाई की उपयोगिता पर ही सवाल खड़े कर दिए. टोपीलाल ने सब सुना. मन में उम्मीद लिए वह आगे बढ़ता गया.

उस दिन टोपीलाल बच्चों के अभिभावकों से भी मिला. बद्री काका एक-एक को समझाने उसके पास गए तो वह उनके साथ रहा. कहा था कि बच्चों को पढ़ाएं. कि जरूरी नहीं है मजदूर का बेटा मजदूर, मिस्त्री का बेटा मिस्त्री ही बने. वह व्यापारी, अधिकारी, डॉक्टर, इंजीनियर या वकील कुछ भी बन सकता है. जो जिम्मेदारी उनके माता-पिता उनके लिए नहीं उठा पाए, उसे अब वे अपने बच्चों के लिए उठाएं. उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें. उनमें संघर्ष की भावना जगाएं. ताकि पीढ़ियां बदलें, उनके संस्कार बदलें और मिल-जुलकर युग में बदलाव लाएं.

दिन बीता, पर कड़वे अनुभव के साथ. टोपीलाल के जीवन का शायद सबसे कड़वा अनुभव. अपने अनपढ़ होने का रोना रोने वाले माता-पिता में से एक ने भी अपने बच्चों को बद्री काका के पास जाने की अनुमति नहीं दी. कुछ तो पढ़ाई के नाम से ही जी चुराते दिखे. कुछ ने साफ मना कर दिया. कुछ ने हंसकर टाल दिया. कुछ ने कह दिया कि दूसरों को मनाओ. वे तो तैयार ही हैं. जबकि कुछ ने उसकी खिंचाई करने का प्रयास भी किया

पढ़-लिखकर भी क्या करेंगे, मेहनत-मजदूरी...दूसरों की गुलामी! वह तो बिना पढ़े करते ही आए हैं.

पढ़े-लिखे बेरोजगार सड़कों पर चप्पल चटकाते घूमते हैं. काम मिल ही नहीं पाता. इससे तो अच्छा है कि बेरोजगार बनकर जियो. मजदूर बनकर कमा-खाओ.

जब पढ़-लिखकर भी पसीना ही बहाना है, तो उसमें अपना समय क्यों बरबाद किया जाए.

पेट तो जमीन से भरता है, आसमान की ओर ताकते रहने से भला किसका गुजारा हुआ है!

बुजुर्ग कहते आए हैं कि सब्र करो, संतोष धारण करो. उसी का फल मीठा निकलता है.

एक विधवा मजदूरिन के एक ही बेटी थी. मां दिन-भर ईंट और मसाला ढोती. बेटी घर पर अकेली रहती. टोपीलाल उसके पास भी गया. कहा कि अपनी बेटी को पढ़ने के

लिए बद्री काका के पास भेजे. पढ़-लिख जाएगी तो जिंदगी में काम आएगा. मजदूरिन अपना ही दुखड़ा रोने लगी

'बेटा, मैं तो चाहती हूं कि वह थोड़ा-बहुत पढ़ ले. लेकिन अगर वह स्कूल जाने लगी तो घर का काम कौन निपटाएगा. रोटी-दाल तो चलो मैं ही बना लेती हूं. परंतु झाड़ू-बुहार का काम, बकरी की देखभाल, इतना काम मुझ अकेली से कैसे सधेगा?'

'कहीं दूर थोड़े ही जाना है. फिर दो घंटे की बात...मैंने कुक्की से बात की है. वह कह रही थी कि घर का सारा काम वह इसी तरह करती रहेगी, जैसे कि अब तक करती आई है. आपको जरा-भी परेशानी नहीं होगी.'

'चलो मान लिया...कुक्की मेरी अच्छी बेटी है...वह मेहनती भी है. जितना हाथ वह अब तक बंटाती आई, उतना आगे भी बंटाती रहेगी. पर बेटा तुम एक बात नहीं समझते. हर लड़की को एक न एक दिन पराये घर जाना ही पड़ता है. वहां कोई हंसी न उड़ाए, इसलिए उसको घर का काम आना ही चाहिए. उसे सीखने की यही उम्र है. चौके-चूल्हे का काम आ जाए तो अपना घर आसानी से संभाल लेगी. वरना ससुराल में सब यही कहेंगे कि बिना बाप की बेटी को मां से कुछ सिखाते न बना.'

'कुक्की यदि पढ़-लिख जाएगी तो घर और भी जिम्मेदारी से चला सकेगी.' टोपीलाल ने बात काटी. अपने से बड़ों से वह अधिक बोलता नहीं था. बात पसंद न हो तो सिर्फ चुप्पी साध लेता. मगर उस समय कुक्की की मां को समझाने के लिए वह एक के बाद एक तर्क दिए जा रहा था. टोपीलाल को विश्वास था कि उसका आखिरी तर्क कुक्की की मां को अवश्य ही निरुत्तर कर देगा. मगर कुक्की की मां के तरकश में अब भी कई तीर बाकी थे, जिनकी काट टोपीलाल के पास भी नहीं थी

'तू अभी नादान है. नहीं जानता कि बेटी के ब्याह के समय मां-बाप को कितनी मुश्किलें उठानी पड़ती हैं. कुक्की का बाप होता तो मुझे चिंता न होती. वह खुद संभाल लेता. पर अब तो इसके हाथ पीले करने की जिम्मेदारी मेरी ही है. लड़की अगर पढ़ी-लिखी हो तो पढ़ा-लिखा लड़का भी तलाशना पड़ता है. उसके लिए ज्यादा दहेज भी चाहिए. मैं विधवा मजदूर उतना दहेज कहां से जुटा पाऊंगी.'

टोपीलाल के पास इसका कोई जवाब न था. निरुत्तर हो वह वापस लौट आया. उसके बाद जिसके भी पास वह गया, उसके पास पढ़ाई से बचने के अनगिनत बहाने थे. न था तो सिर्फ पढ़ाई से जुड़ने का इरादा. पढ़-लिखकर कुछ बनने का संकल्प. उसके लिए यह हैरान और परेशान करने वाली स्थिति थी. उसके अब तक के सोच के एकदम उलट.

हाल के वर्षों में उसने न जाने कितने अरमान अपनी शिक्षा को लेकर पाले थे. न जाने कितनी बार यह सपना देखा था कि एक दिन वह भी स्कूल जाने लगेगा. कि वह पढ़-लिखकर एक कामयाब इंसान बनेगा. कि मां और बापू की तरह केवल मजदूरी या मिस्त्रीगीरी ही नहीं अपनाएगा. वे काम करेगा जो पढ़े-लिखे लोग करते हैं. कि बड़ा होकर

मां-बाप दोनों को सुख और सम्मान का जीवन दे सकेगा.

जाने क्यों, वह सोच बैठा था कि बस्ती का प्रत्येक बालक खुशी-खुशी पाठशाला जाने की सहमति दे देगा. उनके माता-पिता भी पढ़ने से क्यों रोकेंगे? इससे उनको लाभ ही होगा. मगर उस एक दिन में जो कुछ हुआ वह उसके सारे अरमानों पर पानी फेरने को काफी था.

दिन-भर की दौड़-धूप के बाद जब वह बद्री काका के पास पहुंचा तो बेहद थका हुआ था. पसीना उसके माथे पर था. चेहरा लटका हुआ, दिल में उदासी थी, आंखों में निराशा की स्याही. अरमान मरे-मरे थे.

'अच्छा हुआ तुम आ गए. मैं पढ़ाई आरंभ करने का सोच ही रहा था. आओ बैठो! आज हम पहला पाठ सीखने की कोशिश करेंगे.' टोपीलाल को अकेला देख अनुभव-पके बद्री काका को और कुछ पूछने की जरूरत ही नहीं पड़ी, मानो बिना बताए सबकुछ समझ गए हों. उनके हाथ में पुस्तक थी. आंखों पर मोटा चश्मा. सामने केवल टोपीलाल था और निराली. इसके बावजूद बद्री काका का पढ़ाने का अंदाज ऐसा था, जैसे पूरी कक्षा को पढ़ा रहे हों

'बच्चो! मैं पहला पाठ शुरू करूं उससे पहले आपका यह जान लेना जरूरी है कि जीवन में केवल वही लोग तरक्की करते हैं, जिन्हें समय का सम्मान करना आता है, जो उसकी उपयोगिता को महसूस करते हैं. उसके साथ-साथ चलते हैं. समय सुस्त लोगों से कन्नी काटकर आगे बढ़ जाता है. वह कभी फिसड्डी लोगों के फेर में नहीं पड़ता. इसलिए तुम आज यदि कुछ बनने का संकल्प लेने जा रहे हो, तो एक संकल्प यह भी अवश्य लेना कि हम अपना हर काम तय समय पर पूरा करेंगे. हमारे पास जितना समय है, उसके प्रत्येक पल का सदुपयोग करेंगे. कभी लापरवाही नहीं करेंगे, न कभी आलस ही दिखाएंगे.'

'काका, क्या यह नहीं हो सकता कि हम कल से पाठ आरंभ करें. मुझे उम्मीद है कि कल से कुछ बच्चे जरूर आने लगेंगे.' टोपीलाल ने बीच में टोका. इसपर बद्री काका मुस्करा दिए.

'जो बच्चे कल आएंगे, उन्हें भी हम पढ़ाएंगे. पर आज आए बच्चों के लिए जो पाठ जरूरी है, तुम उसी पर ध्यान दो.' इसके बाद वे एक घंटे तक पूरे मनोयोग से पढ़ाते रहे. इस बीच प्रश्नोत्तर भी चलता रहा. टोपीलाल और निराली ने जो भी जानना चाहा, बद्री काका ने उसका स्नेहपूर्वक जवाब दिया. समय कब बीता, उन दोनों को पता भी न चला.

'बच्चो, आज का पाठ हम यहीं पर समाप्त करते हैं. कल आप सब इसको दोहरा कर आना.' कहकर बद्री काका ने उस दिन की पढ़ाई का समापन किया. चलने लगे तो उन्होंने टोपीलाल और निराली को कुछ पुस्तकें, कॉपियां और पेंसिल वगैरह भेंट कीं

'इन्हें आखिरी मत समझना. होशियार बच्चों को इस तरह के उपहार पाने की आदत

डाल लेनी चाहिए.'

टोपीलाल चलने लगा तो बद्री काका ने कंधे पर हाथ रखकर अनुरागमय स्वर में कहा'किसी अच्छे काम की शुरुआत भले ही एक आदमी द्वारा हो, मगर लोग उसके साथ मिलते चले जाते हैं. धीरे-धीरे पूरा कारवां बन जाता है. जबकि बुरे काम की शुरुआत यदि हजार लोग भी करें तो वह भीड़ एक-एक कर छंटती चली जाती है. अंत में एक या दो बचते हैं, जिन्हें समाज अपराधी मानकर धिक्कारता, कानून दंडित करता है, समझे!'

'जी...!'

'क्या?'

'यही कि महान व्यक्ति के पीछे पूरा कारवां होता है, जबकि पापी अक्सर अकेला पड़ जाता है.'

'शाबाश! मुझे लगता है कि अब मैं राष्ट्रपति जी के विश्वास की रक्षा कर सकूंगा।' कहते समय बद्री काका के चेहरे पर चमक आ गई.

'मेरे तो कुछ भी पल्ले नहीं पड़ा...क्या कल भी हम दोनों ही होंगे?' घर लौटते समय निराली ने पूछा.

'संभव है, लेकिन सदा नहीं...' भरे विश्वास के साथ टोपीलाल ने कहा, 'पर हम दोनों तो होंगे ही.'

'हां.' निराली ने स्वीकृति दी. वह जान चुकी थी कि अच्छे कार्य के प्रति भरोसा समाज को अच्छाई की तरफ ही ले जाता है.

उद्देश्य की पवित्रता आत्मविश्वास भी जगाती है.

*

विकास अपने साथ कुछ विकृतियां लाता है. उनसे बचना इंसान के बुद्धि-कौशल की कसौटी बन जाता है और उनपर नजर रखना समय की जरूरत.

एक सप्ताह में ही टोपीलाल की उदासी छंट गई. बद्री काका की कोशिशें रंग लाने लगी. दस दिन के भीतर ही खुली पाठशाला में आने वाले बच्चों की संख्या पंद्रह से ऊपर पहुंच चुकी थी. और तो और कुक्की भी पाठशाला आने लगी. उसकी मां खुद उसको पाठशाला छोड़कर गई थी

'मेरे बुढ़ापे का बोझ यह बच्ची क्यों सहे. इसे अब आप ही संभाले गुरु जी!'

बद्री काका सुनकर मुस्कुरा दिए थे।

पाठशाला का समय भी तय हो चुका था. बद्री काका सुबह चार बजे जाग जाते. व्यायाम के पश्चात वे थोड़ा दूध लेते. कुछ समय अध्ययन के लिए निकालते. बच्चों के आने का समय होता तो ईंटों के चूल्हे पर खिचड़ी पकाने के लिए रख देते. आठ बजे तक सभी विद्यार्थी उपस्थित हो जाते. जो नहीं आ पाता, उसको बुलाने के लिए वे खुद उसके

घर जाते. सवा आठ बजे पढ़ाई आरंभ हो जाती.

इस बीच उनके सामान में भी वृद्धि हुई थी. लकड़ी की एक बड़ी पेटी मंगवाई गई थी. उसमें बच्चों को देने वाली पुस्तकें तथा अन्य लेखन-सामग्री सुरक्षित रखी जाती. ठीक साढ़े दस बजे मध्याह्न होता. उससे पहले ही पतीली में गर्मागरम खिचड़ी परोसे जाने का इंतजार करने लगती. अपने विद्यार्थियों के साथ बद्री काका भी उसका सेवन करते. ग्यारह बजे पढ़ाई दुबारा आरंभ हो जाती. जो आगे दो घंटों तक चलती. उसके बाद बच्चे घर जाते और बद्री काका भोजन करने के लिए बढ़ जाते.

बद्री काका को खुद खाना बनाते देख टोले के लोगों ने ही आग्रह किया था कि उनके लिए खाना बनवा दिया करेंगे. इस प्रस्ताव पर बद्री काका एक शर्त पर राजी हुए थे. शर्त के अनुसार जो बच्चे बद्री काका के पास पढ़ने आते थे, उनके घर बारी-बारी से आटा और जरूरी सामग्री सवेरे ही पहुंचा आते. दोपहर को वहां से पका-पकाया भोजन प्राप्त हो जाता.

पाठशाला में शाम की पारी बड़ों के अक्षर-ज्ञान के लिए निर्धारित थी. शाम के पांच बजे चिनाई का काम बंद हो जाता. एक घंटा लोगों को उनके जरूरी कामों से मुक्त होने के लिए मिलता. छह बजे प्रौढ़ पाठशाला आरंभ होती. विद्यार्थी जुटने लगते.

बड़ों की पाठशाला की हालत और भी खराब थी। दो सप्ताह बाद भी मुश्किल से पांच-छह विद्यार्थी हो पाए थे. बद्री काका इस प्रगति से असंतुष्ट थे. परंतु निराश बिलकुल न थे. उनका दिमाग तेजी से सोच रहा था. और तब अपने प्रौढ़ विद्यार्थियों को आकर्षित करने के लिए बद्री काका ने एक तरकीब निकाली.

शाम को ठीक छह बजे जैसे ही कुछ विद्यार्थी जमा होते, बद्री काका कोई न कोई किस्सा-कहानी छेड़ देते. किस्सा सुनाने का उनका ढंग निराला था. सुनाते समय उनके स्वर का उतार-चढ़ाव ध्वनि को संगीतमय बना देता. उसके आकर्षण से लोग खिंचे चले आते.

कुछ दिन बाद बद्री काका ने अनुभव किया कि उनके प्रौढ़ विद्यार्थियों में भी अच्छे-खासे कलाकार छिपे हैं. कोई ढोला सुर से गाता है, तो किसी का गला आल्हा पर सधा है. कुछ को दूसरों की हू-ब-हू नकल उतारने में महारत हासिल है. जब वे अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करते तो बच्चे और बड़े हंसते-हंसते लोट-पोट हो जाते थे.

बद्री काका को तोड़ मिल गया. उनकी निराशा छंटने लगी. उन्होंने व्यवस्था में बदलाव किया. पाठशाला की शुरुआत किसी भजन, आल्हा या ढोले से होने लगी. जब तक वह समाप्त होता, तब तक पचीस-तीस मजदूर जमा हो जाते. एक पूरी कक्षा की उपस्थिति. उसके बाद बद्री काका उन्हें अक्षर-ज्ञान कराना शुरू करते.

कुछ दिन यह व्यवस्था कारगर रही. फिर बद्री काका ने अनुभव किया कि कुछ लोग मनोरंजन कार्यक्रम समाप्त होते ही उठ जाते हैं. पढ़ाई के काम में रुचि ही नहीं लेते. या मनोरंजन कार्यक्रम को लंबा खींचने का अनुरोध करते रहते हैं. इससे उनका उद्देश्य पूरा

नहीं हो पाता. अतः मनोरंजन कार्यक्रम के समय में सुधार किया गया. पाठशाला की दैनिक शुरुआत तो उसी से होती. मगर जैसे ही वह अपने शिखर पर पहुंचने को होता, बद्री काका उसको बीच ही मैं रुकवा देते.

'अब कुछ देर के लिए हम पढ़ाई पर ध्यान देंगे. घबराइए मत, यह पढ़ाई भी एक प्रकार का खेल ही है, दिमाग का खेल. अपने दिमाग में कुछ जरूरी चीजें, थोड़ा-सा ज्ञान भर लेने की कसरत. जो वक्त पर काम आए. हमारी जिंदगी की राह को आसान करे, हमें समझाए कि हम यदि मनुष्य हैं तो इसके क्या मायने हैं...'

'पर महाराज, गीत के दो-चार बोल और सुनने को मिल जाएं तो...गायक ने समां बांध रखा था, वाह!'

'दो-चार नहीं पूरे आधा घंटे और सुनने को मिलेगा. फरमाइश होगी तो वह भी पूरी की जाएगी. लेकिन फिलहाल पढ़ाई...केवल पढ़ाई.' बद्री काका दृढ़ स्वर में कहते और पुस्तक निकालकर पढ़ाने को तैयार हो जाते. अनमने भाव से लोगों को भी पढ़ने का नाटक करना पड़ता.

और नाटक भी अकारथ तो जाता नहीं.

उस दिन बद्री काका ने दिनारंभ में पढ़ाई की शुरुआत की तो उनके बाल शिष्य उखड़े हुए थे

'हम आपसे नहीं पढ़ेंगे...आप पक्षपात करते हैं.' टोपीलाल जो दूसरे विद्यार्थियों का अगुआ बना हुआ था, बोला.

'आप हमें निरा बच्चा समझते हैं...!' कुक्की ने भी साथ दिया. बद्री काका ने महसूस किया कि पूरी कक्षा टोपीलाल और कुक्की के साथ है. कारण उनकी समझ से परे था

'ऐसी क्या बात है?'

'आप ही सोचिए...हम आपसे क्यों नाराज हैं?' निराली ने बनावटी गुस्से में बोली.

'बूढ़े आदमी की अक्ल तो वैसे ही घास चरने चली जाती है.' बद्री काका ने कुछ ऐसे कहा कि पूरी कक्षा की हंसी छूट गई.

'आप अपने बड़े विद्यार्थियों को तो खूब कहानी-किस्से सुनाते हैं. आल्हा और भजन भी होते हैं...पर बच्चों के पीछे पड़े रहते हैं कि सिर्फ इन किताबों में सिर खपाते रहो. यह पक्षपात नहीं तो और क्या है!' बद्री काका को अपनी गलती का एहसास हुआ.

'सचमुच मुझसे भारी भूल हुई है. मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए था. आगे से आपके साथ यह अन्याय नहीं होगा, बल्कि हम आज ही से...' तभी किसी बच्चे के रोने का स्वर सुनाई पड़ा. बद्री काका कहते-कहते रुक गए. सबका ध्यान उस बच्चे की ओर चला गया.

'अरे! यह तो सदानंद है...' एक बच्चे ने पहचाना. साथ ही कक्षा में चुप्पी छा गई. बद्री काका पढ़ाना छोड़कर उस बच्चे की ओर बढ़ गए.

'क्या हुआ बेटे?' उन्होंने सदानंद के सामने बैठ उसके आंसू पौंछते हुए कहा.

'मैं भी पढ़ना चाहता हूं. लेकिन काका आने से मना करता है. आज मैंने जिद की तो उसने खूब पिटाई की...'

'क्या नाम है तुम्हारे पिता का.'

'जियानंद!' लड़के ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया.

'वे तुम्हें रोकते क्यों हैं?' सदानंद चुप्पी साधे रहा.

'गुरुजी मैं बताऊं...' टोपीलाल उठकर बोला. बद्री काका ने उसकी ओर देखा. वह बताने लगा'सदानंद के पिता अच्छे-खासे मिस्त्री हैं. टोले के दूसरे मिस्त्री उनके काम की तारीफ करते थे. लेकिन न जाने कब उन्हें शराब की लत गई. उसके बाद से उनका काम से ध्यान हटता चला गया. टोले में बदनाम भी होने लगे.

अब तो हालत यह है कि रोज शाम को पीने को न मिले तो वे उखड़ जाते हैं. लेकिन शराब खरीदने के लिए रुपये भी चाहिए. इसलिए शौक को पूरा करने के लिए उन्हें चोरी की लत और लग गई. पिछले सप्ताह उन्हें चिनाई का लोहा कबाड़ी को बेचते हुए पकड़ लिया गया. इसपर मालिक ने उन्हें काम पर आने की पाबंदी लगा दी थी.

बापू के कहने पर उन्हें काम पर तो रख लिया गया, लेकिन अब उनपर नजर रखी जाती है. उनकी मजदूरी भी उन्हें न मिलकर सदानंद की मां को मिलती है. इससे वे चिड़चिड़े हो गए हैं. कल रात शराब के लिए रुपये न देने पर उन्होंने सदानंद की अम्मा की पिटाई भी की थी.'

'समझ गया...' टोले के लोगों की शराब की आदत बद्री काका से छिपी न थी. वे चाहते थे उस आदत को छुड़ाना. उसके लिए काम करना. मगर बच्चों की पढ़ाई का काम उन्हें अधिक महत्त्वपूर्ण लगता था. उसके लिए दूसरे कार्यों को टालते जा रहे थे. अब उन्हें लगा कि उस दिशा में भी तत्काल कार्य आरंभ करना होगा. नहीं तो बात हाथ से निकल भी सकती है.

'तो तुम सचमुच पढ़ना चाहते हो बेटे?' उन्होंने सदानंद की पीठ पर हाथ फिराते हुए कहा.

'हां, पर मैं कुक्की के पास ही बैठूंगा.'

'ठीक है, कुक्की तुम्हारी खास दोस्त है तो हम तुम्हें उसी के पास जगह देंगे. लेकिन हमारी भी एक शर्त है. तुम्हें यहां रोज आना पड़ेगा?'

'काका मारेगा तो?'

'काका को मैं समझा दूंगा. आगे से वे तुम्हें कुछ भी नहीं कहेंगे...' बद्री काका ने आश्वासन दिया. लड़का शांत हो गया. इसके बाद वे बच्चों की ओर मुड़े, जो मनोयोग से उनकी बातें सुन रहे थे

'सदानंद आज से ही हमारी कक्षा में बैठेगा और उसको कुक्की के बराबर में जगह दी जाएगी, क्योंकि कुक्की उसकी सबसे अच्छी दोस्त है, क्यों कुक्की?' कुक्की मुस्करा

दी. सदानंद की उदासी भी छंटने लगी. बच्चों में थोड़ी खुसर-पुसर हुई. कुछ देर बाद बद्री काका ने आगे का मोर्चा संभाल लिया

'बच्चो! अपनी किताब, कॉपी बंद कर लो. अब हम एक नया खेल आरंभ करेंगे. इसे कहते हैं, खेल-खेल में कविता बनाना. मैं एक पंक्ति दूंगा. उसमें हर बच्चा अपनी और से एक पंक्ति जोड़ने का प्रयास करेगा. जिसकी पंक्ति पसंद की जाएगी, वह कविता में जुड़ती चली जाएगी.

कविता पूरी होने पर हम उन सभी बच्चों को पुरस्कार देंगे, जिनकी पंक्तियों से वह कविता बनी है. बोलो बच्चो, क्या तुम सब इस खेल के लिए तैयार हो? याद रहे कि सर्जनात्मक होना, मनुष्यता का अनिवार्य लक्षण है. जो नए ढंग से सोचते हैं, वही नया गढ़ते हैं.'

'हम सभी तैयार हैं?' बच्चों का समवेत स्वर गूंजा.

'पंक्तियों को लिखेगा कौन? हाथ उठाकर बताइए!'

'मैं...!' कई आवाजें एक साथ आईं.

'कुक्की के दोस्त ने आज ही से कक्षा में आना शुरू किया है, उसका लेख भी सुंदर है. इसलिए कविता को लिखने की जिम्मेदारी कुक्की निभाएगी, क्यों कुक्की?'

'जी!' कुक्की ने कॉपी-कलम संभाली. बच्चे सावधान होकर बैठ गए.

सावधान होना, चेतना को जगाना और अपनी बिखरी हुई शक्तियों को एकजुट कर लेना है.

*

प्राणीमात्र के कल्याण की इच्छा से किए गए सृजन से बड़ी कोई साधना नहीं है.

शहर तरक्की पर था. जिन दिनों उस बिल्डिंग का निर्माण-कार्य आरंभ हुआ, उन दिनों उसके बराबर में खाली मैदान था. मजदूरों के बच्चे वहां खेलते. धमा-चौकड़ी मचाते. लोग अपने मवेशी चराने को ले वहां आते. मगर कुछ महीनों के बाद उसके आसपास के भूखंडों पर निर्माण कार्य होने लगे. मजदूरों और मिस्त्रियों की संख्या बढ़ने लगी.

धीरे-धीरे वहां सौ से अधिक परिवारों की अस्थाई बस्ती बस गई. इतने लोगों को देख छोटे दुकानदार, फेरीवाले उस ओर आने के लिए ललचाने लगे. इस बीच एक चालबाज ठेकेदार ने मैदान के सिरे पर देशी शराब का बेचने का ठेका लेकर वहां दुकान खुलवा दी. जहां गरीब मजदूर अपनी परिश्रम की कमाई का बड़ा हिस्सा बरबाद करने लगे.

शराब की दुकान खुलने के बाद आसपास के क्षेत्र में अपराध-दर भी बढ़ी थी. बद्री काका ने पुलिस से शराब के ठेके को वहां से हटवाने का अनुरोध भी किया था. मगर शराब ठेकेदार के ऊंचे संपर्कों के कारण पुलिस उसपर हाथ डालने से कतरा रही थी. तब बद्री काका ने अदालत की शरण ली. मगर कानून की पेचीदगियों का सहारा लेकर ठेकेदार

मुकदमे से बच निकला. दबाव बनाने के लिए अपने पैसे के दम पर उसने कुछ भीमकाय गुंडे भी खरीद लिए, जो उसके इशारे पर मरने-मारने के लिए तैयार होकर जाते थे.

ऐसे में गरीब मजदूरों को शराब के चंगुल से बचाने का एकमात्र रास्ता था कि उन्हें उससे होने वाले नुकसान के बारे में बताया जाए. उनमें जागरूकता लाई जाए. उन्हें बौद्धिक रूप से इतना समर्थ बनाया जाए कि वे अपने भले-बुरे का निर्णय स्वयं कर सकें. प्रौढ़ शिक्षा बद्री काका के इसी प्रयास का एक हिस्सा थी. पर लोग उसमें उतनी रुचि ही नहीं ले रहे थे.

बद्री काका उनकी मजबूरी भी समझते थे. दिन-भर जी-तोड़ परिश्रम के बाद उन्हें आराम की जरूरत पड़ती. इसलिए खाना खाकर वे सीधे चारपाई की ओर बढ़ जाते. ठेकेदार के आदमियों ने मजदूरों के दिमाग में चतुराईपूर्वक यह बात बिठानी शुरू कर दी थी कि शराब का नशा थकान से मुक्ति दिलाकर, पल-भर में उन्हें फिर तरोताजा कर सकता है। मजदूर भी उनके भुलावे में आते जा रहे थे। बद्री काका जानते थे कि इसे रोकने के लिए बड़े आंदोलन की जरूरत है. साथ में समय की भी. यह किस रूप में संभव हो, वे इसी दिशा में सोच रहे थे.

'गुरुजी, कविता की पहली पंक्ति क्या होगी?' बद्री काका को चुप देख, टोपीलाल ने टोका.

'अरे हां, मैं तो भूल ही गया, तुम बाल-कवियों के लिए कविता की पहली पंक्ति तो मुझी को देनी है.' बद्री काका ने कहा, 'कविता की पहली पंक्ति है...' बद्री काका एक पल के लिए रुक गए.

'क्या....?' बच्चों का कौतूहल उनका जोश बन गया.

'कविता की पहली पंक्ति हैगुटका खाकर थूकें लाला. अब इस कविता को आप सब मिलकर आगे बढ़ाइए.

बच्चे सोचने लगे. आपस में फुसफुसाने की आवाज भी हुई. सहसा टोपीलाल ने जोड़ा'मुंह है या कि गंदा नाला.'

'इतनी जल्दी, वाह! तुमने तो सचमुच कमाल कर दिया...अद्‌भुत! अब इससे आगे की पंक्ति कौन बनाएगा?' बद्री काका ने हर्षातिरेक में कहा.

'जमकर खाया पान मसालाठीक रहेगी गुरुजी? नए-नए आए लड़के सदानंद ने भी उस खेल में हिस्सेदारी निभाते हुए कहा.

'बिलकुल ठीक...अब बाकी बच्चों में से कोई इसको आगे बढ़ाए.'

'मुंह में छाला, पेट में छाला.' एक बच्चे ने जोड़ा जिसे बद्री काका ने हटा दिया

'चल सकता है, पर चलताऊ है. कोई बच्चा इससे भी बेहतर जोड़कर दिखाएगा?'

'जमकर खाया पानमसाला, हुआ कैंसर पिटा दिवाला.' इस बार कुक्की ने कमाल दिखाया.

'काले धंधे जैसा काला...' बच्चों में कविता गढ़ने की होड़ जैसी मच गई.

'पानमसाला...पानमसाला.'

'धोती-कुर्ता सने पीक से...'

'मुंह में गटर छिपाए लाला.'

'शाबाश बच्चो, तुम लोग तो जीनियस से भी बढ़कर हो.' बद्री काका सचमुच उत्साहित थे. कविता गढ़ने का उनका प्रयोग इतना सफल होगा, बच्चे उसमें इस उत्साह से भाग लेंगे, इसकी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी.

'माथा पीट रही लालाइन.'

'अभी वक्त है संभलो लाला.' टोपीलाल की पंक्ति को निराली ने पूरा किया.

'आई अक्ल कसम फिर खाई.' बद्री काका ने कविता को समापन की ओर ले जाने के लिए नई पंक्ति सुझाई. इसपर कुक्की ने झट से जोड़ दिया.

'अब न छुएंगे पान मसाला.'

'शाबाश! इसके बाद हम अगली कविता से इस खेल को आगे बढ़ाएंगे. उससे पहले कुक्की तुम पूरी कविता को कक्षा को पढ़कर सुनाओ...'

'जी!' कुक्की ने खड़े होते हुए कहा और कॉपी से कविता को सुनाने लगी

गुटका खाकर थूकें लाला
मुंह है या फिर गंदा नाला
जमकर खाया पान मसाला
हुआ कैंसर पिटा दिवाला
काले धंधे जैसा काला
पानमसाला...पानमसाला
धोती-कुर्ता सने पीक से
मुंह में गटर छिपाए लाला
माथा पीट रही लालाइन.
अभी वक्त है संभलो लाला
आई अक्ल कसम फिर खाई
अब न छुएंगे पान मसाला.

'यह पूरी कविता तैयार हुई...अब हम नई कविता पर काम करेंगे. क्यों बच्चो, तैयार हो.'

'जी! बच्चों ने अपना उत्साह दिखाया. सहसा निराली खड़ी होकर एक लड़के की ओर इशारा करते हुए बोली

'गुरु जी, मैंने मलूका को कई बार पानमसाला खाते हुए देखा है. यह अपने पिताजी की जेब से पैसे चुराकर पानमसाला खरीदता है.' बद्री काका पहले से ही उस लड़के को बड़े ध्यान से देख रहे थे. जिस समय दूसरे बच्चे कविता गढ़ने में उत्साह दिखा रहे थे, वह

गुमसुम और अपने आप में डूबा हुआ था.

'क्यों मलूका, क्या निराली सच कह रही है?'

'जी!' मलूका अपराधी की भांति सिर झुकाए खड़ा हो गया.

'तो इस कविता से तुमने कोई सीख ली?'

'मैं कसम खाता हूं कि आज के बाद गुटका और पानमसाला को हाथ तक नहीं लगाऊंगा.' मलूका ने वचन दिया. उस समय उसके चेहरे पर चमक थी. वह उसके पक्के इरादे की ओर संकेत कर रही थी. बद्री काका समेत सभी विद्यार्थियों के चेहरे खिल उठे.

'गुरु जी, निराली की अम्मा पानमसाला बेचती है. टोले के ज्यादातर बच्चे वहीं से खरीदते हैं.' एक बच्चे ने निराली की ओर देखकर शिकायत की.

'निराली की मां ही क्यों, टोले में तो और भी कई दुकानें हैं, जहां पानमसाला और गुटका बेचे जाते हैं.' सदानंद ने निराली को संकट से उबारने के लिए उसका साथ दिया. कुछ पल विचार करने के पश्चात बद्री काका ने कहा

'जो बच्चे गुटका और पानमसाला खाते हैं, वे तो दोषी हैं ही. वे दुकानदार भी कम दोषी नहीं हैं जो मामूली लाभ के लिए उनकी बिक्री करते हैं. दोष उन माता-पिता का भी है जो बच्चों को इनसे होने वाले नुकसान की जानकारी नहीं देते या खुद भी इन व्यसनों के शिकार हैं.'

'गुरु जी, मैं अपनी मां से कहूंगी कि गुटका और पानमसाला अपनी दुकान से न बेचें.' निराली ने पूरी कक्षा को आश्वासन दिया.

'जैसे तेरी मां सभी काम तुझसे पूछकर करती है?' एक बच्चे ने कटाक्ष किया, निराली सकुचा गई. मगर उसका इरादा और भी दृढ़ हो गया.

'मां मेरी बात को कभी नहीं टालती. और यह बात तो मैं मनवाकर ही रहूंगी.' निराली ने जोर देकर बोली. उसके स्वर की दृढ़ता और आत्मविश्वास देख सभी दंग रह गए. खासकर टोपीलाल. वह कुछ देर तक निराली पर नजर जमाए रहा. फिर अचानक उसको कुछ याद आया

'मगर टोले के बाकी दुकानदारों का क्या होगा. उन बड़ों को कैसे रोका जाएगा, जो खुद इन गंदी आदतों के शिकार हैं.'

'यह एक गंभीर समस्या है. इस पर हम आगे विचार करेंगे.' बद्री काका बोले.

'गुरु जी अगली कविता शुरू करें?' एक लड़के ने कहा. इसपर बद्री काका मुस्करा दिए

'जरूर! लेकिन अब समय हो चुका है. हम सप्ताह में एक दिन बालसभा के लिए तय रखेंगे. अगले सप्ताह आज ही के दिन ऐसी ही बालसभा होगी. उसके लिए मैं एक पंक्ति दे रहा हूं. उस पंक्ति के आधार पर आपको पूरी कविता लिखनी है. जिस विद्यार्थी की कविता उस बालसभा में सबसे अधिक पसंद की जाएगी, उसको पुरस्कार मिलेगा.

पंक्ति है

'जी...!' बच्चों का स्वर गूंजा.

'नशा करे दुर्दशा घरों की...!'

'गुरुजी मैं इसे आगे बढ़ाऊं?' टोपीलाल ने हाथ उठाकर पूछा.

'अभी नहीं, अगले सप्ताह, पूरी कविता सुनाना.' बद्री काका ने आश्वासन दिया. इसके बाद छुट्टी की घोषणा कर दी गई. जाने से पहले उन्होंने सभी बच्चों को अपनी ओर से उपहार देकर विदा किया.

मन में कुछ करने का, गढ़ने का उत्साह हो तो सृजन व्यक्ति के चरित्र की विशेषता बन जाता है.

*

सृजन की मौलिकता अनिवर्चनीय आनंद की सृष्टि करती है.

निराली ने उसी रात अपनी मां से गुटका और पानमसाला बेचने को मना कर दिया. मां पहले तो उसकी बात सुनती रही, फिर एकाएक उखड़ गई

'मैं अपने सुख के लिए थोड़े ही बेचती हूं. लोग खरीदने आते हैं. ग्राहकों में कुछ बच्चे भी होते हैं. मैं न दूं तो वे जिद करते हैं, कुछ के तो मां-बाप भी इसके लिए पैसे देते हैं. उन सबकी खुशी के लिए रखना ही पड़ता है.'

'खुशी कैसी! इससे तो बच्चों का नुकसान ही होता है.' निराली ने तर्क किया.

'यह तो उनके मां-बाप को समझाना चाहिए!'

'कल से तुम ऐसे बच्चों को मना कर देना.' निराली ने दबाव डाला.

'मुझे दो पैसे बचते हैं तो क्यों छोडूं! और जिनको लत है, वे बाज थोड़े ही आएंगे. मैं नहीं रखूंगी तो वे दूसरी दुकान से खरीदेंगे. फिर ये सब चीजें खाने के लिए ही तो उनके मां-बाप उन्हें पैसे देते हैं.'

'कुछ भी हो, आगे से तुम यह पाप अपने सिर पर नहीं लोगी.' निराली आदेशात्मक मुद्रा में थी. जैसे किसी बच्चे को समझा रही हो. उसकी जिद के आगे मां को अंततः झुकना ही पड़ा. निराली को लगा कि अब वह कक्षा में सिर उठाकर प्रवेश कर सकेगी.

टोपीलाल समेत सभी बच्चों को प्रतीक्षा थी कि सप्ताह जल्दी पूरा हो. बालसभा का दिन आए. उन्हें लगता था कि उस दिन सबकुछ उलट-पलट जाता है. गुरुजी, गुरुजी नहीं रहते. न उस दिन उनका कहा हुआ सर्वोपरि होता है. बालसभा में तो जो भी नया कर दे, गढ़ दे वही महत्त्वपूर्ण मान लिया जाता है. गुरु जी समेत सब उसकी तारीफ करने लग जाते हैं.

टोले में उस बालसभा की चर्चा हर बच्चे ने अपनी तरह से, अपनी जुबान में की. जिसका उन बच्चों पर गहरा असर पड़ा जो अभी तक पाठशाला जाने से बच रहे थे.

परिणाम यह हुआ कि अगले दिन से ही पाठशाला में नए विद्यार्थियों का आना आरंभ हो गया. बच्चों के माता-पिता पर भी असर पड़ा. वे खुद अपने बच्चों को लेकर बद्री काका के पास आने लगे

'गुरु जी, हमारी जिंदगी तो जैसे-तैसे कट गई. अब इस बच्चे का जीवन आपके हाथों में है. इसको संवारने की जिम्मेदारी अब आपकी है.'

'लेकिन इसके लिए पुस्तकें, कॉपी, कलम, बस्ता...आप देख ही रहे हैं कि मैं तो अधनंग फकीर हूं. मेरे पास आमदनी का कोई साधन तो है नहीं.' बद्री काका मुस्कराकर कहते. उस समय उनका मुख्य ध्येय होता बच्चे के माता-पिता को आजमाना, उसकी शिक्षा के प्रति गंभीरता को परखना. एक बालसभा इतनी असरकारक हो सकती है, इसकी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी. उसकी सफलता ने उन्हें उन सब विचारों पर अमल करने का अवसर दिया था, जिनके बारे में वे अभी तक सिर्फ सोचते ही आए थे.

'मेरे बच्चे के लिए कॉपी, कलम और किताबों के ऊपर जो खर्च होगा, उसको मैं खुद उठाऊंगा.' बच्चे का पिता कहता.

'हम दोनों मेहनत-मजदूरी करेंगे, लेकिन इसकी पढ़ाई में हीला न आने देंगे. आपकी फीस भी हम हर महीने भिजवाते रहेंगे.' बच्चे की मां यदि साथ होती तो कुछ ऐसा ही आश्वासन देती.

'भिजवाना कैसा, मैं खुद देकर जाऊंगा...!' बच्चे का पिता बीच में ही टोक देता.

'फीस इतनी आवश्यक नहीं है. अपनी ऋद्धा से पाठशाला के नाम जो भी तुम देना चाहो, उससे हमारा काम चल जाएगा. नकद न हो तो दाल-चावल, नमक-आटा कुछ भी, जो बच्चों के नाश्ते के काम आ सके.'

जिस संस्था की ओर से बद्री काका काम कर रहे थे, उसके पास ऐसे कार्यक्रमों के लिए धन की पर्याप्त व्यवस्था थी. फिर भी यह मानते हुए कि मुफ्त में प्राप्त वस्तु अक्सर उपेक्षित मान ली जाती है, बद्री काका चाहते थे कि बच्चों के माता-पिता उनकी शिक्षा के लिए कुछ न कुछ अवश्य खर्च करें. जिससे शिक्षा के प्रति उनकी गंभीरता बनी रहे. संस्था पर कम से कम आर्थिक बोझ पड़े. लोग स्वावलंबी बनें. इसलिए सप्ताह या महीने के बाद उनकी पाठशाला में पढ़ने वाले बच्चों के अभिभावक जो भी चीज लाते उसको वह खुशी-खुशी रख लेते थे.

भेंट में मिली हर वस्तु का रिकार्ड रखा जाता. इसके लिए बद्री काका ने टोपीलाल को एक कॉपी दी हुई थी. जिसमें वस्तु का नाम और उसकी मात्रा को चढ़ दिया जाता. उस कॉपी में निकाली गई मात्रा भी दर्ज की जाती, उसे हर सप्ताह प्रौढ़ शिक्षा में आए अभिभावकों के सामने प्रस्तुत किया जाता था.

अभी तक वे प्रायः उपेक्षित ही होते आए थे. उन्हें लगता था कि वे सिर्फ सुनने-सहने के लिए बने हैं. घर के बाहर उनकी राय किसी काम की नहीं है. इसलिए प्रारंभ में जब

बद्री काका ने चंदे का हिसाब-किताब बताना शुरू किया तब उन्हें बहुत विचित्र लगा था

'हिसाब-किताब के बारे में हम जानकर क्या करेंगे?' एक दिन बद्री काका चंदे का हिसाब सामने रख रहे थे, तब एक मजदूर ने सकुचाते कहा.

'आपका पैसा है, उसका हिसाब भी आप ही को रखना चाहिए.'

'हम पढ़े-लिखें हों तब ना हिसाब रखें.'

'इसीलिए तो मैं यहां आया हूं कि आप पढ़-लिखें. ताकि जितना जरूरी है, उतना हिसाब तो रख लें.' इन बातों का बड़ों पर भले ही कोई प्रभाव न पड़े. पर बच्चे उनसे खूब प्रेरणा लेते थे.

दूसरों को प्रेरित करना भी एक कला है. जिसके लिए विचार एवं कर्म दोनों ही स्तर पर श्रेष्ठ बनना पड़ता है. प्रायः महान व्यक्तित्व ही यह कर पाते हैं. लेकिन प्रेरणा लेना भी सबके लिए संभव नहीं. न यह छोटी बात है, न ओछी. क्योंकि इसी से विचार और कर्म की परंपरा को विस्तार मिलता है.

*

कभी-कभी अतिसाधारण कहे जाने वाले लोग भी असाधारण रूप से प्रेरित कर जाते हैं.

वह दिन बद्री काका जीवन में अविस्मरणीय बन गया. पाठशाला की छुट्टी के बाद वे विश्राम कर रहे थे. तभी सामने से आती एक औरत पर उनकी निगाह पड़ी. तेज कदमों से से वह उन्हीं की ओर बढ़ी आ रही थी. वे खड़े हो गए. करीब आने पर वह औरत ठिठकी और बद्री काका के सामने घूंघट निकालकर खड़ी हो गई. बद्री काका उसको पहचानने का प्रयास करने लगे

'कुक्की आपकी पाठशाला में पढ़ने आती है, मैं उसी की मां हूं.'

'हां..हां, बहुत समझदार है तुम्हारी बेटी...!'

'सब आप ही का प्रताप है. कुक्की के पिता तो रहे नहीं. मैं ठहरी नासमझ जो उसके ब्याह की जल्दी कर रही थी. वह तो भला हो आपका और टोपीलाल का, जो मेरी आंखें खोल दीं. नहीं तो अब तक कुक्की ससुराल में अपनी किस्मत को रो रही होती. भगवान आप दोनों को लंबी उम्र दे,'

'नहीं-नहीं, उस मासूम को इतनी जल्दी ब्याह में लपेट देना उचित न होगा. पढ़ने में बहुत ही होशियार है, तुम्हारी बेटी . मौका मिला तो बहुत दूर तक जाएगी.' बद्री काका बीच ही में बोल पड़े, 'मैं अपनी पाठशाला के कुछ बच्चों का दाखिला बड़ी पाठशाला में कराने की सोच रहा हूं. कुक्की भी उनमें से एक है. मेरी कोशिश होगी कि इस टोले के बच्चों की पढ़ाई का सारा खर्च वहां भी सरकार ही उठाए.'

'कुक्की के बापू ने बड़े प्यार से उसका नाम कुमुदिनी रखा था. बहुत भला आदमी था वह. अपनी बेटी को लेकर उसके ढेर सारे अरमान थे. मेहनती तो इतना था कि

चौदह-पंद्रह घंटे लगातार काम पर डटा रहता. अकेला दो आदमियों की बराबरी कर लेता था. कभी किसी से ऊंचा बोल नहीं बोला, पर न जाने कैसे वह बुरे आदमियों की सोहबत में पड़ गया. जुआ और शराब उसकी आदत में शुमार हो गए. उसी ने हमें तबाह किया. उसी शौक के कारण एक दिन उसको जान से हाथ धोना पड़ा.'

कहते-कहते वह हुलकने लगी. मानों वर्षों पुराने दर्द को पूरी तरह खोल देना चाहती हो. बद्री काका असमंजस थे. समझ ही नहीं पा रहे थे कि उसे किस तरह तसल्ली दें. कैसे समझाएं. उनके लिए तो उसके आने का कारण भी पहेली बना हुआ था. मगर कुक्की की अम्मा को होश कहां. वह तो भावावेश में बस बोले ही जा रही थी. अपने घर, अपने जीवन-संघर्ष से जुड़ी बातें

'पिछले महीने मुझे कर्ज उठाकर भात भरना पड़ा. इसीलिए पाठशाला को कुछ दे नहीं पाई. इस महीने की कमाई उस कर्ज को चुकाने में उठ गई. आप मेरे पिता समान हैं. कुक्की को अपनी बच्ची की तरह पढ़ा रहे हैं. आपका एहसान मैं न भी मानूं तो भी पाठशाला का खर्च तो खर्च की ही तरह चलेगा. सिर्फ दुआ मांगने से तो घर-भंडार भरते नहीं...भात देकर लौट रही थी तो मेरी ननद ने थोड़े-से तिल बांध दिए थे. उन्हीं के लड्डू बनाकर लाई हूं. आप इन्हें मेरी ओर से नाश्ते के समय बच्चों में बांट देना. बहुत एहसान होगा आपका.'

उसका मंतव्य समझते ही बद्री काका की आंखें भर आईं. पहली बार उन्हें अपने प्रयास की सार्थकता पर, अपने कार्य ऊंचाई पर गर्व हुआ. पहली बार ही जाना कि गरीबी भले ही मेहनतकश को तोड़कर रख दे, वह एहसान से कभी नहीं मरता.

'पाठशाला का नियम है कि बच्चों से मिलने वाली हर वस्तु का रिकार्ड रखा जाता है. रिकार्ड रखने का काम टोपीलाल का है. इस समय वह तो यहां है नहीं. इसलिए नियमानुसार तुम्हारी भेंट कल ही स्वीकार की जानी चाहिए. लेकिन इस समय मैं तुम्हें लौटाकर तुम्हारी भावनाओं की अवमानना नहीं कर सकता. तुम लड्डू गिनकर रख जाओ. कल सुबह मैं उन्हें रिकार्ड में चढ़वा लूंगा.'

कुक्की की अम्मा ने लड्डू गिन दिए. वह जाने लगी तो बद्री काका बोले'सार्वजनिक जीवन जीते हुए मुझे पचास से अधिक वर्ष बीत चुके हैं. इस अवधि में बापू और विनोबा की स्मृति के अलावा जीवन में जो कुछ अमूल्य और स्मरणीय है, उसमें तुम्हारा यह उपहार भी सम्मिलित है. यह घटना मैं कभी भुला नहीं पाऊंगा.' कुक्की की अम्मा बिना कुछ कहे आगे बढ़ गई. बद्री काका धुंधली आंखों से उसको जाते हुए देखते रहे. उसके ओझल होते ही उनकी निगाह सामने पड़े लड्डुओं पर टिक गई.

निश्छल मन से दी गई भेंट अमूल्य होती है.

*

ऐसी भेंट जिसे मिले वह सचमुच बहुत भाग्यशाली होता है.

उस दिन कुक्की की अम्मा को जाते देख बद्री काका यही सोच रहे थे. कुक्की के पिता की मौत नशे की लत के कारण हुई थी. बस्ती के कई घर नशे के कारण बरबाद हो चुके हैं. हर साल लाखों जिंदगानियां नशे के कारण उजड़ जाती हैं. नशा मनुष्य के शरीर को खोखला करता है, दिमाग को दिवालिया बनाता है. परिवारों को तोड़कर रख देता है. महात्मा गांधी नशे के विरुद्ध थे. जब भी अवसर मिला उन्होंने नशे के विरुद्ध लोगों को चेताया. उन्हें उससे दूर रहने की सलाह दी.

बापू के विचारों की प्रासंगिकता तो आज भी है. हर युग में जब तक असंतोष है, अन्याय हैतब तक तो वह रहेगी ही. बद्री काका सोचते जा रहे थे. वे इस दिशा में कुछ करना चाहते थे. कुछ ऐसा जो सार्थक हो. जिसको पूरा करने से मन को तसल्ली मिले. बालसभा की कविता प्रतियोगिता को नशे पर केंद्रित करने के पीछे भी उनका यही उद्देश्य था.

कविता का विषय जानबूझकर नशे को चुना था. उन्हें इस बात की प्रतीक्षा थी कि बालसभा में बच्चे नशे के विरुद्ध खुद को कैसे अभिव्यक्त करते हैं. उनकी अभिव्यक्ति उनकी बस्ती और उनके अपनों पर कितनी असरदार सिद्ध होती है! कैसे वे उसको उसको और असरदार बना सकते हैं! वे सोच रहे थे कि बच्चों को अपने अभियान से कैसे जोड़ा जाए, ताकि उन्हें यह अभियान अपना-सा, अपने ही अस्तित्व की लड़ाई जान पड़े. मगर उनकी पढ़ाई का जरा-भी हर्जा न हो.

सप्ताहांत में बालसभा का दिन भी आ गया. कुक्की की मां द्वारा भेंट किए गए लड्डू उन्होंने इस अवसर के लिए संभाल रखे थे. उस दिन सवेरे ही बच्चों का पहुंचना आरंभ हो गया. बद्री काका ने उस दिन बस्ता लाने की छूट दी थी. सो अधिकांश बच्चे खाली हाथ थे. कागज-कलम-बस्ता जैसे पाठशाला के तय उपकरणों से मुक्ति का स्वाभाविक एहसास उन सभी के उल्लास का कारण बना हुआ था.

'मुझे उम्मीद है कि पिछली बालसभा में दिया गया काम आप सभी ने पूरा कर लिया होगा?' बद्री काका ने शुरुआत करते हुए कहा. इसपर कई बच्चों के चेहरे चमक उठे. कुछ तनाव से ललियाने लगे.

'जो पिछली बालसभा में दिया गया काम किसी कारणवश नहीं कर पाए हों, वे परेशान न हों, आज उन्हें भी अवसर मिलेगा कि वे आगे की प्रतियोगिता में खुद को साबित कर सकें. टोपीलाल, तुम हमें बताओ कि आज की बालसभा का विषय क्या है?'

'समस्या-पूर्ति, आपने हमें एक पंक्ति दी थी, जिसपर पूरी कविता लिखकर लानी थी...'

'तुमने कविता लिखी?'

'जी हां!' टोपीलाल ने गर्व सहित बताया.

'ठीक है, हम सब तुम्हारी कविता सुनेंगे. लेकिन उससे पहले निराली हमें उस कविता-पंक्ति के बारे में याद दिलाएगी, क्यों निराली?'

'जी गुरुजी...पंक्ति हैनशा करे दुर्दशा घरों की.' निराली ने पिछली सभा की कार्रवाही अपनी कॉपी में लिख ली थी.

'नशा करे दुर्दशा घरों की...इस पंक्ति पर जो बच्चे कविता लिखकर लाए हैं, वे अपने हाथ ऊपर कर लें.' केवल दो-तीन हाथ ही ऊपर उठे. इस बीच एक बच्चा सिसकने लगा. बद्री काका चौंक गए

'क्या हुआ, कौन है?'

'सदानंद है गुरुजी.' सदानंद के बराबर में बैठी कुक्की ने कहा.

'रो क्यों रहा है?'

'पिछले सप्ताह जबसे आपने कविता की पंक्ति दी थी, तभी से इसका जी बहुत उदास है. कहता है कि जैसे कविता की पंक्ति की ओर ध्यान जाता है, उसको अपने घर की दुर्दशा याद आ जाती है.'

सभी को मालूम था कि सदानंद के पिता को शराब की बुरी लत है. इस कारण उसके घर में अक्सर झगड़ा रहता है. यह याद आते ही बच्चों के उल्लास को घनी उदासी ने ढक लिया. कुछ देर के लिए तो बद्री काका भी निरुत्तर हो गए. लेकिन उन्होंने जल्दी ही खुद को संभाल लिया

'सदानंद तो कविता पूरी कर चुका है, उसने हाथ उठाया था.' बद्री काका के स्वर में आश्चर्य था. फिर पल-भर शांत रहने के बाद बोले'धीरज रखो बेटे, यह समस्या सिर्फ तुम अकेले की नहीं है. कई बच्चों की, बल्कि पूरे समाज की और इस तरह हम सब की है. हम इसपर खुले मन से विचार करेंगे. संभव हुआ तो उसके निदान के लिए किसी नतीजे पर पहुंचेंगे भी. फिलहाल जो बच्चे कविता लिखकर लाए हैं, वे तैयार हो जाएं. क्यों टोपीलाल, क्यों न आज तुम्हीं से शुरुआत कर ली जाए?'

'जी!' टोपीलाल खड़ा हो गया और जेब से कागज निकालकर सुनाने लगा

छोटे मुंह से बात बड़ों की
नशा करे दुर्दशा घरों की.'

'शाबाश!' कविता की प्रथम पंक्ति सुनते हुए बद्री काका ने मुंह से बरबस निकल पड़ा. टोपीलाल कविता पढ़ता गया

छोटे मुंह से बात बड़ों की
नशा करे दुर्दशा घरों की
पान, सुपारी, गुटका, बीड़ी,
सुरा बिगाड़ें दशा घरों की
चरस, अफीम और गांजे से
हालत खस्ता हुई घरों की

बरतन-भांडे सब बिक जाते
इज्जत बंटाधार घरों की

कविता समाप्त हुई तो बच्चों ने तालियां बजाईं. बद्री काका भी पीछे नहीं रहे. बल्कि वे देर तक, उत्साह के साथ तालियां बजाते रहे. उसके बाद उन्होंने दूसरे बच्चे से कविता सुनाने को कहा. उसकी कविता भी पसंद की गई. उसके बाद जो बच्चे कविता लिखकर लाए थे, सभी की कविताओं को बारी-बारी से सुना गया. अंत में बद्री काका ने सदानंद से अपनी कविता सुनाने को कहा.

सदानंद के खड़े होते ही बच्चे अपने आप तालियां बजाने लगे. इस बार तालियों में पहले से कहीं ज्यादा जोश था. बाद में गुरुजी से आज्ञा लेकर सदानंद ने अपनी कविता शुरू की

न छोटे, न शर्म बड़ों की
नशा करे दुर्दशा घरों की

सदानंद के इतना कहते ही पूरी कक्षा तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठी.

'वाह-वाह!' बद्री काका के मुंह से निकला, 'बहुत अच्छे! आगे पढ़ो बेटा. पढ़ते जाओ...शाबाश!'

सदानंद आगे सुनाने लगा

न छोटे, न शर्म बड़ों की
नशा करे दुर्दशा घरों की
कंगाली आ पसरे घर में
नीयत बिगड़े बड़े-बड़ों की
घर बीमारी से भर जाए
खुशहाली मिट जाए घरों की
रिश्तों में आ जाएं दरारें
इज्जत होवे खाक बड़ों की
बच्चे रोते फिरें गली में
औरत भूखी मरें घरों की

कविता पूरी होते ही बच्चों ने दुगुने जोश के साथ तालियां बजाना शुरू किया. उसके बाद तो देर तक तालियां बजती रहीं. खुद बद्री काका भी तालियों की गड़गड़ाहट के बीच. आंखों में नमी छिपाए. कहीं खो-से गए. सुध लौटी तो सीधे सदानंद के पास पहुंचकर उसकी पीठ थपथपाने लगे

'वाह...वाह! तुमने तो कमाल कर दिया. जब मैंने इस कार्यक्रम की योजना बनाई थी, तो मुझे इसकी कामयाबी पर इतना भरोसा नहीं था. तुम सबने मेरी उम्मीद से कहीं बढ़कर कर दिखाया है. अब मुझे विश्वास है कि मैं अपने लक्ष्य की ओर आसानी से बढ़ सकता हूं...शाबाश, बच्चो शाबाश!'

बद्री काका भाव-विह्वल थे. इतने कि अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए उनके पास शब्द भी नहीं थे. कुछ देर तक कक्षा में ऐसा ही माहौल बना रहा. अंत में बद्री काका ने बच्चों को संबोधित किया

'पिछले सप्ताह मैंने कहा था कि अच्छी कविता को पुरस्कृत किया जाएगा. अच्छी कविता का फैसला आप सब की राय से होगा. जरा बताओ तो, यहां पर सुनाई गई कविताओं में सबसे अच्छी रचना आपको किसकी लगी?'

'सदानंद की...!' कक्षा में गूंजा. उनमें सबसे ऊंची आवाज टोपीलाल की थी.

'कविता तो टोपीलाल की भी बुरी न थी.' बद्री काका ने मुस्कराते हुए कहा और अपनी निगाह टोपीलाल पर जमा दी.

'पर सबसे अच्छी कविता का पुरस्कार तो सदानंद को ही मिलना चाहिए.' टोपीलाल ने ऊंचे स्वर में कहा. बाकी बच्चों ने भी उसका साथ दिया.

'क्यों?'

'सदानंद की कविता ही सर्वश्रेष्ठ है.'

'कैसे?' इस सवाल पर सभी विद्यार्थी एक-दूसरे का मुंह देखने लगे. बद्री काका ने अनुभव किया कि बच्चों को सबसे अच्छी और अच्छी के बीच अंतर करने की समझ तो है, लेकिन वे उसको शब्दों में व्यक्त करने में असमर्थ हैं. तब बच्चों की मुश्किल को आसान करते हुए उन्होंने कहा

'बच्चो, अच्छी कविता के लिए जरूरी है कि वह कवि के अपने अनुभव से जन्म ले. सदानंद की कविता उसकी निजी अनुभूतियों की उपज है. उसने अपने जीवन में जो देखा-भोगा, उसी को शब्दों में व्यक्त किया है. इसलिए उसकी कविता हमारे दिलों को छू लेती है. आज की सर्वश्रेष्ठ कविता का सम्मान सदानंद को ही मिलना चाहिए.' पूरी कक्षा एक बार पुनः तालियों से गूंज उठी.

सदानंद को पुरस्कृत करने के बाद बद्री काका एक बार फिर बच्चों की ओर मुड़े और बोले, 'नशा हमारे जीवन को कैसे बरबाद कर रहा है, इससे हम सभी परिचित हैं. बल्कि उस त्रासदी को अपने जीवन में साक्षात भोग रहे हैं. नशा यूं तो पूरे परिवार को बरबादी की ओर ले जाता है, परंतु उसका सबसे ज्यादा शिकार बच्चे ही होते हैं. बहुत से बच्चों की तो शिक्षा भी पूरी नहीं हो पाती. बीमार हों तो समय पर इलाज से वंचित रह जाते हैं. प्यार के स्थान पर नफरत और उपेक्षा मिलती है. जिससे उनका विकास अधूरा रह जाता है.

इन कविताओं में भी नशे से होने वाली बरबादियों की ओर संकेत किया गया है. हमें नशे की लत से बचना चाहिए. जो लोग नशे के शिकार हैं, उन्हें उससे उबारने की कोशिश भी करनी चाहिए. मुझे खुशी है कि निराली के कहने पर उसकी मां ने अपनी गुमटी से गुटका और पानमसाला बेचना बंद कर दिया है. लेकिन बस्ती और उसके आसपास

ऐसे कई दुकानदार हैं, जो अपने मामूली लालच के लिए ये सब चीजें बेचते हैं. जब तक उनमें से एक भी दुकान बाकी है, समझ लो कि हमारी समस्याएं भी खत्म नहीं हुई हैं. हमें इनके विरुद्ध आवाज उठानी चाहिए. जरूरत पड़े तो बड़े संघर्ष के लिए भी तैयार रहना चाहिए.'

'सरकार को चाहिए कि नशे की चीजों पर पाबंदी लगाए...' किसी ने बीच ही में टोका.

'तुम ठीक कहते हो. उन सभी वस्तुओं पर जो नागरिकों के लिए किसी भी प्रकार से नुकसानदेह हैं, रोक लगाना सरकार की जिम्मेदारी है. इसके लिए कानून भी हैं. लेकिन हमारे देश में लोकतंत्र है. जनता द्वारा चुनी गई सरकारों की अनेक मजबूरियां होती हैं. उदार कानूनों का लाभ उठाते हुए कई बार स्वार्थी व्यवसायी बच निकल जाते हैं. इसलिए सरकार से बहुत अधिक उम्मीद करना उचित न होगा.'

'हमें चाहिए कि हम शराब के ठेकों और उन सभी दुकानदारों पर धावा बोल दें, जो नशे की चीजों की बिक्री करते हैं.' एक बच्चे ने जोर देकर कहा.

'उस हालत में वे कानून-व्यवस्था के नाम पर पुलिस की मदद लेने में कामयाब हो जाएंगे. और हम सब जो समाज और कानून के भले की भावना से आगे बढ़ेंगे, उनके दुश्मन माने जाएंगे. झगड़ा ज्यादा बढ़ा तो खून-खराबा भी हो सकता है. पूरे शहर की शांति छिन सकती है. इसलिए हमें कोई और उपाय सोचना होगा. ऐसा उपाय जिससे कि हम अपनी बात सीधे आम जनता तक पहुंचा सकें, उन लोगों तक पहुंचा सकें, जिन्हें उनकी जरूरत है. इस बारे में आप में से किसी के पास क्या कोई सुझाव है?' बद्री काका ने बच्चों का उत्साहवर्धन करने के लिए पूछा.

इस प्रश्न पर बच्चों के बीच चुप्पी पसर गई. सभी गंभीर चिंता में डूबे हुए थे. कुछ देर बाद टोपीलाल खड़ा हो गया तो सारे बच्चे उसी की ओर देखने लगे

'गुरुजी! आपने कहा है कि हमें अपनी बात लोगों तक सीधे पहुंचानी चाहिए.'

'बिलकुल, लोकतंत्र में जनता की ताकत ही सबसे बड़ी होती है.' बद्री काका बोले.

'तब तो समझिए रास्ता मिल गया.' टोपीलाल ने उत्साह दिखाया.

'कैसे?'

'हम छुट्टी के बाद रोज घर-घर, गली-गली जाकर लोगों को समझाएंगे. उन्हें नशे से होने वाले नुकसान के बारे में बताएंगे. उससे भी असर नहीं पड़ा तो गली-मुहल्लों में उस ठिकानों पर धरना देंगे, जहां लोग नशे के शिकार हैं. वहां हम तब तक डटे रहेंगे, जब तक कि नशा करने वाले उससे दूर जाने का वचन नहीं दे देते.' टोपीलाल ने कहा तो कुक्की सहमति में तालियां बजाने लगी. बाकी बच्चे भी उसका साथ देने लगे.

'यह तुमने कहां से जाना.' बद्री काका ने खुश होकर पूछा.

'भूल गए, आपने ही ने तो बताया था कि विदेशी वस्त्रों के विरुद्ध लोगों को एकजुट

करने के लिए महात्मा गांधी ने ऐसा ही किया था.'

'कुछ भी नहीं भूला.' बद्री काका ने जैसे यादों में गोते खाते हुए कहा, 'पर यह काम आसान नहीं है.'

'हम सब आपके साथ हैं.' सदानंद ने खड़े होकर कहा.

'मुझे पूरा भरोसा है!' बद्री काका बोले, जैसे खुद को तैयार कर रहे हों

'लोगों को नशे की लत के प्रति जागरूक बनाने के लिए इसके अलावा क्या कोई और उपाय भी हो सकता है?'

कक्षा में कुछ देर के लिए सन्नाटा छाया रहा. सहसा निराली उठी और बोली

'हम बच्चे टोली बना-बनाकर दुकानदारों के पास जाएंगे और उनसे प्रार्थना करेंगे कि वे नशे की चीजें सुपारी, बीड़ी, सिगरेट, गुटका, पानमसाला वगैरह न बेचें.'

'एकदम सही सुझाव है.'

'वे हमारी बात क्यों मानने लगे?' एक बच्चे ने आशंका व्यक्त की.

'हां यह भी ठीक है, लेकिन जब कोई अच्छा काम सच्चे मन से किया जाता है तो एक न एक दिन कामयाबी मिल ही जाती है. हम एक दिन में यदि दस दुकानदारों के पास जाएंगे तो उनमें से एक-दो हमारी बात गंभीरता से अवश्य सुनेंगे. धीरे-धीरे यह संख्या बढ़ती ही जाएगी.'

'यह तो बहुत परिश्रम का काम है.'

'हम मेहनत करने को तैयार हैं.' कुक्की ने लड़के की बात बीच ही में काट दी.

'तब ठीक है...इसके लिए विद्यार्थियों की चार टोलियों बनाई जाएंगी. सप्ताह में एक दिन, बालसभा के बाद हम इसी अभियान पर चला करेंगे. इसके अलावा क्या कोई और भी सुझाव है?' बद्री काका ने बच्चों को उत्साहित किया.

'जिन्हें नशे की लत है वे इन चीजों का किसी न किसी तरह जुगाड़ कर ही लेंगे. इसीलिए हमें चाहिए कि कुछ ऐसे प्रयास भी करें, ताकि लोग इनसे अपने आप दूर होते जाएं. इसके बारे में मेरा सुझाव जरा हटकर है?' टोपीलाल ने बोला. राष्ट्रपति महोदय को पत्र लिखने के बाद उसका शब्द की ताकत में भरोसा बढ़ा था. वह उसको आगे भी आजमाना चाहता था.

'बताओ बेटा...' बद्री काका ने हौसला बढ़ाया.

'हम सब अपने माता-पिता और उन संबंधियों के नाम जो नशे की लत के शिकार हैं, पत्र लिखें और उन्हें उससे होने वाले नुकसान के बारे में बताएं. अगर वे लोग हमें सचमुच प्यार करते हैं तो उनपर हमारी बात का असर जरूर होगा?'

'वाह! कमाल का सुझाव है तुम्हारा. जिन्हें तुम सचमुच बदलना चाहते हो, उनसे उनके दिल के करीब जाकर बात करो. महात्मा गांधी ने पूरे जीवन यही किया. अपने अखबार 'हरिजन' के माध्यम से उन्होंने देश की जनता से सीधे संवाद स्थापित किया था.

और पत्र तो दिल को नजदीक से छूकर संवाद करने का अद्‌भुत माध्यम है. इस सुझाव पर हम तत्काल अमल करेंगे. क्यों बच्चो?' बद्री काका के आवाह्न पर अधिकांश बच्चों ने सहमति व्यक्त की. इससे उत्साहित होकर बद्री काका ने आगे कहा

'इस सप्ताह सभी बच्चे अपने माता-पिता या उन संबंधियों के नाम पत्र लिखकर लाएंगे, जो नशे के शिकार हैं. उन पत्रों को अगली बालसभा में सुनाया जाएगा. हां, यदि कोई बच्चा नहीं चाहता कि उसके माता-पिता या सगे-संबंधी की नशे की आदत के बारे में खुले में, सबके सामने बातचीत हो तो इसका भी ध्यान रखा जाएगा. उस विद्यार्थी के पत्र को कक्षा में पढ़ा जरूर जाएगा, लेकिन पत्र में दिए गए नाम तथा उससे विद्यार्थी के रिश्ते को पूरी तरह गुप्त रखा जाएगा. यदि संभव हुआ तो पत्र को सीधे अथवा डाक के माध्यम से उस व्यक्ति तक पहुंचाने की व्यवस्था की जाएगी, जिसके नाम वह लिखा गया है. बोलो मंजूर?'

'जी!' पूरी कक्षा ने साथ दिया. इसी के साथ उस दिन की पाठशाला संपन्न कर दी गई. बच्चे अपने-अपने घर लौटने लगे.

हर बालक ऊर्जा का अजस्र भंडार है. जो इस सत्य को पहचानकर उसका सदुपयोग करने में सफल रहते हैं, इतिहास महानायक मानकर उनकी पूजा करता है.

*

महानायक अकेला आगे बढ़ता है. लेकिन थोड़े ही समय में पूरा कारवां उसके पीछे होता है; जो निरंतर बढ़ता ही जाता है.

बद्री काका खुश थे, बल्कि हैरान भी थे. बच्चों को जिस दिशा में वे लाना चाहते थे, जिस उद्‌देश्य के लिए संगठित करना चाहते थे, उस ओर वे स्वयंस्फूर्त भाव से बढ़ रहे थे. उनमें एकता भी थी और उत्साह भी. उनमें भरपूर ऊर्जा थी और काम करने की ललक भी. उनका संगठन कमाल का था. जिसमें न कोई लालच था, न राजनीति की दुरंगी चाल. न कोई छोटा था, न बड़ा. सभी अनुशासित थे; और अपनी विचारधारा में स्वतंत्र भी. इसलिए उनकी कामयाबी पर भरोसा किया जा सकता था. आवश्यकता थी उनके सही नेतृत्व की. उनकी संगठित ऊर्जा का रचनात्मक उपयोग करने की.

पाठशाला के कुल बच्चों को चार दलों में बांटा गया था. एक दल का नेता टोपीलाल को बनाया गया. दूसरे का निराली को. कुक्की और सदानंद एक ही टोले में रहना चाहते थे. बद्री काका की इच्छा थी कि दोनों को स्वतंत्र टोलियों की जिम्मेदारी सौंपी जाए. आखिर कुक्की की बात ही मानी गई. उसके अनुरोध पर उसे सदानंद के साथ एक ही टोली में रखा गया.

चौथे टोले का मुखिया अर्जुन को बनाया गया. वह दूसरे टोले का था. उसके माता-पिता मजदूरी करते थे. उनका टोला हाल ही में शहर के दूसरे क्षेत्र से यहां पहुंचा

था और बराबर में बन रही एक और बहुमंजिला इमारत के निर्माण में लगा था. अर्जुन को टोली का मुखिया बनाने के पीछे सोच यही था कि बच्चे जब उसके टोले में जाएं तो अर्जुन के कारण वहां के लोग उस आंदोलन से खुद को जुड़ा हुआ समझें.

नशा-मुक्ति अभियान को कारगर बनाने के बच्चों ने चित्र और पोस्टर भी बनाए थे. चित्र बनाने का सुझाव निराली का था. उसको चित्र बनाने का शौक था. वह कक्षा में, घर पर, जब भी अवसर मिले, चित्र बनाती ही रहती. टोपीलाल के आग्रह पर पूरे टोले में प्रभात-फेरी का कार्यक्रम बनाया गया. उसके लिए कुछ भजन लिखे-लिखाए मिल गए. बाकी बद्री काका ने स्वयं लिखे. ढोलक और मजीरे का प्रबंध बस्ती से ही हो गया.

भजनों को संगीत की लय-ताल पर गाने का अभ्यास कराने में तीन दिन और गुजर गए. टोपीलाल के उत्साह को देखते हुए प्रभातफेरी के लिए कुछ नारे भी गढ़े गए थे. इस सब कार्यवाही में बच्चों ने जिस उल्लास और मनोयोग से हिस्सा लिया. उसको देखकर बद्री काका भी दंग रह गए.

अगले सप्ताह बालसभा के दिन सुबह ठीक छह बजे सभी बच्चे बिल्डिंग के दूसरे तल पर, जहां पाठशाला चलाई जाती थी, जमा हुए. उनके हाथ में खुद के बनाए पोस्टर थे, और झंडे भी. सबसे पहले प्रार्थना हुई. बद्री काका ने बच्चों को गांधी जी के जीवन से संबंधित अनेक प्रेरक प्रसंग सुनाए. उनके जीवन से प्रेरणा लेने को कहा. प्रभात-फेरी का विचार टोपीलाल की ओर से आया था. अतः उसका नेतृत्व करने की जिम्मेदारी भी उसी को सौंपी गई.

तय समय पर प्रभात-फेरी के लिए बच्चों का समूह पंक्तिबद्ध हो आगे बढ़ा. ढोलक और मजीरे की ताल पर भजन गाते हुए बच्चे छोटी-छोटी झुग्गियों के आगे से होकर गुजरने लगे. उनके स्वर ने लोगों को जगाने का काम किया. भजन पूरा होते ही नारों की बारी आई. प्रभात-फेरी का नेतृत्व कर रहे टोपीलाल ने पहला नारा लगाया

'गुटका, पानमसाला, बीड़ी...'

'...मौत की सीढ़ीमौत की सीढ़ी.' पीछे चल रहे बच्चों ने साथ दिया.

'गुटका, पानमसाला, बीड़ी...'

'...मौत की सीढ़ी, मौत की सीढ़ी.'

'प्यार से जो आबाद हुए घर...'

'...नशे ने वे बरबाद किए घर.'

'अगर तरक्की करनी है तो...'

'...दूर नशे से रहना होगा.'

'जीवन में कुछ बनना है तो...'

'...नशे को 'टा-टा' करना होगा.'

'फंसा नशे के चंगुल में जो...'

'...इंसां से हैवान बना वो.'

'गुटका, पानमसाला, बीड़ी...'

'...मौत की सीढ़ी, मौत की सीढ़ी.'

'नशा जहर है...'

'...महाकहर है...'

'मौत का खतरा...'

'...आठ पहर है.'

नारों के बाद फिर एक भजन गाया जाता. एक घंटे में प्रभात फेरी समेट ली जाती. उसके बाद बच्चे घर जाकर नाश्ता करते, फिर पाठशाला आते. शाम का समय लोगों को घर-घर जाकर समझाने के लिए तय था. टोपीलाल उस समय भी सबसे आगे होगा. बच्चे चार टोलियों में बंट जाते. फिर वे घर-घर जाकर लोगों को शराब और नशे की बुराइयों के बारे में समझाते. कभी बद्री काका उनके साथ होते, कभी नहीं. लेकिन पाठशाला के प्रांगण में बैठे-बैठे, भविष्य की योजना बनाते हुए भी वे बच्चों के अभियान के बारे में तिल-तिल की खबर रखते. समस्या देखते तो पलक-झपकते वहां पहुंच जाते.

शाम का समय. टोपीलाल अपनी टोली का नेतृत्व कर रहा था. अपने ही टोले में जागरूकता अभियान चलाते हुए टोपीलाल के कदम ठिठक गए. उसके साथ चल रहे बच्चे भी एक झटके के साथ रुक गए. सामने उसका अपना घर था. ईंटों को कच्चे गारे से खड़ा करके बनाई गई झोपड़ीनुमा चारदीवारी. जिसमें दो चारपाई लायक जगह थी. छत का काम प्लास्टिक की पन्नी और तिरपाल से काम चलाया गया था. दरवाजा इतना छोटा था कि टोपीलाल जैसे बच्चों को भी गर्दन झुकाकर प्रवेश करना पड़ता था. दूसरों के लिए एक-एक ईंट करीने से सजाने वाले वे बेमिसाल कारीगर-मजदूर अपना ठिकाने बनाते समय पूरी तरह लापरवाह हो जाते थे. यही उनके जीवन की विडंबना थी.

घर में से मां और बापू की आवाजें आ रही थीं. भीतर घुसते हुए टोपीलाल झिझक रहा था. पता नहीं मां और बापू से वे सब बातें कह पाएगा या नहीं, जो उसने दूसरे घरों में कही थीं.

'तुम्हारे घर में तो कोई नशा करता नहीं, फिर यहां समय खर्च करने की क्या जरूरत है. आगे चलो टोपी.' साथ चल रहे एक बच्चे ने कहा. टोपीलाल को एकाएक कोई जवाब न सूझा. लेकिन अगले ही पल वह दृढ़ निश्चय के साथ भीतर घुसता चला गया. मां उस समय खाना बनाने की तैयारी कर रही थी.

'इतनी जल्दी आ गए बेटा...लगता है आज के लिए कोई कार्यक्रम नहीं था?' बेटे को सामने देख टोपीलाल की मां की आंखों में चमक आ गई. पिछले कई दिनों से वह बस्ती में टोपीलाल के कारनामों के बारे में सुनती आ रही थी. हर खबर उसको सुख पहुंचाती. हर बार उसका सीना गर्व से फूल जाता था.

'हम अपने काम के सिलसिले में ही यहां आए हैं!'

'कैसा काम? अरे, तू तो अपने दोस्तों को भी साथ लाया है. अच्छा बैठ, मैं तुम सबके लिए कुछ खाने का प्रबंध करती हूं.'

'रहने दो मां, हम आपको नशे की बुराइयों के बारे में बताने आए हैं.' टोपीलाल ने मां और बापू की ओर देखते हुए कहा.

'तू जानता है कि तेरे बापू पान को भी हाथ नहीं लगाते, फिर यहां आने की क्या जरूरत थी. समय ही तो बेकार हुआ.' टोपीलाल की मां के स्वर में विस्मय था. बापू चुप, गर्दन झुकाए मन ही मन मुस्करा रहे थे.

'हमने हर घर में जाने का प्रण किया है मां.' टोपीलाल ने विनम्रतापूर्वक कहा.

'सो तो ठीक है, लेकिन जिस घर के बारे में तुम्हें अच्छी तरह मालूम कि वहां के लोग शराब या नशे की दूसरी चीजों के करीब तक नहीं जाते, उस घर में जाना तो अपना समय बरबाद करना ही हुआ.'

'फिर तो हर दरवाजे से हमें यही सुनने को मिलेगा कि इस घर में कोई नशा नहीं करता. यहां समय बरबाद करने से अच्छा है आगे बढ़ जाइए. औरतें भले ही हमें भीतर बुलाना चाहें, पर चलेगी उनके मर्दों की ही. नशाखोर मर्द घर की औरतों को हमें बाहर ही बाहर विदा करने के लिए आसानी से तैयार कर लेंगे. नतीजा यह होगा कि हम उन घरों में जा ही नहीं पाएंगे, जहां हमारा जाना जरूरी है. हमारे जाने से जो असर लोगों के दिलोदिमाग पर पड़ना चाहिए, उससे वे आसानी से बच जाएंगे.' टोपीलाल के तर्क ने उसकी मां को भी निरुत्तर कर दिया. कुछ देर बाद वह बोली

'कहता तो तू एकदम सही है बेटा...इतनी बड़ी-बड़ी बातें क्या तेरे गुरुजी तुझे सिखाते हैं?'

'उनका काम तो हमें जिम्मेदारी सौंपना है, स्थिति के अनुकूल बात कैसे करनी है, यह हमें खुद ही तय करना पड़ता है.' टोपीलाल ने कहा. उसके पिता जो अभी तक उसपर टकटकी लगाए थे, उसकी की मां की ओर मुड़कर बोले

'तेरा बेटा है, बातों में तो इसे कोई हरा ही नहीं सकता.'

'माफ करना, हमें अभी और भी कई घरों में जाना है.' टोपीलाल को तेजी से भागते हुए समय का बोध था. इसके बाद वह उन्हें नशे की बुराइयों के बारे में समझाने लगा. काम पूरा होने पर अपने साथियों के साथ वह भी बाहर निकल आया. पीछे से टोपीलाल के कान में बापू की आवाज पड़ी. वे कह रहे थे

'मुझे अपने बेटे पर गर्व है.'

'और मुझे उसके पिता पर.' टोपीलाल के कान में मां का स्वर पड़ा. उसने सिर को झटका दिया और अपने अभियान पर आगे बढ़ गया.

योग्य संतान को सर्वत्र सराहना मिलती है.

*

बचपन को सही दिशा दो. सफलता उसकी मुट्ठी में होगी.

टोपीलाल और उसकी टोलियों ने शहर में वह कर दिखाया जो बड़े-बड़े उपदेशों, भारी-भरकम सरकारी प्रयासों द्वारा संभव ही नहीं था. सप्ताहांत में बालसभा के लिए बच्चों ने इतनी मार्मिक चिट्ठियां लिखीं कि बद्री काका दंग रह गए. करीब तीस बच्चों में से ग्यारह ने पत्र लिखे. कुछ ने छोटे तो कई ने लंबे-लंबे. पत्रों में उन्होंने अपने माता-पिता, चाचा, ताऊ, मामा और दूसरे रिश्तेदारों को, जिनके बारे में उन्हें मालूम था कि उन्हें नशे की लत है, संबोधित किया था.

छह-सात पत्र तो इतने मार्मिक थे कि खुद को माया-मोह से परे मानने वाले बद्री काका भी अपने आंसू न रोक सके. उन पत्रों को उन्होंने बार-बार पढ़ा. कुछ को कक्षा में भी पढ़वाया गया. कुछ अति मार्मिक पत्रों को पूरी कक्षा के सामने पढ़वाने का साहस बद्री काका भी न कर सके.

पत्र मौलिक और असरकारी भाषा में लिखे गए थे. वे सीधे दिल पर असर डालते थे. इस कारण बद्री काका का मन न हुआ कि उन्हें खुद से अलग करें. इसलिए उन पत्रों की छायाप्रतियां ही संबंधित व्यक्तियों को भेजी गईं. बद्री काका को इससे भी संतोष न हुआ. वे उन पत्रों का रचनात्मक उपयोग करना चाहते थे. चाहते थे कि उनका प्रभाव सर्वव्यापी हो. वे जन-जन की आत्मा को जाग्रत करने का काम करें. वे चाहते थे शब्द की ताकत को सृजन से जोड़ना, उसे आंदोलन का रूप देना.

कई दिनों तक बद्री काका इसपर विचार करते रहे. सोचते रहे कि कैसे उन पत्रों को अपने अभियान का हिस्सा बनाया जाए! कैसे उनका अधिकतम उपयोग संभव हो! कैसे उनके माध्यम से समाज में नशाबंदी के पक्ष में बहस आरंभ कराई जाए! कैसे बच्चों की निजी पीड़ा को सार्वजनिक पीड़ा और आक्रोश में बदला जाए! परंतु क्या यह उचित होगा? कहीं यह नैतिकता के विरुद्ध तो नहीं? बद्री काका अजीब-सी उलझन में फंसे थे. वे एक फैसला करते, अगले ही पल अचानक उनकी राय बदल जाती.

कई दिनों तक उनके मन में संघर्ष चलता रहा. मन कभी इधर जाता, कभी उधर. काफी सोच-विचार के पश्चात उन्होंने चुने हुए पत्रों को स्थानीय समाचारपत्र में प्रकाशित कराने का निश्चय किया. इस निर्णय के साथ ही उनकी आंखों में चमक आ गई. अंततः बच्चों एवं उनके अभिभावकों का नाम-पता छिपाकर उन पत्रों की छायाप्रतियां, शहर के एक प्रतिष्ठित दैनिक को सौंपी दी गईं.

सबसे पहले सदानंद का ही पत्र छपा. समाचारपत्र में हालांकि उसकी पहचान को सुरक्षित रखा गया था. लेकिन बद्री काका समेत उनके प्रत्येक विद्यार्थी और उसके माता-पिता को मालूम था कि वह सदानंद का ही पत्र है. अपने पिता को संबोधित करते

हुए उसने लिखा था

नमस्ते बापू!

मैं जानता हूं कि आप मुझे बेहद प्यार करते हैं. उस क्षण भी अवश्य ही करते होंगे, जब आपने पहली बार शराब को हाथ लगाया था. पर यह शायद मेरा दुर्भाग्य ही था. क्योंकि ठीक उस समय जब आप शराब का पहला घूंट भरने जा रहे थे, आपको मेरा जरा भी ध्यान नहीं रहा. मुझे पूरा विश्वास है कि उस समय अगर मेरा चेहरा आपके ध्यान में रहा होता, तो आप शराब के गिलास को जमीन पर पटककर वापस चले आते. फिर कभी शराबखाने का मुंह न देखते.

बापू मैं भी आपको बहुत चाहता हूं. पर उससे शायद कम जितना कि आप मुझे चाहते हैं. आप पिता हैं, जब मैं आपका किसी भी क्षेत्र में मुकाबला नहीं कर सकता तो प्यार करने में भी यह कैसे संभव है! इसलिए इसमें आपका तनिक भी दोष नहीं, सारा दोष मेरा ही है कि मैं अपने भीतर वह काबलियत नहीं जगा सका, जिससे कि आपको ठीक उस समय याद आ सकूं, जबकि आपको मेरी जरूरत है. मुझे क्षमा करें पिता. मैं स्वयं को आपका नाकाबिल पुत्र ही सिद्ध कर सका.

बापू शराब की लत के पीछे आप शायद भूल चुके हैं कि आप कितने बड़े राजमिस्त्री हैं. मैंने शहर की वे इमारतें देखी हैं, जिन्हें आपने अपनी हुनरमंद उंगलियों से तराशा है. मैंने उन बेमिसाल कंगूरों को भी देखा है, जो आपकी कला के स्पर्श से सिर उठाए खड़े हैं. ऊंची-ऊची इमारतों के बीच जिनकी धाक है. लोग जिनकी खूबसूरती को देखकर दंग रह जाते हैं.

मैं शहर में बहुत अधिक तो नहीं जा पाता. मगर जब कभी उन इमारतों के करीब से गुजरता हूं तो मेरा सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है. उसके बाद कई दिनों तक दोस्तों के साथ मेरी बातचीत का एकमात्र विषय आपकी बेहतरीन कारीगरी की मिसाल वे आलीशान इमारतें ही होती हैं. मैं बच्चा हूं, इसलिए आपकी कारीगरी को उन शब्दों में तो व्यक्त नहीं कर पाता, जिसमें उसे होना चाहिए. पर अपने टूटे-फूटे शब्दों में किए गए बयान से ही मुझे जो गर्वानुभूति होती है, उसको मैं शब्दों में प्रस्तुत कर पाने में असमर्थ हूं. बस समझिए कि वे मेरे जीवन के सर्वाधिक पवित्र एवं आनंददायक क्षण होते हैं.

बापू अपने इस पत्र में मैं सिर्फ इतना कहना चाहता हूं कि आपकी बनाई जिन इमारतों के जिक्र से मेरा सीना गर्व से चौड़ा हो जाता है, वे आपने उन दिनों बनाई थीं, जब आप शराब और नशे की दूसरी चीजों को हाथ तक नहीं लगाते थे. शराब ने आपसे आपकी बेमिसाल कारीगरी को छीना है, मुझसे मेरे पिता को. यहां मैं मां का जिक्र जानबूझकर नहीं कर रहा हूं. क्योंकि आपने जिस दिन से खुद को शराब के हवाले किया है, वह बेचारी तो अपनी सुध-बुध ही खो बैठी है. यह भी ध्यान नहीं रख पाती कि इसमें क्या अच्छा है और क्या बुरा. लगता ही नहीं कि वह इंसान भी है. बेजान मशीन की तरह काम में जुटी रहती है. उसके जीवन की सारी उमंगे, सारा उत्साह और उम्मीदें गायब हो

चुकी हैं.

इस सबके पीछे मेरा ही दोष है. मैंने अपने पिता को खुद से छिन जाने दिया. मैं अपनी मां का खयाल नहीं रख पाया. अपनी उसी भूल का दंड मैं भुगत रहा हूं, आप भी और मां भी. मैं आप दोनों का अपराधी हूं बापू. पर मैं यह समझ नहीं पा रहा कि क्या करूं. कैसे अपने पिता को वापस लाऊं. आप तो मेरे पिता है, पालक हैं, आपने ही उंगली पकड़कर मुझे चलना सिखाया है. अब आप ही एक बार फिर मेरा मार्गदर्शन करें. मुझे बताएं कि मैं आपको कैसे समझाऊं? कैसे मैं मां की खुशी को वापस लौटाऊं?

बापू आप जब अपने पिता होने के धर्म को समझेंगे, तभी तो मैं एक अच्छा बेटा बन पाऊंगा. इसलिए मेरे लिए, अपने बेटे और उसकी मां के लिए, शराब को छोड़कर वापस लौट आइए. आपकी इस लत ने अभी तक जितना नुकसान किया है, हम सब मिलकर उसकी भरपाई कर लेंगे बापू...

आपका इकलौता और नादान बेटा

दिल की गहराइयों से निकली हर बात असरकारक होती है.

अखबार में छपने के साथ ही यह पत्र पूरे शहर में चर्चा का विषय बन गया. गलियों में, नुक्कड़ पर, पान की दुकान और चाय के खोखों पर, बड़े रेस्त्रां और कॉफी हाउस में, घरों और पार्कों में, स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े, बुद्धिजीवियों से लेकर आमआदमी तक, सदानंद के पत्र पर बहस होती रही.

बच्चों द्वारा चलाया जा रहा नशा-विरोधी कार्यक्रम शहर-भर में पहले ही चर्चा का विषय बना हुआ था. सदानंद का पत्र छपते ही सबका ध्यान उसी ओर चला गया. बड़े-बड़े अखबारों के संवाददाता, सामाजिक कार्यकर्ता, समाजसेवी, विद्वान उस टोले की ओर आकर्षित होने लगे. इस हलचल को लंबी उड़ान देने वाला अगला पत्र कुक्की का छपा. पत्र को अपने असली नाम से छपवाने का साहस भी कुक्की ने दिखाया था. अपने छोटे-छोटे हाथों से नन्ही कुक्की बड़ी-बड़ी बातें लिखीं

काका!

मां बताती है कि जब आप भगवान के पास गए मैं सिर्फ दो वर्ष की थी. मेरी आंखों ने आपको जरूर देखा होगा, मगर अफसोस मेरे दिमाग पर आपकी जरा-सी भी तस्वीर बाकी नहीं है. मां बताती है कि आपको नशे की लत थी. कमाई अधिक थी नहीं, पर लत तो लत ठहरी. नशे के लिए जो भी मिलता उसको खा लेते. चरस, भांग, धतूरा, अफीम कुछ भी. शराब मिलती तो वह भी गट्ट से गले के नीचे. नतीजा यह हुआ कि आपकी आंतें गल गईं. एक दिन खून की उल्टी हुई और आप मां को अकेला छोड़कर चले गए. मेरी मां अकेली रह गई. पूरी दुनिया में अकेली. सिर पर ईंट-गारा उठाने, लोगों की गालियां सुनने, ठोकरें खाने के लिए.

वैसे मां बताती है कि आप बहुत संकोची थे. इतने संकोची की मां थाली में अगर दो रोटी रखकर भूल जाए तो आप भूखे ही उठ जाएं. मां से, अपनी पत्नी से तीसरी रोटी तक न मांगे. आपकी मेहनत के भी कई किस्से मैंने मां के मुंह से सुने हैं. वह चाहती थी कि मेरा एक भाई भी हो, जो बड़ा होकर काम में आपका हाथ बंटा सके. जब उसने आपके सामने अपनी इच्छा प्रकट की तो आप मुस्करा दिए. उसके बाद याद है आपने क्या कहा था? मां बताती है कि आपने उस समय कहा था'अपनी कुमुदिनी तो है?'

'वह तो बेटी ठहरी. एक न एक दिन ससुराल चली जाएगी. हमें बुढ़ापे का सहारा भी तो चाहिए.'

'बुढ़ापे के सहारे के लिए तुम्हें बेटा ही क्यों चाहिए?'

'सभी चाहते हैं.'

'बेटा होगा तो तुम उसका ब्याह भी करोगी? बहू भी आएगी, क्यों?'

'हां बेटा होगा तो ब्याह भी करना ही होगा. ब्याह होगा तो बहू आएगी ही.'

'और बेटा अगर बहू को लेकर अलग हो गया तो?' आपने कहा था. मां निरुत्तर. तब आपने मां को समझाते हुए कहा था, 'बेटी को कम मत समझ, यह पढ़-लिख गई तो दो परिवार संवारेगी. दुनिया में कितने आए, कितने गए. यहां कौन अमर हुआ जो बेटे के बहाने तू अमर होना चाहती है.'

'तुम बेटी के नाम के साथ अमर होने की कामना रखते हो तो मैं बेटे के साथ क्यों न रखूं?' तब आपने कहा था

'मैं तो बस बेटी के साथ जीना चाहता हूं. फिर चाहे जितनी भी सांसें मिलें.' और भगवान ने आपको सिर्फ इतनी सांसें दीं कि मुझे बड़ा हुए दो वर्ष की बच्ची के रूप में देख सकें.

इस किस्से को मेरी मां कितनी ही बार सुना चुकी है. कितने पिता हैं जो अपनी बेटियों को इतना मान देते हैं. मां चाहती थी कि मैं आपको पिता कहा करूं. वह मुझे वही सिखाना चाहती थी. तब आपने कहा था, 'नहीं पिता नहीं?'

'क्यों, क्या आप इसके पिता नहीं हैं?' मां ने हैरान होकर पूछा था.

'मुझे शर्म आती है?'

'इसमें कैसी शर्म?'

'काका ही ठीक रहेगा.'

'काका ही क्यों?'

'इस संबोधन में दोस्ताने की गुंजाइश ज्यादा है.' मां बेचारी मान गई. वह कहती है कि आप मुझे बहुत प्यार करते थे. अपने साथ थाली में बैठाकर खिलाते थे. मुझे जरा-सा भी कष्ट हो तो विचलित हो जाते. पर काका, आज आपको खोकर मुझे लगता है कि आपका प्यार नकली था. अगर आप मुझे सच्ची-मुच्ची प्यार करते तो नशे के चंगुल में हरगिज न फंसते. एक पिता के लिए अपनी संतान के प्यार से बड़ा नशा और क्या हो

सकता है.

काका आप हमेशा मां को धोखा देते रहे. पर मैं आपके झांसे में आने वाली नहीं हूं. मैं आपकी असलियत को जानती हूं. आपकी चालाकी से परिचित हूं. इसलिए आपको भुलाना चाहती हूं. नहीं चाहती कि आपकी यादें मेरी रातों की नींद हराम करें. पर क्या करूं! भुला नहीं पाती. बच्ची हूं ना. उतनी समर्थ नहीं हुई हूं कि सारा काम अकेली ही कर सकूं.

भूल भी जाऊं तो मां नहीं भूलने देती. रोज रात को चारपाई में मुंह धंसाए मां को सिसकते हुए देखती हूं तो आपकी याद आ ही जाती है. मां की आदत से तंग आकर कभी-कभी मैं कह देती हूं

'अब किसके लिए रोती है. बूढ़ी होने को है. बस कुछ साल और इंतजार कर... उसके बाद ऊपर जाकर उनसे जी-भर कर मिलना. मां पलटकर मुझे अपनी बांहों में भर लेती है

'मुझे अपनी नहीं तेरी चिंता है बेटी.' और मां जब यह कहती है तो मैं घबरा जाती हूं. अंधेरा मन को डराने लगता है. वह हालांकि छिप-छिपकर रोती है. नहीं चाहती कि उसके दुःख की छाया भी मुझपर पड़े. पर मैं तो उसका दुःख-दर्द उसकी धड़कनों से जान जाती हूं. हवा की उस नमी को महसूस कर सकती हूं मां की देह को छूने के बाद उसमें उतर आती है. यह भी जानती हूं कि मां के आंसू ही आपकी यादों को जिलाए रहते हैं. पर मैं आपसे नाराज हूं. सचमुच नाराज हूं.

अपने पत्र के माध्यम से मैं दुनिया के सभी पिताओं से कहना चाहती हूं कि यदि आप अपनी बेटियों को खुश देखना चाहते हैं, यदि आप उनको नाराज नहीं करना चाहते, यदि आपको मेरे आंसू असली लगते हैं. यदि आपको मेरी मां बदहाली, उसके चेहरे पर पड़ी झुर्रियों, हथेलियों में पड़ी मोटी-मोटी गांठों, कम उम्र में ही सफेद पड़ चुके बालों पर जरा-भी तरस आता है, तो कृपया खुद को नशे से दूर रखिए. तभी आप सच्चे और अच्छे माता-पिता बन सकते हैं.

सिर्फ अपनी मां की
कुक्की

एक बच्चे के माता-पिता तो नशे से दूर थे. लेकिन उसके मामा को शराब की लत थी. उस बच्चे का लिखा पत्र तीसरे दिन अखबार की सुर्खी बना

प्यारे मामा जी!

सादर प्रणाम,

अगर आप मुझे अपना सबसे प्यारा भांजा मानते हैं तो आज से ही शराब पीना छोड़ दीजिए. आप नहीं जानते कि आपके कारण मां कितनी परेशान रहती है. मामी को कितना कष्ट उठाना पड़ता है. मां बता रही थी कि आपकी शराब की गंदी लत से परेशान

होकर मामी तो आत्महत्या ही करना चाहती थी. यह तो अच्छा हुआ कि मां की नजर उन गोलियों पर पड़ गई, जिन्हें खाकर उन्होंने आपसे छुटकारा पाने की ठान ली थीं. बड़ी मुश्किल से मां ने मामी को समझाया, जान देने से रोका. पर मां कहती है कि आप यदि नहीं सुधरे तो मामी कभी भी...

मां बताती है कि नाना जी जब मरे तब आपके पास सौ बीघा से भी अधिक जमीन थी. बाग था, जिसमें हर साल खूब फल आते थे. नाना जी उन्हें टोकरियों में भरकर अपने सभी रिश्तेदारों के घर पहुंचा देते. वे आपको बहुत चाहते थे. उनकी एक ही अभिलाषा थी कि आप पढ़ें. उनकी इच्छा मानकर आप पढ़े भी. बाद में ऊंची सरकारी नौकरी पर भी पहुंचे. उस पद तक पहुंचे जहां गांव में आप से पहले कोई नहीं पहुंच पाया था. नाना जी आपपर गर्व करते थे. कहते थे कि उनके जैसा भाग्यवान पिता इस धरती पर दूसरा नहीं है. लेकिन अनुभवी होकर भी वे अपने भविष्य से कितने अनजान थे.

नौकरी के दौरान ही आपको नशे की लत ने घेर लिया. दिन में भी आप शराब के नशे में रहने लगे. नतीजा आपको अपनी नौकरी से ही हाथ धोना पड़ा. यह सदमा नानाजी सह न सके. उन्हें मौत ने जकड़ लिया. आप गांव लौट आए. मां बताती है कि उस समय गांव में सबसे बड़ी जायदाद के मालिक आप ही थे. अगर आप तब भी संभल जाते तो आपके परिवार की हालत आज कुछ और ही होती. लेकिन इतनी ठोकरें खाने के बाद भी आप संभले नहीं. परिणाम यह हुआ कि जमीन बिकने लगी. पहले बाग बिका. फिर उपजाऊ खेत. बाद में पुश्तैनी हवेली का भी नंबर आया. उस समय अगर मामी जी अड़ नहीं जातीं तो आज आप और मामी जी बिना छत के रह रहे होते.

खैर, आपकी बरबादी और बदहाली के किस्से तो अनंत हैं. मैं तो सिर्फ यही कहना चाहता हूं कि यदि आपको मामी से प्यार है, यदि आपके मन में अपनी बहन यानी मेरी मां के प्रति जरा-भी सम्मान है, यदि आप अपने बच्चों को हंसता-खेलता और खुशहाल देखना चाहते है, यदि आप नहीं चाहते कि अपनी मां के मरने के बाद आपके बच्चे अनाथों की भांति दर-दर की ठोकरें खाएं, लोग उनको शराबी का बेटा कहकर दुत्कारें, यदि आप नहीं चाहते कि मेरे स्वर्गीय नानाजी की आत्मा कुछ और कष्ट भोगे, तो प्लीज नशे को 'ना' कह दीजिए. दूर रहिए उससे. तब आपका यह भांजा आपको इसी तरह प्यार करता रहेगा, जितना कि अब तक करता आया है. नहीं तो आपसे कट्टी करते मुझे देर नहीं लगेगी, हां...!

थोड़े लिखे को बहुत समझना. नशा छोड़ते ही मुझे पत्र अवश्य लिखना. मैं हर रोज आपकी डाक का इंतजार करूंगा...

आपका भांजा

कखग

दुःख भले ही किसी एक का हो, मगर उसका कारण आमतौर पर सार्वजनिक ही

होता है.

*

दुःख का सार्वजनिकीकरण लोगों को करीब लाता है. उससे घिरा आदमी समाज के साथ रहना, मिल-बांटकर जीना चाहता है. सुखी आदमी खुद को बाकी दुनिया से ऊपर समझता है, आत्मकेंद्रित होकर दूसरों से कटने की कोशिश करता है.

एक के बाद एक पत्र, प्रभात-फेरियां, पोस्टर, संध्या अभियान में घर-घर जाकर लोगों को नशे से दूर रहने की सलाह देना, समझाना, मनाना, उनके बीच जागरूकता लाने की कोशिश करनाबच्चे इन कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रहे थे. पूरे शहर में उनकी गतिविधियों की ही चर्चा थी. बुद्धिजीवी उनका गुणगान करते, समाचारपत्र उनकी प्रशस्तियों से भरे होते. अखबार के संपादक के नाम पत्रों की निरंतर बढ़ती संख्या बता रही थी कि उनके प्रति लोग कितने संवेदनशील हैं. इस दौरान अखबारों की बिक्री भी बढ़ी थी. प्रसार प्रबंधक हैरान थे कि जो काम वे लाखों-करोड़ों खर्च करके नहीं कर पाए, वह बच्चों की चिट्ठियों ने कर दिखाया. अब हर कोई उन्हें छापना चाहता था.

संपादक के नाम लिखी चिट्ठियों में उन बच्चों के नाम से लिखे सैकड़ों पत्र रोज आते. कोई चाहता कि बच्चे उसके घर आकर उसके पिता को समझाएं. कोई बहन अपने भाई की बदचलनी से परेशान थी, वह चाहती थी कि उसकी ओर से एक पत्र उसके भाई को भी लिखा जाए. कुछ पाठकों की प्रार्थना थी कि उनकी बस्ती में भी इसी प्रकार प्रभात-फेरियां निकाली जाएं, ताकि वहां बढ़ रहा नशे का प्रचलन कम हो सके.

ऐसे ही पत्र में एक दुखियारी स्त्री ने संपादक के माध्यम से बच्चों को लिखा

प्यारे बच्चो!

उम्र में तो मैं तुम्हारी मां जैसी हूं. आजकल मैं भी उसी तकलीफ से गुजर रही हूं जिससे तुम्हारी मां या बहन गुजर चुकी हैं या गुजर रही हैं. मगर मेरे पास तुम्हारे जैसा कोई बच्चा नहीं है. इसलिए तुम्हीं से प्रार्थना करती हूं कि एक पत्र इनके नाम भी लिखो. मैं तो समझा-समझाकर हार गई. संभव है तुम्हारे शब्द इन्हें सही रास्ते पर ले आएं. तब शायद तुम्हारी यह अभागन मां भी नर्क से बाहर आ सके. मैं जीते जी तुम्हारा एहसान नहीं भूल पाऊंगी. भगवान तुम्हें कामयाबी दे.'

एक पत्र में तो लड़के का गुस्सा ही फूट पड़ा. अपने टूटे-फूटे शब्दों में उसने लिखा

'नशेड़ी को मुझसे ज्यादा कौन जान सकता है. उसके सामने कोई लाख गिड़गिड़ाए, खुशामद करे, दया की भीख मांगे, उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता. मेरा पिता रोज नशे में घर आता है. पहले मां की पिटाई करता है, जो उससे चूल्हा जलाने के लिए रुपयों की मांग करती है. फिर मुझे मारता है, क्योंकि मैं भूख को सह नहीं पाता. ऐसे पिता के होने

या न होने से कोई लाभ नहीं है. जिस दिन मेरा बस चला, उसी दिन मैं उसका खून कर डालूंगा...'

एक बच्ची ने संपादक के नाम भेजी गई अपनी चिट्ठी में अपने दुःख का बयान लिखा

भइया!

मैं आपके गुरुजी को प्रणाम करती हूं, जो आपको इतनी अच्छी-अच्छी बातें सिखाते हैं. जिन्होंने आपको सच कहने की हिम्मत दी है. भगवान करे कि सच कहने का आपको वैसा कोई दंड न मिले, जैसा कि मैं नादान भोगती आ रही हूं. मेरे पिता शराबी हैं. रोज रात को पीकर आते हैं. मां और मेरे घर के सभी छोटे-बड़ों के साथ मारपीट करते हैं.

उन दिनों मैं आठ वर्ष की थी. नहीं जानती थी कि नशे में आदमी जानवर बन जाता है. अपना-पराया कुछ नहीं सूझता उसको. एक बार पिता जी घर आए तो उनको नशे से लड़खड़ाता देखकर मैं नादान हंसने लगी. मां पिताजी के गुस्से को जानती थी. वह मुझे उनसे दूर ले जाने को आगे आई. मगर उससे पहले ही पिताजी ने गुस्से में कुर्सी का पिछला डंडा मेरी टांग में जोर से दे मारा. इतनी ताकत से कि मेरी टांग की हड्डी ही टूट गई. चार वर्ष हो गए. पिताजी इलाज तो क्या कराते, दुगुना पीने लगे हैं.

आजकल बहाना है कि चार वर्ष पहले जो गलती की थी, उसके बोझ से उबरने के लिए पीता हूं. यह मजाक नहीं तो और क्या है. धोखा दे रहे हैं वे खुद को, मुझको, हमारे पूरे परिवार को. चार साल से लंगड़ाकर चल रही हूं. तुम अगर मेरे पिता को समझाकर सही रास्ते पर ला सको तो इस लंगड़ी बहन पर बहुत उपकार होगा. नहीं तो मुझे अपना पता दो, मैं भी तुम्हारे अभियान में शामिल होना चाहती हूं. भरोसा रखो, बोझ नहीं बनूंगी तुमपर. जहां तक हो सकेगा मदद ही करूंगी. लंगड़े पर लोग जल्दी तरस खाते हैं. हो सकता है मेरे बहाने ही कोई आदमी शराब और नशे से दूर चला जाए.

अगर ऐसा हुआ तो तुम्हारी यह लंगड़ी बहन जब तक जिएगी, तब तक तुम्हारा एहसान मानेगी. और यदि मर गई तो ऊपर बैठी-बैठी तुम्हारी लंबी उम्र के लिए प्रार्थना करेगी.

तुम्हारी एक अभागिन बहन

पत्र घनी संवेदना के साथ लिखा गया था. जिसने भी पढ़ा, वही आंसुओं की बाढ़ से घिर गया. खुद को माया-मोह से परे मानने वाले बद्री काका भी भाव-विह्वल हुए बिना न रह सके. अगले दिन वही पत्र शहर-भर में चर्चा का विषय बना था. स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े सब उस लड़की के बारे में सोचकर दुःखी थे.

शब्द की ताकत से बद्री काका का बहुत पुराना परिचय था. महात्मा गांधी के सान्निध्य में रहकर वे उसे परख चुके थे. अब वर्षों बाद फिर उसी अनुभव को साकार

देख रहे थे. बच्चों द्वारा चलाए जा रहे अभियान की सफलता कल्पनातीत थी. बावजूद इसके उन्हें लगता था कि वे अपनी मंजिल से अब भी दूर हैं. असली परिणाम आना अभी बाकी है.

उससे अगले ही दिन एक पत्र ऐसा छपा, जिसकी उन्हें प्रतीक्षा थी. पत्र पढ़ते ही बद्री काका के चेहरे पर चमक आ गई. देह प्रफुल्लित हो उठी. पत्र में किसी अधेड़ व्यक्ति की आत्मस्वीकृति थी. उन्हें वह पत्र अपने जीवन की अमूल्य उपलब्धि जान पड़ा. टूटी-फूटी भाषा में लिखे गए उस पत्र को संपादक ने प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया था. शीर्षक दिया था, मेरे पाप, जिसमें बिना किसी संबोधन के लिखा था

'सच कहूं तो अपने जीते जी किसी को ईश्वर नहीं माना. न स्वर्ग-नर्क, पाप-पुण्य, आत्मा-परमात्मा जैसी बातों पर ही कभी भरोसा किया. हमेशा वही किया जो मन को भाया, जैसा इस दिल को रुचा. इसके लिए न कभी माता-पिता की परवाह की, जो मेरे जन्मदाता थे. न भाई को भाई माना, जो मेरी हर अच्छी-बुरी जिद को पानी देता था और उसके लिए हर पल अपनी जान की बाजी लगाने को तत्पर रहता था. न उस पत्नी की ही बात मानी, जिसके साथ अग्नि को साक्षी मानकर सप्तपदियां ली थीं; और सुख-दुःख में साथ निभाने का वचन दिया था. न कभी बच्चों की ही सुनी, जिनके लालन-पालन की जिम्मेदारी मेरे ऊपर थी.

मन को अच्छा लगा तो जुआ खेला, मन को भाया तो शराब, चरस, अफीम जैसे नशे की शरण में गया. मन को भाया तो दूसरों से लड़ा-झगड़ा, यहां तक की लोगों के साथ फिजूल मारपीट भी की. मेरी मनमानियां अनंत थीं. उन्हीं से दुःखी होकर माता-पिता चल बसे. पहली पत्नी घर छोड़कर चली गई. उस समय तक भी जिंदगी इतनी चोट खा चुकी थी कि मुझे संभल जाना चाहिए था. लेकिन मेरा अहं तो हमेशा सातवें आसमान पर रहा है. उसी के कारण मैं हमेशा अपने स्वार्थ में डूबा रहा.

मैंने जिंदगी में सिर्फ अपना सुख चाहा, केवल अपनी सुविधाओं का खयाल रखा. बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, शादी-विवाह हर ओर से मैं अपनी आंख मूंदे रहा. भूल गया कि जवान बेटी का असली घर उसकी ससुराल में होता है. भूल गया कि बेटों को पढ़ा-लिखाकर जिंदगी की पटरी पर लाना भी पिता का धर्म है. मेरा अहंकार और स्वार्थ-लिप्साएं अंतहीन थीं. बेटी से पीछा छुटाने के लिए मैंने उसे, उससे दुगुनी आयु के आदमी के साथ ब्याह दिया. इस कदम से उसकी मां को गहरी चोट पहुंची और वह बीमार रहने लगी. सही देखभाल न होने के कारण लड़के आवारगी पर उतर आए. पुरखों की सारी जमीन-जायदाद शराब और जुए की भेंट चढ़ गए. गहने-जेवर, बर्तन-भांडे कुछ भी बाकी नहीं रहा.

हालात यहां तक आ बने कि सप्ताह में तीन दिन फाका रहने लगा. सब कुछ लुटाने, बरबाद कर देने के बाद मुझे अपनी गलती का एहसास हुआ. उस समय ग्लानिबोध में मैं घर से भाग जाना चाहता था. एक दिन यह ठानकर ही घर से निकला था कि अब वापस कभी नहीं आऊंगा. रास्ते में एक दुकान पर अखबार में एक बच्चे का पत्र पढ़ा.

फिर उस लड़की के पत्र ने तो मेरी आंखें ही खोलकर रख दीं. उसे पढ़कर तो मैं खुद को अपनी ही बेटी का हत्यारा मानने लगा हूं.

नशाखोर आदमी कभी नहीं सोचता कि उसकी बुरी लतों के कारण उसके परिवार पर क्या बीतती है. उनके जीवन, उनके मान-सम्मान पर कितना बुरा असर पड़ता है. उस बच्ची ने मुझे आईना दिखाया है. मैं उसका बहुत शुक्रगुजार हूं. हालांकि मुझे अपनी गलती का एहसास तब हुआ, जब मेरा सबकुछ लुट-पिट चुका है. कहीं कोई उम्मीद बाकी नहीं है. मैं उन सब बच्चों से मिलना चाहता हूं, जिन्होंने वे पत्र लिखे हैं. उनमें से हरेक से माफी मांगना चाहता हूं, क्योंकि मुझे लगता है कि उनकी दुर्दशा के पीछे कहीं न कहीं मेरा भी हाथ है. पर उनसे मिलने की हिम्मत नहीं जुटा पाया हूं.

कल रात लेटे-लेटे मैंने यह फैसला किया है कि अपना बाकी जीवन में प्रायश्चित में ही बिताऊंगा. गांव-गांव जाऊंगा. वहां जाकर हर गली-मुहल्ले-चौपाल पर जाकर अपना किस्सा बयान करूंगा. सबके सामने अपने पापों का खुलासा करूंगा. उनसे सरेआम माफी मांगूगा. उस समय लोग यदि मुझे पत्थर भी मारें तो सहूंगा. तब शायद मेरा पापबोध कुछ घटे. ऐसा हुआ तो मैं उन बच्चों से माफी मांगने जरूर पहुंचूंगा. संभव है उस समय तक वे बड़े हो चुके हों. उनके अपने भी बाल-बच्चे हों. तब मैं उनके बच्चों के आगे जाकर दंडवत करूंगा. कहूंगा कि मैं उनके पिता का बेहद एहसानमंद हूं. उन्हीं के कारण मेरे पापों पर लगाम लगी थी. मेरी पाप-कथा सुनकर अगर उनमें से एक को भी मेरे ऊपर तरस आया तो मैं इसको अपनी उपलब्धि मानूंगा. तब तक यह धरती, यह आसमान, इस चराचर जगत के सभी प्राणी, चेतन-अचेतन मुझे क्षमा करें, मुझे इंसानियत की राह दिखाएं.

एक पापी

पत्रों की बाढ़ आ चुकी थी. उसी बाढ़ के बीच एक पत्र बद्री काका को भी प्राप्त हुआ. उस समय वे कक्षा में पढ़ा रहे थे. पत्र पर भेजने वाले का नाम देखकर उन्होंने उसको संभालकर जेब में रख लिया. पाठशाला से छुट्टी के बाद सावधानी से पत्र को निकाला, देखा, उल्टा-पुल्टा और आंखों पर काला चश्मा लगाकर पढ़ने लगे. फिर उसमें डूबते चले गए.

उस छोटे से पत्र का एक-एक शब्द जैसे जादुई था. मोती-माणिकों के समान अनमोल. गंगाजल-सा पवित्र. सुबह की ओस जैसा स्निग्ध और मनोरम. रोम-रोम को हर्षाने, तन-मन को पुलकित कर देने वाला. पत्र राष्ट्रपति भवन से भेजा गया था. लिखने वाले थे स्वयं राष्ट्रपति महोदय. वह उनका निजी पत्र था. उनकी अपनी हस्तलिपि में लिखा हुआ.

राष्ट्रपति महोदय ने लिखा था

पूज्य बद्रीनारायण जी!

देश के स्वाधीनता आंदोलन में आपके बहुमूल्य योगदान के बारे में पुस्तकों में बहुत पढ़ चुका हूं. आप इस महान देश की महान विभूति हैं, इसमें मुझे पहले भी कोई

संदेह नहीं था. लेकिन आपके जीवन की पुरानी गाथाएं, स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ी होने के बावजूद मुझे उतनी आह्लादित नहीं करतीं, जितनी कि आपके वर्तमान अभियान से जुड़ी हुई खबरें कर रही हैं. महात्मा गांधी ने जिस सामाजिक स्वतंत्रता की ओर संकेत किया था, आप अपने समाज को उसी ओर ले जा रहे हैं।

मैंने तो आपको एक जिम्मेदारी मामूली समझकर सौंपी थी. परंतु अपनी निष्ठा एवं कर्मठता से आपने उसको एक महान कृत्य में बदल दिया है. आपका यह प्रयास आजादी के आंदोलन में हमारे महान स्वतंत्रता सेनानियों के योगदान से किसी भी भांति कम नहीं है. इस बार आप व्यक्ति के सामाजिक-मानसिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे हैं, जो उतनी ही अनिवार्य है जितनी कि राजनीति स्वतंत्रता. अगली बार मिलेंगे तो दिखाऊंगा कि आपके अभियान से जुड़ी एक-एक खबर को मैंने सहेजकर रखा है. आप सचमुच बेमिसाल हैं. कामना है कि आपका मार्ग प्रशस्त हो. आपकी सफलताएं लंबी हों.

मैं आपकी योग्यता, कर्तव्यपारायणता और आपके संगठन के हर नन्हे सिपाही और उनकी भावनाओं को सादर नमन करता हूं...

संघीय देश का प्रथम नागरिक

एक-दो नहीं, दसियों बार बद्री काका ने उस पत्र को पढ़ा. हर बार उनका मन अनिवर्चनीय आनंद से भर उठता. रोम-रोम से आह्लाद फूटने लगता. लेकिन हर बार उन्हें कुछ कचोटता. लगता कि उनपर अतिरिक्त बोझ डाला जा रहा है. इसी ऊहापोह के बीच उस पत्र का उत्तर देना जरूरी लगने लगा. लगा कि इस समय चुप्पी साध लेना, सारा श्रेय अकेले हड़प जाना पाप, अमानत में खयानत जैसा महापाप होगा. खूब सोचने-समझने के बाद उन्होंने पत्रोत्तर देने का निश्चय किया

माननीय राष्ट्रपति महोदय जी,

सादर प्रणाम! मान्यवर, मैं देश के उन सौभाग्यशाली लोगों में से हूं जिन्हें आपका स्नेह और मार्गदर्शन सदैव प्राप्त हुआ है. आपने मेरे इस अकिंचन प्रयास को सराहा, मेरा जीवन धन्य हो गया. लेकिन मुझे विश्वास है कि जो श्रेय आप मुझे देना चाह रहे हैं, उसका मैं अकेला अधिकारी नहीं. आपके संघर्ष-भरे जीवन से प्रेरणा लेकर ही मैं इस रास्ते पर आया था. और यह भी आपकी ही प्रेरणा और आदेश था, जो मुझे यहां आने का अवसर मिला, जिससे मैं इन बच्चों से मिल सका, जो दिखने में दुनिया के सबसे साधारण बच्चों में से हैं. जिन्हें न ढंग की शिक्षा मिल पाई है, न संस्कार. न इनके तन पर पूरा कपड़ा है, न पेट-भर रोटी. पर अपनी भावनाओं, अपने संकल्प और अपनी अद्वितीय कर्तव्यपारायणता के दम पर ये मनुष्यता की सबसे विलक्षण पौध बनने को उत्सुक हैं.

जब मैं यहां आ रहा था तब मन के किसी कोने में कामयाबी का श्रेय लेने की लालसा जरूर थी. सोचता था कि मेरे प्रयासों के फलस्वरूप मजदूर बच्चों के जीवन में

यदि कुछ बदलाव आया तो उसका श्रेय मुझे ही मिलेगा. सच कहूं तो मैं यहां रेल का इंजन बनने का सपना लेकर पहुंचा था, जिसको छोटे-छोटे डिब्बेनुमा बच्चों को उनकी मंजिल का रास्ता दिखाने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी. किंतु चमत्कार देखिए, यहां रहने के मात्र कुछ महीने पश्चात स्थिति एकदम उलट गई है.

सच यह है कि अपने सत्तर वर्ष के जीवन में मैं कभी भी इतना अभिभूत नहीं हुआ, जितना कि इन दिनों इन बच्चों के कारनामों को देखकर हूं. सब मानते हैं कि इन्हें मैंने सिखाया है. लेकिन जिस अनुशासन, कर्तव्यनिष्ठा, समर्पण एवं सद्व्यवहार की सीख ये मुझे दे रहे हैं, उसके बारे मेरे और ईश्वर के सिवाय और कोई नहीं जानता. इनका संकल्प और उत्साह दोनों ही वंदनीय हैं. भगवान इन्हें बुरी नजर से बचाए.

यदि मैं खुद को आज भी रेल का इंजन माने रहूं तो ये बच्चे अपनी आंतरिक ऊर्जा से भरपूर छोटे-छोटे डिब्बे हैं, जो रेल के इंजन को उसकी मंजिल की ओर धकियाए जा रहे हैं. काश! आप यहां आकर इनकी ऊर्जा, इनके कारनामों को अपनी आंखों से देख सकें. तब आप जानेंगे कि दुनिया में आंखों देखे चमत्कार का होना असंभव नहीं है. और यहां जो हो रहा है वह ऐसी हकीकत है, जो किसी भी चमत्कार से बढ़कर है.

पत्र लिखने के बाद बद्री काका ने उसको दो बार पढ़ा और फिर सिरहाने रख लिया. मन में अच्छे विचार हों तो नींद भी खिल उठती है.

*

जिज्ञासा से अच्छा कोई मार्गदर्शक नहीं है.

जिन दिनों अक्षर ज्ञान से वंचित था, उन दिनों भी टोपीलाल के मन में अखबार के प्रति अजीब-सा आकर्षण था. चाय की दुकान, ढाबों, बाजार, स्टेशन यानी जहां भी वह अखबार देखता, ठिठक जाता. बड़ी ललक के साथ अखबार और उसे पढ़ने वालों को देखता. खुद को उस स्थिति में रखकर कल्पनाएं करता. सपने सजाता. सपनों में नए-नए रंग भरता. अनचीन्हे शब्दों को मनमाने अर्थ देकर मन ही मन खुश होता.

जिस पाठशाला में वह कुछ महीने पढ़ा था, वहां छोटा-सा पुस्तकालय था. कई समाचारपत्र नियमित आते. टोपीलाल की मजबूरी थी कि उन दिनों वह अक्षर पहचानना और उनको जोड़ना सीख ही रहा था. अखबार पढ़ ही नहीं पाता था. मगर जब भी अवसर मिलता, वह वहां जाकर घंटों अखबारों और पुस्तकों को देखता रहता. राह चलते यदि कोई पुराना अखबार या उसकी कतरन भी दिख जाए तो उसे फौरन सहेज लेता. घर आकर एकांत में उसे देखता. अक्षर जोड़ने का प्रयास करता. न जोड़ पाए तो उसके चित्रों से ही अपनी जिज्ञासा को बहलाने का प्रयास करता था.

पाठशाला में अखबार आना चाहिए, यह मांग करने वाला टोपीलाल ही था. उसकी मांग मान ली गई. पाठशाला में नियमित रूप से दो समाचारपत्र आने लगे. समय मिलते

ही टोपीलाल उन समाचारपत्रों को चाट जाता. उसके अलावा एक-दो बच्चे ही ऐसे थे, जो अखबार पढ़ने में रुचि दिखाते. प्रकाशित खबरों पर बातचीत करते. उन्हें बहस का मुद्दा बनाते थे.

जैसे ही बच्चों के पत्रों का छपना आरंभ हुआ, टोले में समाचारपत्रों की पाठक-संख्या अनायास बढ़ने लगी. अखबार आते ही बच्चे उनपर टूट पड़ते. कभी-कभी हल्का-फुल्का झगड़ा भी हो जाता. उस स्थिति से निपटने के लिए एक व्यवस्था की गई. प्रतिदिन एक विद्यार्थी खड़ा होकर प्रमुख समाचारों का वाचन करता. पाठशाला से संबंधित समाचारों पर खास ध्यान दिया जाता. बाद में उनपर हल्की-फुल्की चर्चा होती. बच्चे खुलकर हिस्सा लेते.

अखबार में संपादक ने नाम छपे पत्रों ने बच्चों का उत्साहवर्धन किया था. उन्हें शब्दों की ताकत से परचाया था. बच्चे अखबार को बड़े प्यार से देखते. उसमें प्रकाशित शब्दों को सहलाते. मन ही मन उनसे संवाद करते. बाद में संपादक के नाम लिखी चिट्ठियों को काट, सहेजकर रख लेते. कटिंग न मिलने पर उनकी नकल तैयार करते. अकेले में, दोस्तों के बीच उसको बार-बार पढ़ते, सराहते, बहस का मुद्दा बनाते.

पत्र-लेखकों में से अधिकांश अपने किसी परिजन की नशे की आदत के कारण परेशान होते. उसमें दर्ज ब्यौरे से बच्चे उसके लेखक के बारे में अक्सर अनुमान लगा लेते. कई बार इसी को लेकर बहस छिड़ जाती. व्यक्ति को लेकर मतांतर होते रहते, लेकिन वह अपने ही टोले का है, गरीब और जरूरतमंद है, इस बात पर न तो कोई बहस होती, न संदेह ही व्यक्त किया जाता था.

कुछ पत्र ऐसे भी होते जिन्हें सुनकर पूरी कक्षा में सन्नाटा व्याप जाता. यहां तक कि बद्री काका भी बच्चों को कुछ देर के लिए कक्षा में अकेला छोड़ बाहर चले जाते. वहां अपनी नम आंखों को पोंछते. मन को समझाते. तसल्ली देते. तब जाकर कक्षा में लौटने का साहस बटोर पाते थे.

बच्चों ही नहीं, बड़ों में भी अखबार के प्रति आकर्षण बढ़ता जा रहा था. शाम होते ही दिन-भर की खबरों को जानने के लिए लोग खिंचे चले आते. दोपहर को भोजन के लिए जैसे ही बैठते, पिछले दिन छपे समाचार पर बहस आरंभ हो जाती. जिसको संबोधित कर वह पत्र लिखा गया होता, उसके बारे में कयास लगाए जाते. बातचीत होती. लोग उसके सुख-दुःख में अपनापा जताते. उस समय यदि कोई उसी दिन छपे समाचार के बारे में बताकर सभी को चौंकाता तो सब उसकी बुद्धि की दाद देने लगते.

कुछ दिनों तक ऐसे पत्रों के आने का क्रम बना रहा. परंतु अचानक पत्रों की भाषा एवं उनका स्वर बदल गया. संपादक के नाम लिखे गए ऐसे पत्र भारी तादाद में छपने लगे, जिनमें बद्री काका की आलोचना होती. उनपर बच्चों को बिगाड़ने का आरोप लगाया जाता. उन्हें देशद्रोही, विदेश का जासूस आदि न जाने क्या-क्या लिखा जाता.

पत्रों के बदले हुए स्वर ने बच्चों को पहले तो हैरानी में डाला. जब ऐसे पत्रों की

संख्या बढ़ी तो बात चिंता में बदलने लगी. अपने अनुभव और वुद्धि के आधार पर वे ऐसे पत्रों के पीछे निहित सत्य का अनुमान लगाने का प्रयास करते. लेकिन नाकाम रहते. असफलता उनकी चिंता को और भी घना कर देती.

एक पाठक ने संपादक को संबोधित पत्र में तो हद ही कर दी

'जिस बद्री काका नाम के महानुभाव की प्रशंसा करते हुए हमारे समाचारपत्र और समाजसेवी रात-दिन नहीं अघाते, उनका अपना अतीत ही संदिग्ध है. नहीं तो कोई बता पाएगा कि ये सज्जन अचानक कहां से प्रकट हुए हैं. पाठशाला आरंभ करने से पहले ये क्या करते थे? रोज-रोज बद्री काका की शान में कसीदे पढ़ने वाले समाचारपत्र उनके अतीत में झांकने का प्रयास क्यों नहीं करते. यदि खोजबीन की जाए तो मुझे उम्मीद है कि वहां जरूर कुछ कालापन नजर आएगा. वरना कोई आदमी इस तरह की गुमनाम जिंदगी क्यों जिएगा.

दरअसल इन महाशय का उद्देश्य नशा-विरोध और शिक्षा के प्रचार-प्रसार की आड़ में बच्चों और उनके अभिभावकों को धर्म-परिवर्तन के लिए राजी करना है. इस बात की भी संभावना है कि ये सज्जन किसी विदेशी संस्था के दान के बूते धर्म-परिवर्तन जैसा निकृष्ट कार्य करने में जुटे हों. वरना शहर में दर्जनों सरकारी पाठशालाएं हैं, जो खाली पड़ी रहती हैं. उनके लिए विद्यार्थी ही उपलब्ध नहीं हैं. अगर इन महाशय का उद्देश्य सिर्फ मजदूरों के बच्चों को शिक्षित करना है, जो कि सचमुच एक पवित्र कार्य है, तो उन्हें सरकारी पाठशालाओं में भर्ती करना चाहिए. छोटे बच्चों को भूखे-प्यासे, सुबह-शाम नारेबाजी में उलझाए रखकर ये उनका कितना भला कर रहें, उसे या तो ये स्वयं जान सकते हैं या फिर उनका पैगंबर!'

पत्र लेखक ने अपना असली पता नहीं लिखा था. बद्री काका ने पूरा पत्र पढ़ा. फिर मुस्करा दिए. इस पत्र के प्रकाशित होने के बाद संपादक के नाम आने वाले पत्रों का रूप ही बदल गया. अधिकांश पत्र गाली-गलौंच वाली भाषा में आने लगे. कुछ में उन्हें देशद्रोही लिखा होता. कुछ में विरोधी देश का चमचा, जासूस आदि. चूंकि बद्री काका के पिछले जीवन के बारे में शहर में किसी को पता नहीं था, इसलिए ऐसे लोग उसके बारे में मनमानी कल्पना करते. आरोप लगाते. एक व्यक्ति ने तो शालीनता की सीमा ही पार कर दी थी

'बड़ी हैरानी की बात है कि पुलिस और प्रशासन की नाक के ठीक नीचे एक व्यक्ति, जिसका अतीत ही संदिग्ध है, खुल्लम-खुल्ला सरकारी कानून की खिल्ली उड़ा रहा है. जिस उम्र में बच्चों को अपना अधिक से अधिक समय पढ़ने-लिखने में लगाना चाहिए, वे जुलूस और नारेबाजी में अपना जीवन बरबाद कर रहे हैं. क्षुद्र स्वार्थ के लिए वह मासूम बच्चों का भावनात्मक शोषण कर रहा है. उनकी गरीबी का मजाक कर उन्हें अपने लक्ष्य से भटका रहा है. शिक्षा और समाजकल्याण के नाम पर बच्चों का यह शोषण किसी को भी व्यथित कर सकता है.

यह बात भी ध्यान में रखनी होगी कि वह पाठशाला एक निर्माणाधीन भवन में बिलकुल अवैध तरीके से चलाई जा रही है. इमारत की स्थिति ऐसी है कि वहां कभी भी बड़ा हादसा हो सकता है. पर उन महाशय को न तो बच्चों के स्वास्थ्य की चिंता है; और न उनके भविष्य की. सोचने की बात है कि प्रशासन क्यों उसकी ओर से आंखें मूंदे हुए है. इसका कारण तो यही हो सकता है कि ऊपर से नीचे तक सभी बिके हुए हैं. और जो आदमी पूरे सरकारी-तंत्र को मुट्ठी में रख सकता है, उसकी पहुंच का अनुमान लगा पाना असंभव है. पूरा मामला किसी बड़े षड्यंत्र की ओर इशारा कर रहा है, जिसकी गहराई से जांच होनी चाहिए.

दुःख की बात यह है कि हमारे सरकारी-तंत्र को चेतने के लिए हमेशा बड़े हादसों की प्रतीक्षा रहती है. यानी जो लोग इस उम्मीद में चुप्पी साधे हुए हैं कि मामला कानून और प्रशासन का है, वही आवश्यक कार्रवाही करेंगे, उन्हें किसी बड़े हादसे के लिए तैयार रहना चाहिए. जो हमारे आसपास कभी भी हो सकता है. सरकार को अवैध पाठशाला पर तत्काल रोक लगाकर बद्री काका नाम के शख्स को गिरफ्तार करके उसके अतीत के बारे में जानकारी जमा करनी चाहिए.'

विरोध में लिखे गए पत्रों पर भी बच्चों की नजर जाती. पढ़कर उनका आक्रोश फूट पड़ता'हमें संपादक को लिखना चाहिए कि वह ऐसे पत्रों को अखबार में प्रकाशित न करे?'

'समझ में नहीं आता कि गुरुजी इस मामले में चुप्पी क्यों साधे हुए हैं. वे चाहें तो उनसे अकेले ही निपट सकते हैं.' अर्जुन बोला.

'गुरुजी जो भी करेंगे, सोच-समझकर ही करेंगे.' टोपीलाल ने उनकी बात काटी.

'इन हालात में बिल्डिंग का मालिक पाठशाला बंद करने को कह सकता है. तब हम कहां जाएंगे. अब तो आसपास का मैदान भी खाली नहीं है.'

'मालिक तो कह ही रहा था कि इस भवन में पाठशाला रोक देनी चाहिए. लेकिन बद्री काका तक बात पहुंचने से पहले ही मामला शांत पड़ गया.' टोपीलाल ने रहस्य उजागर किया.

'कैसे?' बच्चों का कौतूहल जागा.

'मां बता रही थी. कल मालिक की ओर से संदेश आया था कि मजदूर उस पाठशाला को बंद करें या हटाकर कहीं और ले जाएं. इसपर मजदूरों ने भी संगठित होकर धमकी दे दी. कहा कि वहां उनके बच्चे पढ़ते हैं. उनके भविष्य के लिए वे उसको बंद हरगिज न होने देंगे. पाठशाला कहीं और गई तो वे सब भी साथ-साथ जाएंगे. आजकल शहर में मिस्त्री और मजदूर आसानी से मिलते नहीं. मालिक भी बीच में व्यवधान नहीं चाहता. इसलिए फिलहाल तो वह शांत है.'

'क्या यह बात बद्री काका को मालूम है?'

'हां, उन्होंने कहा कि यह तो होना ही था. यह भी बताया कि जो हमने सोचा था, वही हो रहा है. वे लोग खुद डर रहे हैं और हमें डराना चाहते हैं. यह समय धैर्य से उनकी बातों को सुनने, अपने मकसद पर दृढ़ बने रहने का है.'

'वे किन लोगों की बात कर रहे थे?' कुक्की ने जानना चाहा. इसका टोपीलाल के पास कोई उत्तर न था

'यह तो उन्होंने नहीं बताया था.'

'हमें क्या करना चाहिए?' अर्जुन ने कहा. जवाब टोपीलाल के बजाय सदानंद ने दिया, 'गुरुजी ने कहा है कि अभियान रुकने वाला नहीं है. हमारे लिए तो साफ निर्देश है. हम उन्हीं का आदेश मानेंगे.'

उसी दोपहर बद्री काका पढ़ा रहे थे. तभी पुलिस के दो सिपाही वहां पहुंचे. वे पुलिस अधीक्षक की ओर से आए थे. उन्हें देखते ही बद्री काका कक्षा को छोड़कर आगे बढ़ गए. वे कुछ पूछें, उससे पहले ही दोनों सिपाहियों ने उन्हें अभिवादन करते हुए कहा'एसपी साहब ने बुलाया है. आज शाम को ठीक आठ बजे आप थाने पहुंच जाना. कहें तो जीप भिजवा दें.'

'जीप की आवश्यकता नहीं है...मैं पैदल ही आ जाऊंगा.' बद्री काका ने कहा और वापस जाकर पढ़ाने लगे. इस घटना के बाद बच्चों का मन पढ़ाई में न लगा. उनकी निगाह में वे दोनों सिपाही और पुलिस सुपरिंटेंडेंट का चेहरा घूमता रहा

'पुलिस आपको क्यों बुलाने आई थी?' जैसे ही पढ़ाई का काम पूरा हुआ, निराली ने बद्री काका से पूछा.

'यह तो शाम ही को पता लगेगा. फिक्र मत करो, सब ठीक हो जाएगा.' बद्री काका ने समझाने का प्रयास किया.

'हम भी आपके साथ जाएंगे?' टोपीलाल ने आग्रहपूर्वक कहा.

'उन्होंने तो केवल मुझे बुलवाया है?'

'इस काम में हम सब साथ-साथ हैं.' बद्री काका बच्चों की ओर देखते रहे. पल-भर को वे निरुत्तर हो गए. मुंह खोला तो प्यार से गला भर्राने लगा.

'ठीक है, शाम को देखा जाएगा.' उन्हें लग रहा कि आने वाले दिन उग्र घटनाक्रम से भरे हो सकते हैं. परंतु बिना संघर्ष के परिवर्तन के वांछित लक्ष्य तक पहुंच पाना असंभव है. उसी क्षण उन्होंने एक बड़ा निर्णय ले लिया.

नेक मकसद में दमन की संभावना भी आदमी के हौसले को जवान बना देती है.

*

बद्री काका पुलिस सुपरिंटेंडेंट से मिलने पहुंचे तो उनके साथ कुक्की और टोपीलाल भी थे. वे केवल टोपीलाल को अपने साथ चलने ले जाने को तैयार थे. किंतु जब चलने लगे

तो कुक्की भी अड़ गई. सुपरिटेंडेंट ने देखते ही खड़े होकर बद्री काका का सम्मान किया. उनके साथ आए बच्चों को देखकर उसकी आंखों में किंचित विस्मय उमड़ आया. टोपीलाल और कुक्की ने जब हाथ जोड़कर अभिवादन किया तो पुलिस अधिकारी भी प्रभावित हुए बिना न रह सका. दोनों को बैठने के लिए कुर्सियां मंगवाई गईं.

'मेरे विद्यार्थी हैं. इनसे कुछ भी छिपा नहीं है.' बद्री काका बोले। आत्मविश्वास से भरी भाषा.

'आज तो इन बच्चों की छुट्टी कर देते.' पुलिस अधिकारी ने संबोधित किया.

'ये मुझे अपनी बात आपके सामने रखने में मदद करेंगे.'

'आप जानते ही हैं कि हमारे ऊपर कितना दबाव रहता है...!'

'सरकार की ओर से ही...?' बद्री काका ने प्रश्न अधूरा छोड़ दिया.

'पुलिस तो जितना प्रशासन की मानती है, उतना ही मान जनता का भी रखना पड़ता है.' अधिकारी ने बात को घुमाने का प्रयास किया, 'अखबारों में आजकल जो छप रहा है, उसे तो आप देख ही रहे होंगे. आपने बच्चों को नशा-विरोधी अभियान में लगाकर अनूठा काम किया है. इस अभियान की सफलता की गूंज संसद तक पहुंच चुकी है. खुद मंत्री जी आपके प्रशंसक हैं. कह रहे थे कि जो काम पुलिस और प्रशासन इतने वर्षों में, अपने भारी-भरकम तामझाम के बावजूद नहीं कर सके, वह आपने इन छोट-छोटे बच्चों के माध्यम से कर दिखाया है. व्यक्तिगत रूप में तो मैं भी आपका बहुत बड़ा प्रशंसक हूं. लेकिन आप तो जानते हैं कि पुलिस अधिकारी को कानून और व्यवस्था दोनों ही देखने पड़ते हैं. इस नाते मेरी कुछ और भी जिम्मेदारियां हैं.'

'हमने तो ऐसा कुछ नहीं किया कि आप परेशानी में पड़ जाएं.'

'आपने जानबूझकर तो ऐसा कुछ नहीं किया...'

'यानी जो कुछ हुआ वह अनजाने में हुआ है?'

'यही समझ लीजिए. दरअसल जिस अधबने भवन में आपका स्कूल चल रहा है, वहां ऐसी गतिविधियों की अनुमति नहीं दी जा सकती.'

'तब तो ये बच्चे निरक्षर ही बने रहेंगे?'

'उसके लिए सरकारी पाठशालाएं हैं. वहां इन बच्चों का प्रवेश आसानी से हो जाएगा. आप चाहें तो मैं खुद यह जिम्मेदारी उठाने को तैयार हूं.'

'पर उससे लाभ क्या होगा. जिस जगह इन बच्चों के माता-पिता काम कर रहे हैं, वहां से सबसे निकट वाली पाठशाला भी कम से कम चार किलोमीटर की दूरी पर है. क्या आपको लगता है कि इतनी दूर ये बच्चे पढ़ाई के लिए जा पाएंगे? और इनके माता-पिता इन्हें वहां जाने की अनुमति देंगे. क्योंकि भले ही गरीब हों, अपने बच्चों की सुरक्षा की चिंता तो उन्हें भी है.'

'जब तक नजदीक किसी पाठशाला का प्रबंध नहीं हो जाता तब तक तो इन बच्चों

को वहां जाना ही होगा.'

'और बच्चों की सुरक्षा के लिहाज से इनके अभिभावक वहां जाने न देंगे, फिर तो बात जहां की तहां रही. तब इन बच्चों का क्या होगा?'

'अवैद्य स्थल पर पाठशाला चलाने की अनुमति तो हरगिज नहीं दी जा सकती. अपनी नहीं माने तो विवश होकर हमें बल-प्रयोग करना पड़ेगा.' पुलिस अधिकारी ने दबंगई दिखानी चाही.

'किस कानून के आधार पर आप बल-प्रयोग करेंगे. जहां हमारी पाठशाला है, वहां पाठशाला के नाम पर न कोई अवैध इमारत है, न पोस्टर, न बैनर. खुले में बच्चों को कुछ सिखाना भला कौन से कानून में अपराध है, जरा बताएंगे?' बद्री काका ने कहा तो पुलिस अधिकारी बगलें झांकने लगा.

'आप मेरी मजबूरी को समझने की कोशिश कीजिए?'

'आप हमारे संकल्प को बूझने की कोशिश कीजिए. आप जानते हैं कि शहर में हर वर्ष राशन की दुकान तो बामुश्किल एक बढ़ती है, लेकिन उसी अवधि में शराब के दर्जनों नए ठेकों को लाइसेंस दे दिया जाता है. बच्चों को कॉपी और पुस्तक भले न मिले, पर गुटका और पानमसाला खरीदने के लिए अब गली के नुक्कड़ तक जाना भी जरूरी नहीं रहा. वह आसपास ही टंगा मिल जाता है. यही हालत चरस, अफीम और गांजे की है. इलाज के लिए दवा खरीदते समय केमिस्ट की दुकान तक जाना पड़ता है. नशे की चीजें खुद अपने ग्राहक तक चली आती हैं.

बाकी नशों की बात तो अभी छोड़ ही दें, इस शहर में सिर्फ शराब से मरने वालों की संख्या सात हजार से ऊपर पहुंच चुकी है. विज्ञान ने महामारी को तो जीत लिया है, पर शराब और नशे पर नियंत्रण रखने की बात करो तो कानून पीछे पड़ जाता है. जबकि देश में शराब और नशे की लत के कारण हर साल इतनी मौतें होती हैं, जितनी पूरी दुनिया में बड़ी से बड़ी महामारी के दौरान भी नहीं होतीं. नशा-पीड़ितों के उपचार के लिए सरकार को हर वर्ष इतना खर्च करना पड़ता है कि मात्र एक साल की रकम से देश के हर गांव में स्कूल खोला जा सकता है.

इन बच्चों के दिल से निकली आवाज ने इनके अभिभावकों के दिलों को छुआ है. उन्हें यह एहसास दिलाया है कि वे अभिभावक भी हैं. यही कारण है कि पिछले कुछ दिनों में ही शराब की बिक्री में तीस प्रतिशत गिरावट आई है. पानमसाला और गुटके की बिक्री भी पचीस प्रतिशत तक घट चुकी है. इससे वे लोग डरे हुए हैं जिनका नशे का कारोबार है. जो ज्यादा धन बंटोरने के लिए किसी भी सीमा तक गिर सकते हैं. जिनका कानून और इंसानियत से कोई वास्ता नहीं. वही लोग अखबारों में तरह-तरह की बातें लिखकर मुझे बदनाम करना चाहते हैं. अखबारों द्वारा कुछ नहीं कर पाए तो अब आपके माध्यम से दबाव बनाने की कोशिश कर रहे हैं.'

पुलिस अधिकारी चुप था. टोपीलाल और कुक्की हैरान थे. बद्री काका को इस तरह बात करते हुए उन्होंने पहली बार देखा था. उधर बद्री काका कहे जा रहे थे

'एक गलतफहमी और दूर कर दूं. इस अभियान को शुरू करने में मेरा योगदान चाहे जो भी रहा हो, फिलहाल मैं इसका संचालक नहीं हूं. इसको तो ये बच्चे स्वयं, स्वयंस्फूर्त भाव से चला रहे हैं. मैं तो मात्र इनका प्रशंसक और मार्गदर्शक हूं. और बच्चों का ही निर्णय है कि आने वाली गांधी जयंती के दिन ये पूरे शहर में एक शांति जुलूस निकालें.'

'जी!' पुलिस अधिकारी अपनी कुर्सी से उछल पड़ा, 'सरकार इसकी कतई अनुमति नहीं देगी.'

'हमें उसकी परवाह नहीं है. अपने राष्ट्रपिता की जयंती अगर ये बच्चे उनके आदर्शों पर चलकर, उनके अधूरे कार्यक्रमों को आगे बढ़ाते हुए मनाना चाहते हैं, तो इन्हें कौन रोक सकता है. उस जुलूस में पूरे शहर के बच्चे शामिल होंगे. संभव हुआ तो उनके माता-पिता भी. वे सब मिलकर नशे के विरुद्ध आवाज उठाएंगे. और हां, उसी दिन हम मजदूर बस्तियों के आसपास खुली शराब की दुकानों के आगे धरना-प्रदर्शन भी करेंगे.'

'इससे तो हालात और ज्यादा बिगड़ सकते हैं. जबकि मैं चाहता हूं कि आप हमारी मदद करें.' पुलिस सुपरिंटेंडेंट नर्म पड़ने लगा था.

इसपर बद्री काका मुस्करा दिए, 'आपने थोड़ी देर पहले ही माना है कि नशे पर रोक लगाना पुलिस और प्रशासन का काम है. मैं कहता हूं कि यह देश के हर जागरूक नागरिक का काम है. अपनी जागरूकता दिखाते हुए इन बच्चों ने थोड़े-से दिनों में वह कर दिखाया है, जो पुलिस और कानून कई वर्षों में नहीं कर पाए थे. देखा जाए तो ये बच्चे आप ही की मदद कर रहे हैं. इसलिए आपका भी कर्तव्य है कि उस दिन कोई अनहोनी न होने दें.' इतना कहकर बद्री काका ने पुलिस सुपरिटेंडेंट को नमस्कार कहा और उठ गए. पुलिस सुपरिंटेंडेंट सहित सभी अधिकारी उन्हें ठगे से देखते रहे.

बाहर आकर निराली बद्री काका की तारीफ में कुछ कहना चाहती थी. मगर टोपीलाल ने चर्चा दूसरी ही ओर मोड़ दी'गुरुजी, हमारे प्रदर्शन में मजदूर औरतें भी हिस्सा ले सकती हैं?'

'बिलकुल मैं तो चाहता हूं कि उन्हें आगे आना ही चाहिए. तभी हम पूरी तरह कामयाब हो पाएंगे.'

'हम लोग जब घरों में जाते हैं तो वहां के मर्द हमें घूरते हैं. उनका बस चले तो हमें भीतर ही न घुसने दें. लेकिन औरतें हमें प्यार से बिठाती हैं. रसोई में कुछ बन रहा हो तो खाने को भी देती हैं. घर के मर्दों की नशाखोरी की आदत से परेशान औरतें चाहती हैं कि इस अभियान में उन्हें भी हिस्सेदार बनाया जाए.'

'लेकिन, मैंने तो यह यूं ही, बस आवेश में, पुलिस अधिकारी को चिढ़ाने के लिए कह दिया था.' बद्री काका असमंजस में थे.

'जब कह दिया है तो उसपर अमल भी करना होगा. वरना वे समझेंगे कि हम डर गए.'

'वे कौन?' बद्री काका ने चौंककर पूछा.

'वही, जो हमें रोकना चाहते हैं.'

'क्या तुम उनके बारे में जानते हो?'

'नहीं, पर बापू कह रहे थे कि शराब के ठेकेदारों, गुटका और पानमसाला बनाने वालों को बहुत घाटा सहना पड़ रहा है. वे इस कोशिश में हैं कि हमें कैसे रोका जाए.'

'तुम्हारे बापू ने क्या तुमसे भी कुछ कहा था?'

'कुछ भी नहीं, दो-चार दिनों से मैं उन्हें परेशान जरूर देख रहा हूं.' टोपीलाल ने सहज भाव से बताया.

'तब?'

'अगर अब हम पीछे हटे तो वे समझेंगे कि डर गए...' निराली ने जोड़ा.

'तुम ठीक ही कहती हो. यह एक पुनीत कर्म है. मैं तुम्हें रोकूंगा नहीं. न डरने को ही कहूंगा. अब डरने की बारी तो असल में उनकी है. हम सफलता की डगर पर हैं. लेकिन हमें सावधान रहना होगा. हमारे दिलों को अपने आतंक के साये में रखने के लिए वे लोग किसी भी सीमा तक जा सकते हैं.' बद्री काका ने कहा.

उस दिन टोपीलाल घर पहुंचा तो मन थोड़ा उद्विग्न था. किंतु चेहरा आत्मविश्वास से दिपदिपा रहा था.

लोककल्याण की भावना सबसे पवित्र एहसास है.

*

महानता उम्र देखकर नहीं जन्मती.

पुलिस सुपरिटेंडेंट के साथ बात सिर्फ छह जनों के बीच हुई थी. बंद कमरे में. बाद में टोपीलाल और निराली के साथ बद्री काका ने उस संवाद को अपनी तरह से आगे बढ़ाया. उनके व्यवहार में न तो आक्रोश था, न बदले की भावना. उससे अगले ही दिन समाचारपत्र में एक और बच्चे का पत्र छपा. जिससे पूरे शहर की आत्मा को विचलित कर दिया. खासकर किशोरों और युवाओं की.

पत्र टोपीलाल ने ही लिखा था

'मेरे पिता नशे की हर चीज से दूर रहते हैं. शराब, बीड़ी, गुटका, पान, तंबाकू को वे हाथ तक नहीं लगाते. इस तरह तो मैं दुनिया के सबसे भाग्यशाली बच्चों में से हूं. मेरे माता-पिता दुनिया के सबसे अच्छे माता-पिताओं में से एक. परंतु मेरे हमउम्र दोस्तों में से अधिकांश मेरे जितने भाग्यशाली नहीं हैं. क्योंकि उनके माता-पिता(ज्यादातर पिता ही) किसी न किसी नशे की लत के शिकार हैं. इस कारण उन्हें बाकी बच्चों के बीच बेहद

शर्मिंदा होना पड़ता है.

वे किसी से खुली बातचीत भी नहीं कर पाते. भविष्य को लेकर एक अनजाना-सा डर उनके दिलो-दिमाग पर हमेशा सवार रहता है. खुद से ज्यादा वे अपनी मां, बहन के लिए लिए चिंतित रहते हैं. जिन्हें उनके पिता के नशे का उनकी अपेक्षा अधिक सामना करना पड़ता है. जब-तब वे हंसते भी हैं, मगर उनकी हंसी महज लोक-दिखावा, एक रस्म अदायगी जैसी होती है.

जैसे कि मेरा एक दोस्त है. बहुत भला लड़का. उसकी एक छोटी बहन भी है. अपने भाई की तरह मासूम और भोली. पिता घरों की पुताई का काम करते हैं. दिहाड़ी का काम. रोज कमाना, रोज का खाना. उनके घर का चूल्हा तभी जल पाता है, जब उनके पिता कुछ कमाकर घर लौटते हैं. किंतु पिछले कई महीनों से मैं देख रहा हूं कि वे घर आने के बजाय रास्ते या नालियों में पड़े होते हैं. नशे की हालत में. यदि उनके घरवालों को पता लग जाता है तो जैसे-तैसे उठाकर ले जाते.

घर जाकर बच्चों की मां जेब टटोलकर देखती है. ताकि सुबह से बंद चूल्हे को गर्मा सके. उस समय मेरा दोस्त और उसकी बहन भूख से बेहाल हो रहे होते हैं. इसलिए उनकी मां अपने पति की जेब जल्दी-जल्दी टटोलती. कंपकंपाती उंगलियों से, डरते-डरते. यह सोचते हुए कि कहीं उस जेब को शराब की दुकान पहले ही खोखली न कर चुकी हो. यह डर भी बना रहता है कि कुछ बच जाए तो नशे की हालत में बेसुध पड़े शराबी की जेब को टटोलकर नकदी और कीमती चीज ले जाने वाले छिछोरे लोग भी कम नहीं हैं. ऐसा होता ही रहता है. उस दिन उन्हें भूखा ही सोना पड़ता है. कभी-कभार उनकी मजबूर मां घर की एकाध चीज बेचकर चूल्हा जलाने का इंतजाम कर लेती है.

ऐसे ही जब कई दिन भूख में गुजरे तो अपने बच्चों का पेट भरने के लिए वह औरत काम पर जाने लगी. एक दिन शाम को उसका मर्द घर लौटा तो उसने चूल्हे तो जलते हुए पाया. बस यह देखते ही उसका पारा चढ़ गया. बिना कुछ सोचे-समझे गालियां देने लगा. उस दिन उसने अपनी पत्नी को कुलटा, वेश्या, कुतिया और न जाने क्या-क्या कहा. उस समय दोनों बच्चे खड़े-खड़े रो रहे थे. औरत अपना माथा पीट रही थी. पूरा मुहल्ला जानता था कि औरत ने दिन-भर मजदूरी की है. अपने बच्चों का पेट भरने के लिए पसीना बहाया है, पर शराबी को समझाए कौन?

ऐसी एक नहीं दर्जनों घटनाएं हैं. मेरे कई अभागे दोस्त हैं, जो नशे के कारण त्रासदी भोग रहे हैं. उनकी जिंदगी नर्क बन चुकी है. ऐसे ही कुछ बच्चों ने मिलकर इस दो अक्टूबर को गांधी जयंती के दिन एक जुलूस निकालने का निर्णय किया है. हमारा जुलूस पूरी तरह शांतिपूर्ण होगा. हमारे हाथ में नारे लिखे पोस्टर होंगे. हम मौन रहेंगे. यहां तक कि नारे भी नहीं लगाएंगे. हमारे हाथ में झंडे होंगे, डंडे नहीं. जो भी हमारे अभियान से, मेरे उन मित्रों से सहानुभूति रखता है, जिनका शांति और अहिंसा में विश्वास है, वह आगामी दो अक्टूबर को सच्चे, शांत मन से हमारे साथ सम्मिलित हो सकता है.

हम जब मिलकर आगे बढ़ेंगे, तभी कुछ सार्थक गढ़ सकेंगे!

टोपीलाल

इससे पहले के अधिकांश पत्र छद्म नाम से प्रकाशित हुए थे. परंतु इस पत्र में टोपीलाल का नाम गया था. प्रभातफेरी के माध्यम से शहर-भर में टोपीलाल और उसके साथियों की चर्चा थी. पत्र की खबर टोपीलाल की मां तक पहुंची. उसका मन आशंकाओं से भर गया. उस रात टोपीलाल घर लौटा तो वह खाना बना रही थी. बापू टोले के दूसरे मिस्त्रियों के साथ अगले दिन के काम की योजना बना रहे थे. टोपीलाल मां के पास चूल्हे के सामने ही बैठ गया. वह उसे मुस्कराई. पर उस मुस्कान में उतनी स्वाभाविकता न थी. टोपीलाल को उपले की मंदी आग में मां के माथे की लकीरें साफ दिखाई पड़ गईं. मां परेशान है, इस बात का अनुमान लगाते हुए उसको देर न लगी. मगर क्यों, काफी कोशिश के बाद भी वह इस बारे में अनुमान लगाने में नाकाम रहा.

'तेरी गुरुजी पढ़ाई पर ध्यान तो दे रहे हैं, न!' बात मां ने ही आगे बढ़ाई.

'गुरुजी, तो हमेशा ही हमारे भले का सोचते हैं.'

'और जो काम वे तुमसे करा रहे हैं! मैं तो पढ़ी-लिखी नहीं. तेरे बापू को अपने काम के अलावा बहुत कम दुनियादारी आती है. हम अपने घर से सैकड़ों मील दूर इसलिए आए हैं कि जिस इज्जत की रोटी की हम उम्मीद रखते थे, गांव में जातिभेद के चलते वह संभव ही नहीं थी. शहर में वर्षों रहकर भी हम इतने समर्थ नहीं हो पाए हैं कि किसी बड़ी मुश्किल का सामना कर सकें. पेट भरने के लिए रोज पसीना बहाना पड़ता है. और तेरे गुरुजी, माना कि दिल के भले और रसूखवाले हैं, मगर आजकल की चालबाज दुनिया के आगे वे अकेले...'

'मां, गांधी जी भी तो अकेले ही थे.' टोपीलाल ने मां की बात काटी. हालांकि ऐसा वह कम ही करता था.

'वो जमाना और था बेटा, तब का आदमी इतना काईंयां नहीं था कि पीठ पीछे से वार करे...'

'तू बेकार ही परेशान हो रही है. बच्चों से कोई क्या दुश्मनी निकालेगा.'

'तू अभी नादान है. कुछ समझता नहीं, कुछ दिनों से तरह-तरह की खबरें मिल रही हैं. शराब और नशाखोरी के विरोध में तुम सबने जो काम शुरू किया है, लोग उससे नाराज हैं. मजदूर बस्तियों में शराब की दुकानें की बिक्री तीन-चौथाई तक आ गई है. यही हाल पानमसाला और गुटका बेचने वालों का है. वे लोग इस नुकसान को आसानी से सहने वालों में से नहीं हैं. बद्री काका के बारे में तो उन्होंने पता कर लिया है. अगर वे इतने रसूखवाले न होते तो अब तक कभी के धर लिए जाते.'

'यदि तुम बद्री काका की पहुंच के बारे में जानती हो, तब तो तुम्हें निश्चिंत रहना

चाहिए, मां!' टोपीलाल ने तर्क करने की कोशिश की. पर मां के दिमाग में तो कुछ और ही घुमड़ रहा था

'दिन में कुछ आदमी आए थे. तेरे नाम का पता लगाते हुए. वे तेरे पिता से मिले. उन्होंने धमकी दी है कि तुझे समझाएं. कहें कि जिस रास्ते पर तू जा रहा है, वह हममें से किसी के लिए भी ठीक नहीं है. उन्होंने कहा कि अगर तू और तेरे दोस्त सचमुच पढ़ना चाहते हैं तो वे तुम सब के लिए शहर के किसी भी अच्छे स्कूल में इंतजाम करा सकते हैं. तू यदि शहर से बाहर जाना चाहे तो वे पूरा खर्च उठाने को तैयार हैं. लेकिन इसके लिए तुझे जुलूस वगैरह का चक्कर छोड़ना पड़ेगा.'

'और तुम क्या चाहती हो, मां.'

'मेरी तो यह बहुत पुरानी साध है कि तू पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बने. वे अच्छे स्कूल में पढ़ाई का खर्च देने को तैयार हैं. दाखिले में भी मदद करने का वायदा करके गए हैं. मां होने के नाते यदि मैं तेरे सुख की चाह रखती हूं तो इसमें बुरा ही क्या है?'

'कुछ भी बुरा नहीं है, मां. लेकिन अगर पिताजी उतने अच्छे न होते, जितने कि वे अब हैं? यदि उन्हें भी शराब या जुए की लत होती? यदि अपनी कमाई घर आने से पहले ही वे शराब या जुए खाने की भेंट चढ़ाकर घर लौटा करते? यदि तू साधारण स्त्री की तरह घर पर पति का इंतजार किया करती, इस उम्मीद में कि उनके आने पर चूल्हा चढ़ाएगी और उस समय वे सबकुछ शराब के हवाले कर घर लौटते तो? क्या तब भी तू मुझे इसी तरह रोकती?'

टोपीलाल के तर्क ने उसकी मां को निरुत्तर कर दिया.

'चल पहले रोटी खा ले...!' वह इतना ही कह पाई. टोपीलाल रोटी खाने लगा. खाना खाकर वह उठा तो मां की धीमी-सी आवाज आई

'अपना खयाल रखना बेटा...मां हूं न, तेरे सुख की चिंता कभी-कभी कमजोर बना ही देती है!' कहते-कहते उसकी आंखों में नमी उतर आई. टोपीलाल का गला भी भारी हो गया. उसके बाद अपनी मां पर गर्व करता, भविष्य के बारे में नए-नए स्वप्न सजाता हुआ वह चारपाई की ओर बढ़ गया. कुछ देर बाद काम निपटाकर मां भी उसके बराबर में आकर लेट गई. टोपीलाल ममत्व की चाहत में उससे सट गया.

प्रेम बिना ताकत, बिना अपनों के आशीर्वाद के जीवनसंघर्ष में जीत कहां!

*

भावना सच्ची हो तो आवाज दूर तक जाती है. उसका प्रभाव भी स्थायी होता है.

जैसी कि अपेक्षा थी टोपीलाल के पत्र की अनुकूल प्रतिक्रिया हुई. दो अक्टूबर के दिन स्वयंस्फूर्त भाव से सैकड़ों बच्चे उस अभियान दल के साथ थे. कतारबद्ध, अनुशासन में बंधे, एक ही संकल्प में ढले हुए. रंग-बिरंगे कपड़ों में, मानो तरह-तरह के सुगंधित फूल,

उल्लास से सजे-संवरे कतारे बांधे खड़े हों. अथवा किसी बड़े उद्देश्य के लिए तारे जमीन पर उतर आए हों. उनके अधरों पर पवित्र मुस्कान थी; जैसे भागीरथी की पवित्र लहरों पर नवअरुण की किरणें झिलमिला रही हों, मन में आत्मविश्वास जैसे समुद्र अपनी गंभीरता छिपाए रखता है.

बच्चों के कार्यक्रम की गूंज राजनीतिक गलियारों में छा चुकी थी. कई राजनीतिक दल उस आंदोलन को अपने समर्थन की घोषणा कर चुके थे. कुछ नेताओं ने उस कार्यक्रम से सीधे जुड़ने की इच्छा भी व्यक्त की थी. मगर दूरदर्शी बद्री काका ने विनम्रतापूर्वक इंकार कर दिया था. वे नहीं चाहते थे कि उस कार्यक्रम का राजनीतीकरण हो. मिथ्या वाद-विवाद में फंसकर वह असमय दम तोड़ जाए. इसपर कुछ नेताओं ने अपनी नाराजगी प्रकट की. बद्री काका पर घमंडी होने का आरोप भी लगाया. मगर वे अपने इरादे पर अटल बने रहे.

जुलूस-स्थल पर अनुशासन की पूरी व्यवस्था थी. पंक्ति में सबसे आगे था टोपीलाल, सिर पर पीली टोपी पहने. उसके पीछे निराली, तीसरे स्थान पर कुक्की खड़ी थी. उसके पीछे सदानंद. पांचवे स्थान पर बद्री काका स्वयं थे, एक विशाल छायादार बरगद की भांति. उनके पीछे बच्चों को दो पंक्तियों में नियोजित किया गया था. तीसरी पंक्ति मजदूर औरतों की थी. अपने तांबई चेहरे और ठोस इरादों के साथ वे जुलूस में हिस्सा लेने पहुंची थीं. उनके आंखों में विश्वास-भरी चमक थी. वे सबसे दायीं ओर ढाल बनकर, पंक्तिबद्ध खड़ी थीं. सबके चेहरे पर एकसमान उल्लास था. ढले थे सब एक ही अनुशासन में.

जुलूस आगे बढ़े उससे पहले बद्री काका ने बच्चों और बड़ों को संबोधित किया

'बच्चो और बहनो! यह हमारे इतिहास का पवित्रतम क्षण है; और विश्व-भर में अनूठा भी. संभवतः पहली बार सैकड़ों गरीब बच्चे और उनकी स्त्रियां किसी पवित्र उद्देश्य के लिए एकजुट हुए हैं. अपने संकल्प को मजबूत कर, बड़े आंदोलन के लिए आगे आए हैं. बच्चे किसी भी देश का भविष्य हैं. इस आधार पर हम कह सकते हैं कि भविष्य अपने वर्तमान को अनुशासित करने के लिए खुद एकजुट हुआ है. भटके हुए लोगों को राह दिखाने, समाज को नई दिशा देने के लिए यह एकता बहुत जरूरी है.

हमारा यह जुलूस नाम पाने के लिए नहीं है. न सिर्फ अखबारों में नाम छपवाने के लिए है. न ही इसके पीछे कोई राजनीतिक ताकत है. आज जो हमारे लिए जरूरी है, वह है समय पर भोजन, साफ-सुथरे कपड़े, सिर पर छत और शिक्षा. यहां आए बहुत से बच्चों को ये सब सुविधाएं मिल सकती थीं. यदि नशे ने उनके परिवार पर हमला न किया होता. नशे ने हमसे जीवन की इन बुनियादी चीजों को छीना है. हमारे अपनों को भटकाया है, इसलिए आज वह हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है. हमें उसको खदेड़ देना है. मुक्ति पानी है उससे.

हमारे इस प्रदर्शन का मकसद नशे के दुष्प्रभावों के प्रति जागरूकता पैदा करना है. लोगों को बताना है कि नशा उनके तन और मन को किस प्रकार खोखला करता जा रहा है. यह एक व्याधि है जिसने पूरे समाज को ग्रस रखा है. इसलिए हम नशे से नफरत करते हैं, नशा पैदा करने वाली वस्तुओं से नफरत करते हैं, उन लोगों से नफरत करते हैं जो अपने स्वार्थ के लिए नशे की वस्तुओं का व्यापार करते हैं. लेकिन हम नशाखोरों से नफरत नहीं करते. वे तो हमारे अपने और खास हैं. नशे ने उन्हें हमसे दूर किया है. हमारा उद्देश्य उन भटके हुओं को सही रास्ते पर लाना है.

यह भी ध्यान रहे कि आज का कार्यक्रम हमारे लंबे अभियान की केवल शुरुआत है. नशे के विरोध की हमारी यात्रा आज से आरंभ होने जा रही है. यह बहुत लंबी यात्रा है. इसमें अनेक पड़ाव आएंगे. बहुत-सी परेशानियों और संकटों से हमारा सामना होगा. हादसे कदम-कदम पर हमारी हिम्मत और धैर्य की परीक्षा लेंगे. किंतु यदि हम डटे रहे तो विजय हमारी ही होगी. क्योंकि जीत हमेशा सच की होती है.

मित्रो, मैं तो बूढ़ा हो चुका हूं. संभव है कि इस अभियान में आपकी संपूर्ण विजयश्री को मैं अपनी आंखों से न देख सकूं. मगर आप सभी उस विजय दिवस के साक्षी बनें, इस कामना के साथ मैं आप सब को बधाई देना चाहता हूं.

आगे बढ़ने से पहले सिर्फ इतना ध्यान रहे कि हम महात्मा गांधी के शांति सैनिक हैं. मन, वचन और कर्म में से किसी भी प्रकार की हिंसा हमारे लिए त्याज्य है. इसलिए हम यह संकल्प लेकर आगे बढ़ें कि चाहे जो भी हो, हम शांति-भंग नहीं होने देंगे. अहिंसा हमारा धर्म है. महात्मा गांधी की...'

'जय...!' बच्चों का समवेत स्वर गूंजा.

इसके बाद टोपीलाल ने मोर्चा संभाल दिया. अपनी पतली लेकिन ओज-भरी आवाज में उसने नारा लगाया'महात्मा गांधी की...'

'जय...!'

जुलूस आगे बढ़ने ही वाला था कि वहां पर पुलिस की गाड़ी रुकी. उसके पीछे दो गाड़ियां और भी थीं. एक गाड़ी से धड़ाधड़ कई सिपाही कूदने लगे. तभी बद्री काका की निगाह सबसे आगे चल रहे पुलिस अधिकारी पर पड़ी. उन्हें पहचानते हुए देर न लगी. वह पुलिस सुपरिंटेंडेंट था. तेज कदमों से चलता हुआ वह बद्री काका के निकट पहुंचा. जुलूस में मौजूद औरतें और बच्चे सहम-से गए. परंतु टोपीलाल और उसके साथियों के चेहरों पर पहले जैसी दृढ़ता बनी रही.

बद्री काका का अभिवादन करने के उपरांत पुलिस सुपरिंटेंडेंट ने कहा

'आप हैरान हो रहे होंगे मुझे यहां देखकर. दरअसल मैं यह कहने आया हूं कि उस दिन आपने मेरी आंखें खोल दी थीं. मैं इस मसले को अभी तक केवल कानून की निगाह से देख रहा था. इन बच्चों के पवित्र उद्देश्य और उनकी भावनाओं को मैं उस समय तक

समझ ही नहीं पाया था. गलत था मैं. शायद आप के ही दर्शनों का सुफल है जो समय रहते सद्‌बुद्धि लौट आई. अब मैं पूरी तरह से आपके साथ हूं. आप जुलूस लेकर आगे बढ़ें. बस जरा शांति-व्यवस्था का ध्यान रखें. मैं और मेरी पूरी कमान आपके साथ है.'

'धन्यवाद एसपी साहब! मैं आपकी भावनाओं का सम्मान करता हूं तथा उम्मीद करता हूं कि हमें आपकी जरूरत नहीं पड़ेगी.'

'मैं भी यही चाहता हूं.' मुस्कराते हुए पुलिस कप्तान ने कहा और अपनी गाड़ी पर सवार हो गया.

ताकत नैतिकता के आगे सदैव नतमस्तक होती रही है.

*

नैतिकता मनुष्यता के लिए नए मापदंड भी गढ़ती है.

हाथों में झंडियां और पोस्टर उठाए बच्चे आगे बढ़ने लगे. मौन, पूरी तरह अनुशासित. संयमित और मर्यादित. चेहरे पर आत्मविश्वास और मनभावन मुस्कान लिए. मानो इतने सारे बच्चे एक साथ साधनारत हों. कि पवित्र जलधाराएं मौन, धीर-गंभीर गति से एक-दूसरे के समानांतर बही चली जा रही हों. अनेकानेक को जीवनदान देने. परोपकार की परंपरा को आगे बढ़ाती हुई. सींचती हुई पवित्र धरा को नई उमंगों, रंग-बिरंगे सपनों और महान संकल्पों से.

सबसे आगे था टोपीलाल. उन्नत ग्रीवा, घुंघराले बाल, तांबई, पका हुआ रंग. अपने दोनों हाथों से दंड रहित श्वेत-हरित ध्वजा को उठाए. दंड रहित ध्वजा की परिकल्पना बद्री काका ने की थी. अहिंसा के सिपाहियों के हाथों में दंड का क्या काम. जो अपनी नैतिकता से दुनिया जीतने निकला है, उसको बल या उसके बाह्यः प्रतीकों का सहारा क्यों. उनके पीछे मौजूद तीनों कतारों में सैकड़ों बच्चे और औरते खड़ी थे.

आरंभ में जुलूस में हिस्सा लेने आई स्त्रियों की संख्या कम थी. लेकिन जुलूस आगे बढ़ने के साथ-साथ महिला आंदोलनकारियों की संख्या भी बढ़ती चली गई. उनकी देखदेखी कुछ पुरुष भी आकर उनमें शामिल हो गए. जिनमें से एक व्यक्ति को देखकर बद्री काका, कुक्की और टोपीलाल सहित अनेक बच्चे विस्मय में डूब गए. वह जियानंद था. सदानंद का पिता. अपने पिता को वहां देख सदानंद के चेहरे पर उदासी छा गई. यह देख बद्री काका ने उसको संभाला. कंधा थामकर भरोसा जताया. जुलूस आगे बढ़ा तो जियानंद भी साथ-साथ बढ़ने लगा.

दोपहर बारह बजे के तय समय पर जब जुलूस अपने पूर्व निर्धारित पड़ाव-स्थल पर पहुंचा, उस समय तक स्त्रियों की कतार बच्चों की कतार जितनी ही लंबी हो चुकी थी. उसमें डेढ़ सौ से अधिक महिला आंदोलनकारी सम्मिलित थीं. श्रम और ममता की प्रतिमूर्ति. उत्साहित, आंखों में बदलाव का सलोना सपना सजाए हुए. नए विश्व की रचना

को समर्पित. पुरुषों की संख्या भी पचास से ऊपर थी.

पुलिस के सिपाही जुलूस को घेरे हुए चल रहे थे. उनके चेहरे पर नौकरी का तनाव कम, जुलूस के साथ होने की अनुभूति प्रबल थी. उनकी भावनाएं जुलूस में सम्मिलित बच्चों की भावनाओं के अनुरूप थीं, इसीलिए वे भी जुलूस का ही एक हिस्सा नजर आ रहे थे. शायद पहली बार पुलिस की मंशा बच्चों के जुलूस को सुरक्षाकवच प्रदान करने की थी. कानूनी ताकत नैतिकता की सहयोगी बनी थी. लोगों को अपनी कामयाबी का भरोसा भी था.

रास्ते के दोनों और लोग जमा थे. स्त्री-पुरुष, बूढ़े और बच्चे, धनी और निर्धन, मजदूर और व्यापारी. सभी हैरान थे. मैदान में इधर-उधर घूमने वाले बच्चे, जिन्हें आवारा, बदमाश, शैतान आदि न जाने क्या-क्या कहा जाता था. जो गलियों में बेकार घूमते, समय गुजारने के लिए कबाड़ का धंधा करने लगते थे.

पेट भरने के लिए छोटी-मोटी चोरी-चकारी से भी उन्हें डर नहीं था. उनके घरों में नशे की त्रासदी आम बात थी. अपनी नादानी के कारण जो स्वयं भी किसी न किसी नशे का शिकार होते आए थे, पहली बार वे नशे के विरुद्ध एकजुट हुए थे. पहली बार उन्होंने उस दानव के विरुद्ध मोर्चा खोला था. तमाशबीन दर्शकों के बीच चर्चा का यह एक अच्छा मसाला था.

जुलूस को मैदान तक पहुंचने में करीब डेढ़ घंटा लगा था. वहां स्वयंसेवी संस्थाओं की ओर से नाश्ते की व्यवस्था थी. मैदान तक पहुंचते-पहुंचते बच्चे थक चुके थे. हालांकि उनके चेहरे को देखकर उसका अनुमान लगा पाना कठिन था. बद्री काका ने नाश्ते के लिए विश्राम की मुद्रा में आ जाने को कहा. कुछ बच्चे वहीं जमीन पर बैठ गए. मैदान में बच्चों को संबोधित करने के लिए एक मंच बनाया गया था. मंच से बद्री काका द्वारा संबोधित किए जाने का कार्यक्रम था.

पार्क में अब सिर्फ बच्चे नहीं थे. बल्कि सैकड़ों की भीड़ जमा थी. जुलूस की खबर अखबार के माध्यम से पूरे शहर में फैल चुकी थी. इसलिए उसको देखने के लिए हजारों की भीड़ उमड़ चुकी थी. उत्सुक लोग सड़क के किनारे, चौराहों, घरों और दुकानों की छतों पर खड़े थे. बाजार में ग्राहक कम जुलूस देखने आए तमाशबीनों की संख्या अधिक थी. बच्चों के पहुंचने से पहले ही सैकड़ों लोग उस पार्क में जमा हो चुके थे. इससे बद्री काका का उत्साहित होना स्वाभाविक ही था.

बच्चों के उत्साहवर्धन के लिए एक बार फिर उन्होंने जिम्मेदारी संभाल ली. मंच पर आकर उन्होंने कहना आरंभ किया

'दोस्तो! मैं नशे के विरुद्ध बच्चों और बड़ों में चेतना तो लाना चाहता था. परंतु सच मानिए इतने बड़े और सफल जुलूस की कल्पना मैंने सपने में भी नहीं की थी. मेरी पाठशाला में तो मुट्ठी-भर ही बच्चे हैं, जो एक कमरे में समा सकते हैं. पर आज जो यहां

पर शहर-भर के बच्चों का हुजूम उमड़ पड़ा है, उसका श्रेय सिर्फ और सिर्फ टोपीलाल और उसके साथियों को जाता है.

इन बच्चों ने पूरी मेहनत और ईमानदारी के साथ अपनी भावनाओं को आप सब तक पहुंचाया. आपके दिल को छुआ. इसी का सुफल आज का यह कामयाब प्रदर्शन है. रास्ते में हमारे जुलूस को हजारों आंखों ने देखा. हजारों दिल-दिमागों ने हमारे कार्यक्रम के प्रति अपनी आस्था का प्रदर्शन किया है. आप सबकी भागीदारी ने, चाहे वह जिस रूप में भी हो, हमारा हौसला बढ़ाया है. हमारे मकसद को दृढ़ किया है. और इस संघर्ष में जीत के प्रति हमारे विश्वास को आगे ले जाने का काम किया है. इसकी खबर करोड़ों लोगों तक पहुंचेगी और यकीन मानिए हमें उनका भी आशीर्वाद मिलेगा.

आज जिस तरह से लोग हमारे जुलूस को देखने के लिए जमा हुए हैं, उससे लगता है कि लोग हमपर विश्वास कर रहे हैं. वे हमारी बात से सहमत हैं. हमारी भावनाओं के प्रति एकमत हैं, हमसे जुड़ना चाहते हैं. हमने आज लोगों की आंखों में चमक देखी. निश्चय ही उनमें कुछ आंखें ऐसी भी होंगी जिन्हें नशे की लत ने धुंधली बना दिया होगा. लेकिन यदि वे हमें देखने के लिए यहां तक आई हैं तो हमें यह मान लेना चाहिए कि वे बदलाव के लिए उत्सुक हैं. वे अपनी स्थिति से, बदनामी और पतन की पराकाष्ठा से ऊब चुकी हैं. यह सब हमारी एकजुटता का नतीजा है. हमारे उद्देश्य की पवित्रता ने इसको आसान बनाया है.

जुलूस को कामयाब बनाने में स्त्रियों का भी योगदान है. वे स्वयंस्फूर्त भाव से इसमें हिस्सा लेने आई हैं. जुलूस में स्त्रियों को सम्मिलित करने का विचार भी मेरा नहीं था. यह सुझाव भी टोपीलाल की ओर से आया. सच कहूं तो आजादी के बाद के अपने सार्वजनिक आयोजन में मैं स्त्री-शक्ति को इतने बड़े स्तर पर पहली बार संगठित देख रहा हूं. हमारे परिवारों में कमाना अब भी पुरुष की जिम्मेदारी माना जाता है, लेकिन उसका अस्तित्व पूरी तरह अपने परिवार अर्थात स्त्री और बच्चों पर निर्भर होता है. कोई भी मनुष्य भले ही वह कितना ही संवेदनहीन क्यों न हो, स्त्री और बच्चों की उपेक्षा नहीं कर पाता. घर के मर्द जब नशे के शिकार होते हैं तो उसका सर्वाधिक नुकसान भी इसी वर्ग को उठाना पड़ता है. इसलिए अपने हित के लिए इन दोनों को संगठित होना पड़ेगा.

यह कोई राजनीतिक लड़ाई नहीं है. हम इसको राजनीतिक लड़ाई बनाना भी नहीं चाहते. अगर इसको राजनीतिक लड़ाई बनाया गया तो वोटों के सौदागर कूद पड़ेंगे. तब इस आंदोलन का भी वही हश्र होगा जो देश की अधिकांश राजनीतिक संस्थाओं का होता रहा है. यह एक सामाजिक आंदोलन है, जिसका संघर्ष घर की चारदीवारी के बीच, चौके-चूल्हे के सामने होना है. वहां पर बच्चों और स्त्रियों की एकजुटता इस आंदोलन को विजय की ओर ले जाएगी.

मित्रो! हमारा अगला कार्यक्रम मजदूर बस्तियों के आसपास स्थित शराब की पांच

दुकानों के आगे धरने-प्रदर्शन का है. गांधी जयंती के कारण सभी दुकानें आज बंद होंगी. मगर हमारा लक्ष्य अपनी विचारधारा को प्रशासन और आम जनता तक पहुंचाना है, इससे उनके बंद होने या खुले रहने से कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता. मैं चाहता हूं कि इस सांकेतिक धरने के नेतृत्व के लिए महिलाएं आगे आएं.'

बद्री काका ने बोलना समाप्त किया तो सभा-स्थल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा. स्त्रियों की कतार से कुछ महिलाएं आगे आ गईं. बाकी बद्री काका के इशारे पर बच्चों की कतारों में बच्चों के बीच सम्मिलित हो गईं. फिर पूरे दल को पांच हिस्सों में बांट दिया गया.

'महात्मा गांधी की जय...!' पीछे से आवाज आई तो टोपीलाल चौंक पड़ा.

'मां!' कहते हुए उसकी निगाह महिलाओं की ओर दौड़ गई. आठ-दस महिलाओं के बीच अपनी मां को खड़ा देख टोपीलाल की आंखों में चमक आ गई

'तुम भी!' उसके मुंह से बरबस निकला. टोपीलाल को आंखों ही आंखों में आशीर्वाद लुटाते हुए उसकी मां ने दुबारा नारा लगाया

'सत्य और अहिंसा की...!'

'जय!' टोपीलाल ने अपनी मां के स्वर में स्वर मिलाया. उसका साथ सैकड़ों आवाजों ने दिया. जुलूस धरने के लिए आगे बढ़ने ही जा रहा था कि एसपी की गाड़ी फिर उसका रास्ता रोककर खड़ी हो गई. आंखों में चिंता के भाव लिए वह बद्री काका के पास पहुंचा

'माफ कीजिए, यहां से आगे बढ़ने की अनुमति मैं आपको नहीं दे सकता?' पुलिस अधिकारी ने जोर देकर कहा. बद्री काका हैरान. कारण उनकी समझ के बाहर था.

'ऐसा अचानक क्या हो गया एसपी साहब?' बद्री काका ने प्रश्न किया.

'मुझे अभी-अभी सूचना मिली है कि उधर कुछ गुंडे लोग जमा हैं. वे जुलूस को नुकसान पहुंचा सकते हैं.'

'आप उनको रोकें, समझाएं कि वे हमारे शांतिपूर्ण प्रदर्शन में बाधा न बनें.'

'हमारी टुकड़ियां उधर जा चुकी हैं. हालात नियंत्रण में हैं. फिर भी बच्चों और महिलाओं के कारण मैं कोई खतरा उठाना नहीं चाहता. प्लीज, आप ही मान जाइए.'

'चाहे कुछ भी हो जाए साहब, हम नहीं मानेंगे.' तब तक कई महिलाएं आगे आ चुकी थीं. टोपीलाल और उसके साथी भी उनके इर्द-गिर्द जमा हो गए.

'आप बात समझने की कोशिश कीजिए. उन लोगों का कोई भरोसा नहीं. गुंडे-मवालियों के माध्यम से वे कुछ भी कर सकते हैं.'

'तो आप उन्हें गिरफ्तार कर लीजिए...' महिलाओं के बीच से आवाज आई. एसपी के चेहरे पर बेचारगी छा गई. तब बद्री काका उसको सांत्वना देने के लिए आगे आए

'मैं आपकी मुश्किल समझता हूं कप्तान साहब. किंतु हमारी भी विवशता है. हम

हिंसा नहीं चाहते. लेकिन उसके डर से अपने बढ़े हुए कदम वापस भी नहीं ले सकते.' निकट ही खड़े टोपीलाल को तो इसी बात का इंतजार था. उसने जोश के साथ नारा लगाया

'महात्मा गांधी की...!'

'जय!' उतने ही जोश में डूबे जुलूस ने साथ निभाया. उनकी आवाज का दमखम देख दशों दिशाएं गूंजने लगीं.

'सत्य-अहिंसा...!'

'जिंदाबाद...!'

'प्यार से जो आबाद हुए घर...'

'...नशे ने वे बरबाद किए घर'

'अगर तरक्की करनी है तो...'

'...दूर नशे से रहना होगा.'

'फंसा नशे के चंगुल में जो...'

'...इंसां से हैवान बना वो.'

'गुटका, पानमसाला, बीड़ी...'

'...मौत की सीढ़ी, मौत की सीढ़ी.'

नारे लगाता हुआ जुलूस फिर आगे बढ़ने लगा. रास्ते में शराब की दुकान आई तो एक दल उसके सामने धरना देने के लिए बैठ गया. बाकी समूह आगे बढ़ा. वहां व्यस्त सड़क थी. वाहनों से भरी हुई. बद्री काका ने बच्चों को एक पंक्ति में चलने का कहा. वाहनों की भीड़ से बच्चे सावधानीपूर्वक गुजरने लगे. नारे लगाते, लोगों का ध्यान आकर्षित करते हुए.

दूसरी दुकान सड़क के ठीक पीछे स्थित मजदूर बस्ती में थी. वहां तक पहुंचने के लिए जुलूस को कच्ची नालियों और कीचड़ से होकर गुजरना पड़ा. सरकारी निर्देश के कारण दुकाने बंद थीं. दूसरा दल प्रतीकात्मक धरने के लिए वहीं रुक गया. बाकी रहा कारवां आगे बढ़ा. एक चौराहे और फिर चौड़े पार्क को पार करता हुआ वह खुले मैदान में आ गया. जुलूस जिस बस्ती से गुजरता वहां के बच्चे और महिलाएं उससे अपने आप जुड़ते चले जाते थे. मानो उस अभियान में कोई पीछे न रहना चाहता हो. सब अपना योगदान सुनिश्चित करने को तत्पर हों. इसलिए दो टोलियां पीछे छूट जाने के बावजूद आंदोलनकारियों की संख्या में कोई कमी नहीं आई थी. जुलूस में हिस्सा ले रहे बच्चों और महिलाओं का जोश भी पहले ही भांति बना हुआ था.

मैदान के एक सिरे पर झुग्गियां थीं. शहर के सबसे गरीब लोगों की गुमनाम-सी बस्ती. उसके दूसरे छोर पर कच्ची शराब की दुकान. बराबर में भांग का भी ठेका था. दुकान हाल ही में खुली थी. इस कारण उसके आगे लगा बोर्ड एकदम चमचमा रहा था. मानो

जुलूस में हिस्सा ले रहे आंदोलनकारियों को चुनौती दे रहा हो. तीसरे दल को वहीं धरना देने की जिम्मेदारी सौंपकर, बद्री काका आगे बढ़ गए.

अब भी जुलूस में सौ से ऊपर स्त्रियां और बच्चे सम्मिलित थे. पार्क को पार करने के बाद वे फिर एक व्यस्त सड़क पर आ गए. जिसके दोनों ओर ऊंची-ऊंची इमारतें थीं. आगे एक मोड़ था. उससे पचास कदम आगे ही दो दुकानें थीं. बड़ी-बड़ी और लगभग आमने-सामने. दुकानों की एक दिशा में शहर का सबसे बड़ा औद्योगिक क्षेत्र था. तीन ओर बड़ी-बड़ी मजदूर बस्तियां. उन दुकानों का मालिक शहर का शराब का सबसे बड़ा ठेकेदार था. हर कोई उसकी ताकत और राजनीतिक पहुंच से परिचित था.

पुलिस की मदद से कुछ देर के लिए यातायात को रोक दिया गया था. बद्री काका बच्चों ने को संभलकर रास्ता पार करने का निर्देश दिया. वे खुद जुलूस के बीच में चल रहे थे. बच्चे और महिलाएं सावधानीपूर्वक सड़क पार कर ही रहे थे कि अचानक एक पत्थर जुलूस के ऊपर आकर पड़ा. कोई बच्चों और महिलाओं पर भी हमला कर सकता है, बद्री काका को इसकी आशंका बहुत कम थी. पत्थर गिरते ही जुलूस में खलबली मच गई. बच्चे पंक्ति तोड़कर इधर-उधर जाने लगे. बच्चे इधर-उधर भागने लगे. जुलूस में आगे चल रहीं निराली और कुक्की बच्चों को रोकने के लिए चीखने लगीं.

'भागिए मत. आराम से रास्ता पार कीजिए.' बद्री काका चीखे, 'हौसला रखिए, यह हमला कायरतापूर्ण है. वे हमें डरा रहे हैं. पर हम डरेंगे नहीं. आगे बढ़िए...धीरे-धीरे आगे बढ़िए.' लगातार पत्थर गिरने से चौराहे पर खड़े वाहन चालकों में भी डर व्याप गया. मजदूर औरतें बच्चों को सड़क के दूसरी ओर सुरक्षित पहुंचाने के काम में लगी थीं. उनमें से भी कुछ को चोटें आई थीं. महिलाओं का ही एक दल घायलों को इलाज के लिए ले जाने में जुट गया.

अचानक पत्थरों की रफ्तार तेज हो गई. इतनी कि चौराहे पर खड़ा रहना असंभव दिखने लगा. जुलूस में शामिल आधे से अधिक लोग दूसरी दिशा में पहुंच ही चुका था. अपनी टोली का नेतृत्व कर रही कुक्की तेजी से दूसरी दिशा में जाना चाहती थी. तभी पत्थरों की मार से घबराया एक स्कूटर सवार तेजी से गुजरा. बद्री काका की निगाह उस ओर गई. वे कुक्की की ओर भागे.

'गुरुजी बचिए...आह!' टोपीलाल की आवाज गूंजी. उसी के साथ गुरुजी और कुक्की की चीख भी. अकस्मात पूरा जुलूस बिखर गया. चीख-पुकार मचने लगी.

'रुकिए मत! चलते रहिए...बद्री काका सिर्फ घायल हुए हैं. उन्होंने ही कहलवाया हैरुकिए मत. पूरे विश्वास कदम बढ़ाते रहिए. अभी हमारा अभियान अभी पूरा नहीं हुआ है. अभी एक और मोर्चा बाकी है. उसको फतह करने के लिए हमें जल्दी से जल्दी लक्ष्य तक पहुंचना है. मंजिल बस दस कदम दूर है.' टोपीलाल चिल्लाया और गुरुजी तथा कुक्की को संभालने के लिए झुक गया. टोपीलाल के आवाह्न पर नन्हे कर्मयोगी और महिलाएं

फिर आगे बढ़ने लगीं. पूरी दृढ़ता के साथ.

उस सनातन संघर्ष में कायरों ने अपनी क्रूरता का परिचय दिया. कर्मयोगियों ने अपनी संकल्पनिष्ठा का.

कर्मयोग और लक्ष्यसिद्धि परस्पर पर्याय हैं.

*

सफलता कर्मयोगी के वरण हेतु सदैव उत्सुक रहती है.

'हमनें पांचों दुकानों के आगे सफलतापूर्वक धरना दिया. कई दर्जन लोग हमारे साथ थे. फिर भी हम हार गए!' टोपीलाल ने कहा और अपनी निगाह बद्री काका के पैरों पर टिका दी. उस दिन कुक्की को मोटर साइकिल से बचाने के प्रयास में बद्री काका स्वयं उससे टकरा गए थे. उसके साथ घिसटते हुए सड़क पर दूर तक चले गए. तभी सामने से आती एक तेज रफ्तार कार उनके पैरों को कुचलती हुई चली गई.

कुक्की को भी मामूली चोटें आईं थीं. उसको तीसरे दिन अस्पताल से छुट्टी दे दी गई. बद्री काका को डॉक्टरों ने उन्हें ठीक तो कर लिया, मगर उनके दोनों पैर काटने पड़े थे. इस बात का अफसोस बद्री काका से ज्यादा टोपीलाल और उसके सहयोगियों को था. जब उसको यह खबर मिली तो कई घंटों तक रोता रहा था.

'हार कैसी, हम पूरी तरह कामयाब रहे हैं.' बद्री काका ने मुस्कराने का प्रयास किया.

'हमारे कारण ही आपकी यह हालत हुई है...!' टोपीलाल ने कहा. उसकी आंखें एकदम लाल थीं. मानो कई रातें उसने जागकर बिताई हों.

'जिस लक्ष्य के लिए हमने एकजुटता दिखाई है, उसके लिए यह तो बहुत मामूली कीमत है.'

'अब हमारा मार्गदर्शन कौन करेगा?' सदानंद बोला, उसके स्वर में उदासी थी. इसपर टोपीलाल ने बात काटी'गुरुजी हैं, तो!' फिर बद्री काका की ओर मुड़कर बोला, 'आगे आप सिर्फ आदेश दिया करना, सारा काम हम स्वयं कर लेंगे.'

उसी समय कुक्की दौड़ती हुई भीतर आई. उसके माथे पर पट्टियां बंधी थीं. दौड़ने के कारण उसकी सांसे फूल रही थीं. उसके हाथों में एक पत्र था. उसपर छपा नाम-पता देखते ही बद्री काका की आंखों में खुशी की लहर दौड़ गई. कुछ पल वे उसको टकटकी लगाए देखते रहे, फिर उनकी उंगलियां पत्र को बहुत सावधानी से खोलने लगीं.

'किसका पत्र है, गुरुजी?' सदानंद ने पूछा. उत्तर देने के बजाय बद्री काका मुस्करा दिए और अपना ध्यान पत्र पर लगा दिया. पत्र राष्ट्रपति आवास से आया था. राष्ट्रपति महोदय का एकदम निजी पत्र. लिखा था

'परमश्रद्धेय बद्रीनारायण जी,

दो अक्टूबर को महात्मा गांधी की जन्मतिथि पर देश-भर में सरकारी और गैरसरकारी

स्तर पर अनेक कार्यक्रम होते हैं. हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी हुए. देश के प्रथम नागरिक की हैसियत से मैं कुछ कार्यक्रमों में सम्मिलित भी हुआ. मगर मुझे जितनी उत्सुकता आपके कार्यक्रम के बारे में जान लेने की थी, उतनी किसी और की नहीं. इसलिए कि उन सब कार्यक्रमों में आपका आंदोलन सर्वाधिक मौलिक एवं रचनात्मक था. आपको मिली सफलता की सूचना से मेरा दिल गद्‌गद हो गया. मन हुआ कि वहीं जाकर आपको बधाई दूं. लेकिन जिस पद पर मुझे बिठाया गया है, उसकी जिम्मेदारियां मुझे वहां आने की अनुमति नहीं दे रही हैं.

बता दूं कि आपके अभियान की कामयाबी पर मुझे पहले भी पूरा भरोसा था. क्योंकि जिस समर्पण एवं निष्ठा के साथ आप काम को संभालते हैं, उसमें नाकामी संभव ही नहीं है. आपके आंदोलन की सफलता जहां मन को प्रफुल्लित कर देने वाली है, वहीं आपके साथ घटी दुर्घटना की खबर ने दिल को झकझोर कर रख दिया है. इस बारे में हालांकि आपने स्वयं कुछ नहीं बताया है. यह सूचना मुझे अस्पताल के माध्यम से मिली है. उन्हें न जाने कैसे मेरी और आपकी मैत्री की सूचना मिली, जो आपके साथ हुई दुर्घटना की खबर मुझे भेजने की कृपा की.

जिन लोगों ने आपके साथ यह घिनौनी हरकत की है, वे बहुत ही कायर और निर्लज्ज किस्म के लोग हैं. वे खुद टूट चुके हैं. उनका यह कदम उनके डर, हताशा और बौखलाहट का नतीजा है. आपका हृदय विशाल है. जानता हूं कि उनके प्रति आपके मन में कोई द्वैष या विकार नहीं होगा. आप तो माफ भी कर चुके होंगे. पर कानून भी अपना काम करे, मेरी यही इच्छा है. मुझे पूरी उम्मीद है कि स्थानीय प्रशासन उनका पता लगाकर उन सबको सजा जरूर दिलाएगा.

अपने पिछले पत्र में आपने लिखा था कि आंतरिक ऊर्जा से भरपूर बच्चों ने आपकी इंजन वाली जगह हथिया ली है. इससे लगता है कि वे बच्चे विलक्षण रूप से प्रतिभाशाली और साहसी हैं. उनमें देश के लिए कार्य करने का जज्बा है. मैं उनकी भावनाओं को नमन करता हूं. उम्मीद करता हूं कि वे इसी प्रकार लगातार आगे बढ़ते रहेंगे. मैं उनसे अवश्य मिलना चाहूंगा. आप स्वयं भी उनके साथ दर्शन दें तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी.

अंत में आपकी अद्वितीय सफलता के लिए आपको एवं आपके सभी बालसहयोगियों को बधाई देता हूं और आशा करता हूं कि हमारी भेंट बहुत जल्दी होगी.'

संघीय देश का राष्ट्रपति

पत्र पढ़ने के पश्चात बद्री काका ने वह बच्चों की ओर बढ़ा दिया. टोपीलाल उसे लेकर पढ़ने लगा. सदानंद समेत बाकी बच्चे भी उसके ऊपर झुक गए. तभी पुलिस सुपरिंटेंडेंट ने प्रवेश किया. वह सादा लिबास में था. उसको देखकर बद्री काका ने बैठने का प्रयास किया. मगर घाव ताजे होने के कारण दर्द की लहर दिमाग को चीर-सा गई. उन्हें कराहकर उसी स्थिति में रह जाना पड़ा.

'न...न! आप आराम से लेटे रहिए...मैं तो सिर्फ यह बताने आया था कि जिन लोगों ने आपपर हमला किया था, उन सभी को पुलिस गिरफ्तार कर चुकी है.'

'वे सब नहीं जानते कि उन्होंने निर्दोष बच्चों और महिलाओं पर हमला करके कितना बड़ा पाप किया है.' बद्री काका के मुंह से कराह निकली.

'मैं आपके लिए एक खुशखबरी भी लाया हूं.' एसपी मुस्कराया, फिर प्रतीक्षा किए बिना ही कहता गया, 'एक आदेश के तहत सरकार ने मजदूर बस्तियों में चल रहीं, शराब की सभी दुकानों को तत्काल प्रभाव से बंद कराने का निश्चय किया है...'

'धन्यवाद, और भी अच्छा होता यदि सरकार शराब की दुकानों के साथ-साथ तंबाकू और और नशे की दूसरी चीजों के निर्माण एवं बिक्री पर भी लगाम लगाने का काम करे. खैर, देर से ही सही आप बहुत अच्छी खबर लेकर आए हैं.'

'आपके लिए एक खुशखबरी और भी है...'

'अच्छा, लगता है आज आप थोक में खुशखबरी लेकर आए हैं.' बद्री काका मुस्कराए.

'इन बच्चों के काम से खुश होकर सरकार ने टोपीलाल और उसके साथियों को पुरस्कृत करने का निर्णय लिया है, इस बारे में मुझे आपसे बातचीत करने का आदेश मिला है.' एसपी ने कहा. अचानक बद्री काका के चेहरे के भाव बदलने लगे. वहां पर हमेशा रहने वाली मृदुलता गायब हो गई

'इन्हें पुरस्कार नहीं अच्छी शिक्षा की जरूरत है.' बद्री काका ने दो टूक स्वर में कहा, 'शहर बढ़ता रहेगा. इमारतें भी ऊंची और ऊंची उठती रहेंगी. उनके लिए मजदूर और कारीगरों की जरूरत भी हमेशा ही रहेगी. मजदूरों के साथ उनका परिवार भी होगा. इसलिए जरूरत ऐसी सचल पाठशालाओं की है, जो मजदूरों के बच्चों को उनके कार्यस्थलों पर जाकर शिक्षा दे सकें. स्वयं सेवी संस्थाओं की मदद से सरकार यह काम आसानी से कर सकती है...'

'आपका सुझाव बहुत अच्छा है...मैं स्वयं सरकार को लिखूंगा...'

'यही इन बच्चों का पुरस्कार होगा.' बद्री काका ने दृढ़तापूर्वक कहा.

वहां उपस्थित महिलाएं एवं बच्चे चौंक पड़े. बद्री काका का दृढ़ निश्चय देख एसपी का कुछ और पूछने का साहस ही न हुआ. उसने बद्री काका से विदा ली. पुरस्कार न लेने पर बच्चे और औरतें अभी भी हैरान थे. एसपी के जाने के बाद वहां मौजूद औरतों में से एक ने पूछा

'सरकार बच्चों को ईनाम दे...इसमें बुराई ही क्या है?'

बद्री काका कुछ देर तक छत की ओर घूरते रहे. फिर उसी मुद्रा में धीर-गंभीर स्वर में बोले'टोपीलाल और उसके साथियों ने जो किया है, वह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है. उसका सम्मान हो, यह मेरे लिए भी सम्मान की बात है. लेकिन आदमी का लक्ष्य यदि बड़ा हो

और मंजिल दूर तो उसे रास्ते के छोटे-छोटे प्रलोभनों और लालच से दूर रहना ही पड़ता है. एक कर्मयोगी के लिए सच्चा पुरस्कार तो उसकी लक्ष्य-सिद्धि है. ये मान-सम्मान और पुरस्कार तो कालांतर में उसको भटकाने, मंजिल से दूर ले जाने का काम ही करते हैं.' बद्री काका ने कहा. फिर टोपीलाल की ओर मुड़कर बोले

'तुम्हें बुरा तो नहीं लगा बच्चो?'

'हमारे लिए तो आपका आशीर्वाद ही सबसे बड़ा पुरस्कार है.' कहते हुए टोपीलाल, सदानंद, कुक्की और निराली अपने बद्री काका के करीब आ गए.

'तुम सबसे मुझे यही उम्मीद थी...अगर बड़े संकल्प साधने हैं तो मन को मजबूत करना होगा. सफर में ऐसे प्रलोभन बार-बार आएंगे. अगर उनके फेर में पड़े तो लक्ष्य तक पहुंच पाना असंभव हो जाएगा. यह सफलता तो बहुत मामूली है. अभी तो पूरा देश पड़ा है, जहां तुम्हें अपने अभियान को आगे बढ़ाना है.'

'हम तैयार हैं, गुरुजी!'

'मैं भी यही चाहता हूं.' बद्री काका ने खुश होकर कहा.

'पर मैं तो कुछ और ही चाहती हूं.' निराली ने जोर देकर कहा, 'कितने दिन हो गए बिना कोई किस्सा-कहानी सुने. आप बिस्तर पर पड़े-पड़े उपदेश ही देते रहेंगे या हमारी बात पर भी ध्यान देंगे.'

'बहुत दर्द हो रहा है, बेटा!' बद्री काका ने कराहने का दिखावा किया.

'तो दर्द की ही कहानी सुना दीजिए.' इस बार कुक्की ने मोर्चा संभाला.

बद्री काका मुस्करा दिए. बच्चे उनके करीब खिसक आए.

एक नई कहानी का सृजन होने लगा.

***